जगद्गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः, जयपुरम्
राजस्थानराज्यसंस्कृतशैक्षिकानुसंधान एवं प्रशिक्षणसंस्थानम्, जयपुरम्
राजस्थानसंस्कृतअकादमी, जयपुरम्

त्रिदिवसीयम् अन्ताराष्ट्रियसंस्कृतसम्मेलनम्

International Sanskrit Conference

दिनांक : 3,4,5 मार्च 2020

संस्कृतज्ञानविज्ञानस्य वैश्विकचिन्तनम्

Global Thinking of Sanskrit knowledge and Science

शोधपत्रसारसंग्रहः
Summaries of Research Papers

प्रकाशकः

जगद्गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः, जयपुरम्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कुलगीत

श्रीजगद्गुरु रामानन्दाचार्यसंस्मृतिदायकोऽयम्।
जयति राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यानायकोऽयम्।।

सत्फलं माघाशिषां राणाप्रतापचरित्रचित्रम्
मन्दिरं मधुसूदनस्य सरस्वती-पुष्करपवित्रम्
भूत-वर्तित-भाविविद्या-साधनारतिदर्पकोऽयम्
जयति राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यानायकोऽयम्।।

स्वामिरामानन्दमधुरस्वप्नसम्पूर्तौ निमग्नः
शान्तशान्तः ग्रामपरिवेषे स्थितः स्वाध्यायलग्नः
भात्यहो हिमहारधवलः शारदाप्रावारकोऽयम्
जयति राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यानायकोऽयम्।।

मरुवणेषु विराजते सम्मान्यरामानन्दपीठे
स नारायणदास आचार्यो मतश्चात्मप्रतिष्ठे
तस्य संकल्पाशिषां साकारविग्रहधारकोऽयम्
जयति राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यानायकोऽयम्।।

प्रत्ननूतनशास्त्ररक्षी साम्प्रतिकशिक्षाभिमानी
संगणकशिक्षः कलादक्षश्च विद्याविनयदानी
सन्ततं सर्वोदये संस्कारसंस्कृतिधारकोऽयम्
जयति राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यानायकोऽयम्।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

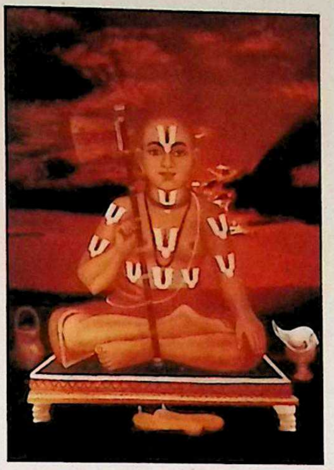

सतत आशीःप्रदाता

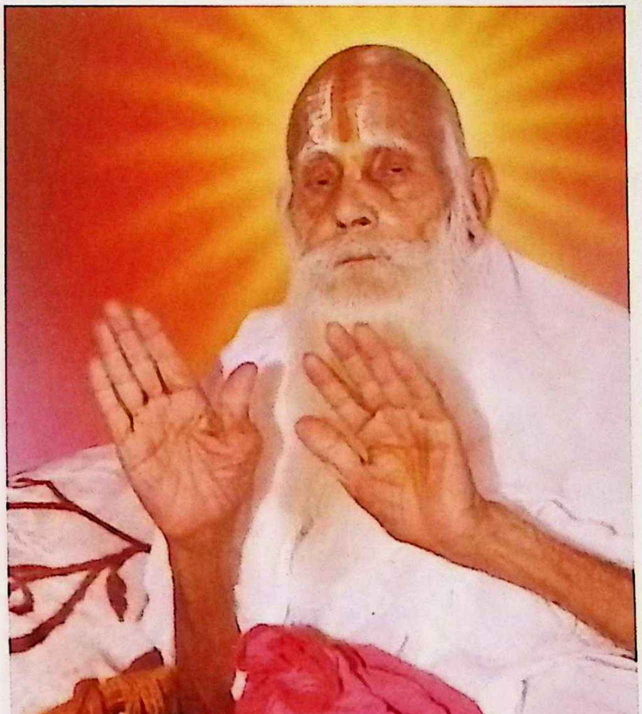

श्रीरामानन्द सम्प्रदाय की अनुपम महाविभूति,
खोजी पीठाचार्य-ब्रह्मपीठाधीश्वर पूज्यपाद

स्वामी श्रीनारायणदासजी महाराज

जगद्गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

जगद्गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः, जयपुरम्
राजस्थानराज्यसंस्कृतशैक्षिकानुसंधान एवं प्रशिक्षणसंस्थानम्, जयपुरम्
राजस्थानसंस्कृतअकादमी, जयपुरम्

त्रिदिवसीयम् अन्ताराष्ट्रियसंस्कृतसम्मेलनम्

International Sanskrit Conference

दिनांक : 3,4,5 मार्च 2020

संस्कृतज्ञानविज्ञानस्य वैश्विकचिन्तनम्
Global Thinking of Sanskrit knowledge and Science

शोधपत्रसारसंग्रहः

Summaries of Research Papers

संरक्षकः

प्रो.अनुला मौर्य

प्रधानसम्पादकः

डॉ. सुभाषचन्द्रशर्मा

सम्पादकाः

डॉ. राजधरमिश्रः

डॉ. के.साम्बशिवमूर्तिः

डॉ. नारायणहोसमने

सहसम्पादकाः

डॉ. कैलाशचन्द्रशर्मा

डॉ. उमेशनेपालः

डॉ.कुलदीपसिंहः

प्रबन्धसमितिः

श्री सुरेशकुमारबुनकरः

श्री संजयझाला

श्रीमती मनीषीलालस

डॉ. विनोदकुमारशर्मा

डॉ. माताप्रसादशर्मा

जगद्गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः, जयपुरम्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

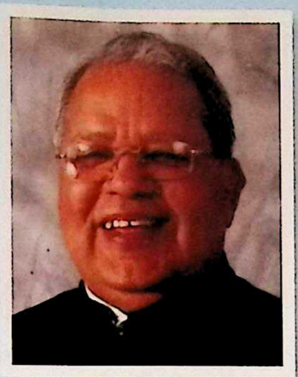

कलराज मिश्र
राज्यपाल, राजस्थान

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, राजस्थान संस्कृत शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान तथा राजस्थान संस्कृत अकादमी के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 03 से 05 मार्च, 2020 को त्रिदिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृत सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है। संस्कृत विश्वविद्यालय द्वारा प्राचीन संस्कृत शास्त्रों में निहित ज्ञान-विज्ञान को प्रकाश में लाने के लिए इस प्रकार का आयोजन किया जाना सराहनीय प्रयास है।

इस अवसर पर विद्वानों से प्राप्त शोध पत्रों का प्रकाशन जनसामान्य के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

मैं इस अवसर पर आयोजन की सफलता की शुभकामना करता हूँ।

(कलराज मिश्र)

राज भवन, सिविल लाइन्स, जयपुर-302006
Raj Bhawan, , Civil Lines, Jaipur-302006
दूरभाष : 0141-2228716-19, 2228611-12, 2228722

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सत्यमेव जयते

मुख्यमंत्री
राजस्थान

अशोक गहलोत

मुम./सन्देश/ओएसडीएफ/2020
जयपुर, 29 फरवरी, 2020

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, मदाऊ, जयपुर में संस्कृत भाषा का अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचार-प्रसार और प्राचीन संस्कृत शास्त्रों में निहित ज्ञान-विज्ञान को प्रकाशमान करने की दृष्टि से 3 से 5 मार्च, 2020 तक ''अंतर्राष्ट्रीय संस्कृत सम्मेलन'' का आयोजन और विद्वज्जन से प्राप्त शोध पत्रों का प्रकाशन किया जा रहा है।

देववाणी संस्कृत भाषा के ग्रंथों में अध्यात्म, दर्शन के साथ-साथ ज्ञान-विज्ञान के अनेक विषयों की महत्त्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध है।

आशा है इस अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन के निष्कर्ष और विद्वानों के शोध पत्रों की सामग्री संस्कृत भाषा में विद्यमान ज्ञान-विज्ञान को व्यापक बनाने में सहायक होगी।

मैं इस सम्मेलन में शामिल देश-विदेश के संस्कृत विद्वानों का स्वागत करते हुए इस सम्मेलन के आयोजन और शोध पत्रिका के प्रकाशन की सफलता के लिए अपनी शुभकामनाएं देता हूँ।

(अशोक गहलोत)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

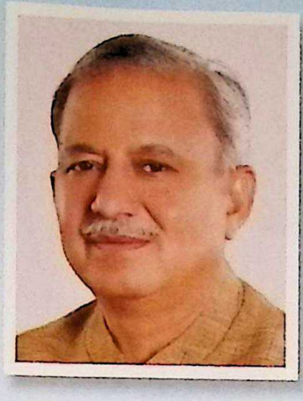

डॉ. सुभाष गर्ग

राज्य मंत्री

राजस्थान सरकार

तकनीकी शिक्षा एवं संस्कृत शिक्षा (स्वतंत्र प्रभार),
चिकित्सा एवं स्वास्थ्य, आयुर्वेद और चिकित्सा,
चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएं (ई.एस.आई.)
एवं सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग

संदेश

एतद् अवगम्य अहम् अत्यन्तम् आनन्दम् अनुभवामि यद् जगद्गुरुरामानन्दाचार्य-राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः, राजस्थानसंस्कृतशैक्षिक-अनुसंधान एवं प्रशिक्षणसंस्थानम्, राजस्थान-संस्कृत अकादमी, जयपुरम् इत्येतेषां संयुक्ततत्त्वावधाने 03.03.2020 तः 05.03.2020 दिनांकपर्यन्तं त्रिदिवसीयम् अन्तर्राष्ट्रियसंस्कृतसम्मेलनम् आयोज्यते। संस्कृतस्य तत्सम्बद्धज्ञानविज्ञानस्य च प्रसाराय आयोज्यमाने अस्मिन् सम्मेलने विद्वद्भिः प्राप्तानां शोधपत्राणां प्रकाशनमपि भवति इति महद् गौरवास्पदम्।

इदं सम्मेलनं प्रकाश्यमाना चेयं पत्रिका सर्वेभ्यः मंगलाय भवेत् इति स्वकीयां शुभकामनां प्रेषयामि।

(डॉ. सुभाष गर्ग)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

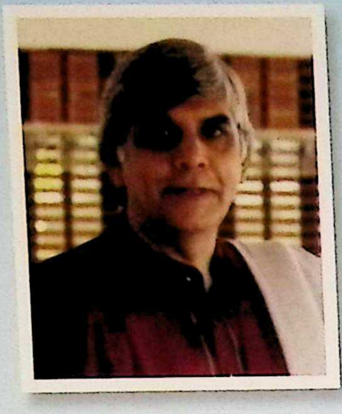

Professor Dinesh Singh
Ex-Vice Chancellor

कुलाधिपति
के.आर. मंगलम विश्वविद्यालय
गुड़गांव

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय द्वारा **''संस्कृतज्ञानविज्ञानस्य वैश्विकचिन्तनम्''** विषय पर एक त्रिदिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृत सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह विषय और अधिक महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक हो जाता है, क्योंकि विश्व को मानव-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आये दिन नयी-नयी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, जिसके लिये हर पल एक नयी समस्या के लिये नया समाधान खोजने की आवश्यकता है। भारतवर्ष के मनीषियों ने हजारों वर्ष पूर्व ही मानव-जीवन को ज्ञान-विज्ञान के माध्यम से सरल, सहज एवं प्रभावशाली बनाने की दिशा में अपने विचारों एवं ग्रन्थों के माध्यम से मानव-समाज को सदैव उपकृत किया है। निस्सन्देह संस्कृत वाङ्मय ज्ञान-विज्ञान का एक अद्भुत स्रोत है, जिसे जनकल्याण की दिशा में सतत समन्वेषण की आवश्यकता है।

मैं इस सम्मेलन के सफल आयोजन तथा आयोजकों के लिये अपनी हार्दिक शुभकामनाएं सम्प्रेषित करता हूँ।

दिनेश सिंह

(प्रो. दिनेश सिंह)
कुलाधिपति
के.आर. मंगलम विश्वविद्यालय
गुड़गांव

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कुलपति, जगद्गुरु रामानन्दाचार्य
राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय
जयपुर

प्रो. अनुला मौर्य

शुभाशंसा

ज्ञान-विज्ञान से समन्वित विवेकपूर्वक किया गया कार्य प्रामाणिक एवं सर्वोपयोगी होता है। भारतीय संस्कृतिक परम्परा में वेदादि संस्कृत वाङ्मय ही ज्ञान की प्राचीन निधि है यह सर्वविदित तथ्य है। वर्तमान ज्ञानार्जन की प्रवृत्तियों में प्रामाणिकता के साथ उसमें प्रखरता लाने हेतु शोध, सतत अनुसंधान ही एक सर्वोत्तम साधन है। भारत में इस शोध एवं अनुसंधान की प्राचीन परम्परा रही है, जिसका परिणाम हमें जैमिनि के धर्मसूत्र, बादरायण के ब्रह्मसूत्र एवं पाणिनि के अष्टाध्यायी आदि के ग्रन्थों से प्राप्त होता है। शोध की परम्परा को विकसित करने, नये मानक एवं युगानुरूप गुणवत्ता में सुधार लाने हेतु शिक्षण संस्थाओं द्वारा अन्तर्राष्ट्रिय स्तर पर विद्वत् सम्मेलनों का आयोजन किया जाता रहा है। संस्कृत को विश्वस्तर पर संरक्षित, प्रतिष्ठित तथा सुरक्षित रखने में राजस्थान अग्रणी प्रदेश है।

अत्यन्त हर्ष की बात है कि माननीय श्री अशोक गहलोत, मुख्यमंत्री, राजस्थान सरकार द्वारा संस्थापित जगदुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय परिसर में दिनांक 03-05 मार्च, 2020 को राजस्थान संस्कृत अकादमी तथा राजस्थान संस्कृत शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, महापुरा, जयपुर के संयुक्त तत्त्वावधान में त्रिदिवसीय अन्तर्राष्ट्रिय संस्कृत सम्मेलन का आयोजन हो रहा है साथ ही विद्वानों द्वारा विभिन्न विषयों में प्राप्त शोधसार का प्रकाशन भी किया जा रहा है।

मैं आशा करती हूँ कि संस्कृत विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित यह सम्मेलन, संस्कृत को नये रूप में विश्वस्तर पर प्रतिष्ठापित करने में प्रेरक बनेगा। इस अवसर पर माननीय कुलाधिपति श्री कलराज मिश्र जी का आशीर्वाद एवं माननीय मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत जी का दिशानिर्देश हमारे लिये प्रेरणास्पद है। इस त्रिदिवसीय अन्तर्राष्ट्रिय संस्कृत सम्मेलन के आयोजन के मुख्य प्रेरक एवं निर्देशक, विश्वविद्यालय में शैक्षणिक स्वरूप को उन्नत करने, शोध के क्षेत्र में विश्वस्तरीय कार्य के द्वारा संस्कृत को प्रसारित करने के लिये सतत चिन्तक माननीय संस्कृत शिक्षा मंत्री डा. सुभाष गर्ग जी का मैं हार्दिक धन्यवाद करती हूँ। वित्तीय सहयोग प्रदान कर आयोजन को भव्य बनाने में अमूल्य योगदान करने के लिये माननीय साहित्य कला संस्कृत मंत्री डॉ. बी.डी. कल्ला जी के प्रति भी मैं धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ। इस अवसर पर मैं राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर के निदेशक श्री संजय झाला जी एवं समस्त सहयोगी अधिकारी, शिक्षक एवं कर्मचारी तथा विश्वविद्यालय परिवार के सभी सदस्यों के प्रति तथा विशेषरूप से इस सम्मेलन में भाग लेने वाले विद्वानों, विशिष्ट अतिथियों एवं प्रतिभागी शोधपत्र वाचकों के प्रति अपनी हार्दिक शुभकामना एवं धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ तथा इस सम्मेलन के आयोजन की सफलता के लिये अपनी शुभकामनाएं ज्ञापित करती हूँ।

(प्रो. अनुलामौर्यः)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

डॉ. सुभाष चन्द्र शर्मा

सह–आचार्य साहित्य विभाग
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य
राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय
जयपुर

सम्पादकीय

जगद्गुरुरामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय में आयोजित हो रहे अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृत सम्मेलन में भाग ग्रहण करने के इच्छुक विद्वज्जनों द्वारा ''संस्कृतज्ञानविज्ञानस्य वैश्विकचिन्तनम्'' विषय के अन्तर्गत अपनी रुचि एवं अध्ययन अनुरूप लिखित शोध सारों का इस स्मारिका द्वारा प्रकाशन हुआ है। इसमें संस्कृत, हिन्दी एवं अंग्रेजी तीनों भाषाओं में प्राप्त शोधसारों का संकलन है। देश विदेश के अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त विद्वानों एवं शोधच्छात्रों द्वारा प्राप्त लेखों में वेद, ज्योतिष, व्याकरण, साहित्य, मानवीयमूल्य, योग, वेदान्त, धर्मशास्त्र, पुराण, शिक्षा, न्याय आदि पारम्परिक विषयों के साथ सामाजिक विज्ञान, सूचना सम्प्रेषण तकनीकी, भूगर्भ जल विज्ञान, इत्यादि आधुनिक विषयों पर भी प्रकाश डाला गया है।

शोधसार प्रकाशनार्थ प्रेरणा एवं उचित मार्गदर्शन हेतु इस विश्वविद्यालय की माननीया कुलपति महोदया के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ। अल्प समय में इस स्मारिका को इस रूप में लाने के लिए डॉ. राजधर मिश्र, डॉ. के. साम्बशिवमूर्ति, डॉ. नारायण होसमने, डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा, डॉ. उमेश नेपाल एवं डॉ. कुलदीप सिंह को अनेक साधुवाद।

सुभाष शर्मा

(डॉ. सुभाष चन्द्र शर्मा)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अथर्ववेदोपवर्णित वास्तुतत्त्वविमर्शः

डॉ.जगदीश नारायण विजय
सहायक कुलसचिव

अथर्ववेदे वास्तुविद्याविषयकी पर्याप्तचर्चा दृश्यते । केवलं अथर्ववेदे न अपितु वैदिकयुगे वास्तुशास्त्रस्य महत्त्वपूर्णं स्थानमासीत् । अतः यजुर्वेदे कथितमस्ति–

नमः वास्तव्याय च वास्तुपाय।

अनेनेदं ज्ञायते यत् तस्मिन् युगे वास्तुविद्यायाः व्यापकत्वमासीत् । ग्रामदेवतारूपेण भगवतः शिवस्य स्थानमद्यापि वर्तते। गृहदेवतारूपेण वास्तुदेवतायाः पूजा–अर्चना–जप–हवनादिकर्म अद्यापि गृहे सुखशान्तिधनधान्यमभिवृद्ध्यर्थं क्रियते। वेदे वर्णितः गृहदेवता एव वास्तुदेवतारूपेण प्रसिद्धिं प्राप्तवान्निति वक्तुं शक्यते। गृहदेवता एव वास्तोष्पतिः इत्यस्य चर्चा वेदे वर्णितं दृश्यते। वास्तुदेवता मनुष्याणां कल्याणं करोति। द्विपदानां चतुष्पदानां च रोगं हरति, तेषां कल्याणं करोति, गोवादिधने समृद्धिं करोति। वास्तुदेवता गृहस्थानां सुरक्षां करोति। अस्य वास्तुपुरुषस्य स्थानं ग्रामे नगरे गृहे वाप्यां दुर्गे पुरे च सर्वत्र विद्यते । असौ भूमौ च व्याप्य सर्वेषां मनुष्यपशुपक्षिणां कल्याणं करोति। यः पूजां करोति स सर्वदा सुखमाप्नोति।

वास्तुचक्रस्य निर्मणात्प्राक् भूपरीक्षा आवश्यकी भवति। अस्यां परीक्षायां भूकर्षणम्, अंकुरारोपणम् एवं समीकरणं वैदिकीव्यवस्थायाः एकं महत्त्वपूर्णं विकासक्रमः अस्ति। यथा–

यथेयं पृथिवी मही भूतानां गर्भमादधे।

एवा दधामि ते गर्भं तस्मै त्वामवसे हुवे॥

वस्तुतः वास्तुपुरुषः अथवा वास्तोष्पतिः प्राचीन वैदिकीदेवतायाः एकं स्वरूपम्। प्रजापतिरूद्रः एव वास्तुपुरुषस्य जन्मदाता। वास्तोष्पतिः अथवा गृहपतिः तस्यापरं नाम।

यः मनुष्यः अस्य गृहदेवतायाः वास्तुपुरुषस्य पूजनं अर्चनञ्च न करोति स अश्रियं मृत्युमाप्नोति । पदे पदे विघ्नानां तस्य गृहे प्रवेशो जायते। ये नराः वास्तुपूजां नाचरन्ति ते ब्राह्मणः शापवशात् तस्य वास्तुपुरुषनामराक्षसस्य आहारो भविष्यन्ति। एवं ज्ञात्वा मानवैः गृहारम्भे प्रवेशसमये अवश्यमेव वास्तुपूजनं करणीयम्। द्वारस्य निर्माणे यज्ञादिषु अनुष्ठाने पुत्रजन्मनि व्रतबन्धे विवाहे महोत्सवे जीर्णोद्धारप्रसंगे शिलान्यासे वज्राग्निदूषिते गृहे वास्तुशान्तिः प्रत्येकमानवैः अवश्यमेव करणीयम्। ये यस्मिन् समये वास्तुशान्तिं न करिष्यन्ति तेषां गृहे अकल्याणकारकानां प्रसंगानां वृद्धिः भविष्यति। गृहस्योन्नतिः परिवारस्य वृद्धिः स्थगिताः भविष्यन्ति। वेदेषु वास्तुपुरुषोऽयं यत्र विभिन्नानां रोगाणां नाशं करोति। अयं सोमसदृशः वर्णितः कुत्राप्ययं त्वष्ट्रा सह साम्यं भजते। यत्र कुत्रापि इन्द्रेण सह साम्यं भजते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मनुस्मृत्यां नारीसंरक्षणम्

मोहन लाल शर्मा
शोधच्छात्र
जरारासंविवि जयपुर

मानवाधिकारस्य धारणायां नारीणां संस्थितिरपि चर्च्यते। ताः समानतया व्यवहरेयुः। ताः अपि गृहे समाजेऽपि समानतया समभागिन्यः स्युः। तासां सुखसौविध्यं प्रति अवधानं देयम्। एतादृशी व्यवस्था मनुस्मृतावपि प्राप्यते। मनु महोदयाः कथयन्ति यत् इष्टिकाप्रस्तरादिभिः निर्मितानाम् भित्तीनां समूहं गृहं न भवति। गृहस्य संरक्षिकास्तु नार्यः एव सन्ति।

न गृहं गृहमित्याहु गृहिणी गृहमुच्यते।

गृहे नारीणां सम्मानं देवं मत्वा एव भेवत्। यत्र नारीणां सम्मानो भवति तत्रैव देवाः निवसन्ति यत्र ताः अवमन्यन्ते तत्र सर्वाः क्रियाः निष्फलाः भवन्ति।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।

मनुमहाशयाः विधावानां पुत्रहीनानाम् आतुरीणां सम्पत्तिरमधिकर्तृन् अपि सचेतयति यदि ते एवं करिष्यन्ति तर्हि ते दण्डनीयाः भविष्यन्ति।

वशाऽपुत्रासु चौवं स्याद्रक्षणं निष्कुलासु च।

पतिव्रतासु च स्त्रीषु विधवास्वातुरासु च।।

जीवन्तीनां तु तासां ते तद्धरेषुः सबान्धवाः।

तान् शिष्याच्चौरदण्डेन धार्मिकः पृथ्वीपतिः।।

नृपतिः वन्ध्याः अपुत्राः परित्यक्ताः (निष्कुलाः) पतिव्रताः विधवाः आतुराः संरक्षेत् । यदि कोऽपि राज्ञः बान्धवः उत वा तासां बान्धवः जीवन्तीनाम् तादृशीनां धनं हरेत् चेत् राजा तं चौरदण्डेन दण्डयेत्।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतमाध्यमेन संस्कृतशिक्षणम्

डॉ अभिनव उपाध्याय
जयपुर
9887115748

पुरा संस्कृतभाषा समाजे लोकभाषा राजभाषा व्यवहारभाषा आसीदिति प्रमाणानि उपलभ्यन्ते। अपितु तत्काले शिक्षायाः माध्यमपि संस्कुतमासीत्। सहस्रवर्षेभ्यः संस्कृतमाध्यमेन प्रचलन्ती भारतीयशिक्षापरम्परा आंग्लानां शासनकाले विच्छिन्ना जाता । संस्कृतशिक्षोपरि कुठाराघातः 1835 तमे वर्षे " मैकालेघोषणापत्रस्य संस्तुतिभिः जातः। अनेन आंग्लमाध्यमविद्यालयानां विस्तारः जातः। सम्प्रति भारते दृश्यते यत् संस्कृतमाध्यमशिक्षाव्यवस्था तु परिवर्तनीया वर्तते। वस्तुतः शिक्षाव्यवस्थाया संस्कृतपठनायापि बहुत्रः अवकाशः न लभ्यते। अनेन समाजे संस्कृतस्य व्यवहारः अत्यल्पः जातः। एवं गच्छति काले समाजे विद्यामानाऽपि संस्कृतव्यवहारः लुप्तो भवेदिति चिन्तायाः विषयः। लोके संस्कृतं विहाय अन्याः सर्वाः भाषाः तद्भाषामाध्यमेनैव पाठ्यन्ते। अनुवादविधिना पाठनं आधिक्येन भवति। संस्कृतशिक्षणे प्रत्यक्षपद्धत्याः आश्रयणपुरस्सरं संस्कृतमाध्यमेनैव पाठनीयम्। संस्कृत छात्राः संस्कृते सम्भाषणशीलाः भवेयुः। तदर्थं प्रयासाः विधेयाः। समुचितशिक्षणोपकरणनामभावः, अनाकर्षकपद्धतीनां शिक्षणे प्रयोगः , शिक्षणे क्लेशानुत्पादयन्ति। भाषाध्यापनं तया भाषया एव भवेत्। तदानीमेवभाषायाः सौष्ठवस्य संरक्षणं भवितुमर्हति अनुवादमाध्यमेन भाषाशिक्षणेन शिक्षणकौशलानां विकासः कथमपि कर्तुं न शक्यते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व्याकरणे शाब्दविज्ञानम्

कृष्णदेवशुक्लः
शोधच्छात्रः, व्याकरणविभागस्य,
जगद्गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य, जयपुरम्

शाब्दविज्ञानविषये व्याकरणशास्त्रे अतिसूक्ष्मतया चिन्तनं कृतं वर्तते। व्याकरणस्य सिद्धान्तः शाब्दविषये अस्ति यत् व्यापारमुख्यविशेष्यकः एव शाब्दबोधः। शाब्दबोधाय सर्वतः प्राक् शक्तिग्रहः अपेक्षितः अस्ति एवञ्च प्रायः सर्वमान्यं परिभाषणम् अस्ति यत् यत्प्रकारकयत्विशेष्यकः शक्तिग्रहः तत्प्रकारकतत्विशेष्यपकोपस्थितिः, यत्प्रकारकयत्विविशेष्यकोपस्थितिः तत्प्रकारकतत्विशेष्यकः शाब्दबोधः। वैयाकरणेन ''देवदत्तः पचति'' इत्यस्य शाब्दबोधः इत्थं दर्शयति ''देवदत्ताभिन्नैककर्तृकः ओदनकर्मकः, वर्तमानकालिकः विक्लित्त्यनुकूलो व्यापारः'' अत्र आख्यातार्थकर्त्तरि देवदत्तः अभेदसम्बन्धेन तथा च तिप्रत्ययवाच्यसंख्यैकत्वञ्च समवायसम्बन्धेन विशेषणमस्ति। तिप्रत्ययार्थः यः वर्त्तमानकालः सः स्वरूपसम्बन्धेन एवञ्च विक्लित्तिः जनकत्वसम्बन्धेन व्यापारे विशेषणमस्ति अतः आयाति निष्कर्षः यदत्र प्रधानो व्यापारः तथा च कर्त्ता, कालः विक्लित्तिफलञ्च एतत्त्रयं व्यापारे विशेषणमस्ति। वैयाकरणसम्प्रदाये विचाराणां द्विधा प्रवृत्तिः वरीवर्ति। विचारानेव उद्दिश्य प्राचीनवैयाकरणमतम्, नव्यवैयाकरणमतम् इति व्यवहारः बोभोति। तत्र प्राचीनवैयाकरणः फलविशिष्टव्यापारं स्वीचकार – धातोः फलविशिष्टव्यापारे एका शक्तिः तथा च कर्तृवाच्ये कर्मवाच्ये च शाब्दबोधे व्यापारस्यैव प्राधान्यम्। नव्यवैयाकरणमते धातोः फलव्यापारयोः पृथक्–पृथक् खण्डशः शक्तिः स्वीकृता अस्ति एवञ्च कर्तृवाच्ये शाब्दबोधे व्यापारस्य प्राधान्यम्। कर्मवाच्ये शाब्दबोधे फलस्य प्राधान्यं भवति। कर्मवाच्यस्य ''देवदत्तेन ओदनः पच्यते'' इति वाक्यस्य ''देवदत्तवृत्तिवर्तमानकालिकव्यापारजन्या ओदननिष्ठा विक्लित्तिः'' इत्थं शाब्दबोधः। कर्तृवाच्यस्य ''देवदत्तः ओदनं पचति'' इति वाक्यस्य ''देवदत्ताभिन्नैककर्तृकः ओदनकर्मकः वर्तमानकालिकः विक्लित्त्यनुकूलो व्यापारः'' इत्थं शाब्दबोधः। एवमेव प्रकारेण शाब्दबोधस्य कार्यकारणभावः यथा ''तद्धर्मावच्छिन्नशाब्दबुद्धित्वावच्छिन्नं प्रति तद्धर्मावच्छिन्नवृत्तिविशिष्टज्ञानं हेतुरित्यादि विचाराः विस्तरेण सम्पूर्णे शोधपत्रे प्रतोष्यत इति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पुराणशास्त्रोक्त प्रलयकालतत्त्वानि

अजय कुमार शर्मा
शोधच्छात्र
ज्योतिष–विभाग
जरारासंविवि, जयपुर

येन क्रमेण भौतिकपदार्थानामुत्त्पत्तिः भवति, तद्वैपरीत्येन च क्रमेण तस्य संहारोऽपि भवति। अर्थाद् यो पदार्थः सृष्टिकाले येन पदार्थेन सृष्टो भवति, सः तस्मिन्नेव पदार्थे संहारकाले लीनोऽपि भवति, इति सिद्धान्तः। वेदान्ते उत्पत्ते अर्थः व्यक्तिः किञ्च संहारस्यार्थः लयः। न कश्चिदपि पदार्थः असत् सन् उत्पद्यते, एवं न सद्रूपेण कस्यापि पदार्थस्य नाशः भवति। किन्तु कारणमेव कार्यःपेण प्रतिभासते। कारणसत्तातिरिक्ता कार्यस्य न कापि सत्ता, कारणसत्ता एव कार्यस्य वास्तविकसत्ता भवति।

सत्प्रकारेण प्रलयकालविषये प्रमुखेषु पुराणेषु वर्णनं प्रदत्तः वर्तते। तत्र मत्स्यपुराणे पञ्चषष्ठ्योत्तरेकसप्तमेध्याये, कूर्मपुराणे द्वितीयेऽध्याये, विष्णुपुराणे, श्रीनरसिंहपुराणे, श्रीवामनपुराणे च इत्यादिषु विशेषतः बाहुल्येन सन्ति विषयाः प्रलयकालस्य वर्णिताः।

नित्यप्रलयः–

प्रतिदिनं जायमानः नित्यप्रलयः। सः सुषुप्तिः, यत्र सकलकार्याणां प्रलयः जायते। एकमपि कार्यं व्यक्तःपेण न भवति। अतः सकलकार्यस्य प्रलयःपेण जायमानत्वात् सुषुप्तिरेव नित्यप्रलयः। सा सदा अस्माकं प्रलयं करोति, अर्थात् सुषुप्तिकाले यदा यदा कार्यं स्वकारणे लीयते, तत्समये तमोगुणावृत्तः मनुष्यः सुखःपं प्राप्नोति। सः सुषुप्तिःपप्रलयः नित्यं प्रचलति, अत एव नित्यप्रलयः कथ्यते।

नैमित्तिकप्रलयः–

ब्रह्मण एकस्य दिनस्य समाप्ते सति जायमानविश्वनाशः नैमित्तिकप्रलयः कथ्यते। अर्थात् कार्यब्रह्मणः (हिरण्यगर्भ) दिनस्य समाप्ते जाते तन्निमित्तकलोकत्रयं, भूर्लोकः, भुवर्लोक, स्वर्लोकः एते नश्यन्ति। चतुर्युगानां सहस्रकालः ब्रह्मणः दिनं भवति।

नैमित्तिकप्रलयोऽयं तावत् भवति यावद्धिरण्यगर्भस्य दिनं भवति। हिरण्यगर्भस्य दिनं यावत् भवति तावदेव तस्य रात्रिरपि भवति। अतः नैमित्तिकप्रलयः सः कथ्यते यदा विश्वस्रष्टा भगवान् हिरण्यगर्भः सम्पूर्णत्रिलोकं स्वस्मिन् लयं कारयन् शेषय्यायां स्वपिति। उक्तञ्च मत्यस्यपुराणे –

विद्याद् द्वादशसाहस्रीं युगाख्यां पूर्वनिर्मिताम्।
एवं सहस्रपर्यन्तं तदहो ब्राह्ममुच्यते।।
ततोऽनि गते तस्मिन् सर्वेषामेव जीविनाम्।
शरीरनिर्वृतिं दृष्ट्वा लोकसंहार–बुद्धितः।।
देवतानाञ्च सर्वासां ब्रह्मादीनां महीपते।
दैत्यानां दानवानाञ्च यक्षराक्षसपक्षिणाम्।।
गन्धर्वाणामप्सरसां भुजङ्गानाञ्च पार्थिव।
पर्वतानां नदीनाञ्च पशूनाञ्चौव सत्तम।।
तिर्यग्योनि–गतानाञ्च सत्वानां कृमिणान्तथा।
महाभूतपतिः पञ्च ह्त्वा भूतानि भूतकृत्।।
जगत्संहरणार्थाय कुरुते वैशसं महत्।

प्राकृतप्रलयः

यदा प्रत्येकं वस्तु प्रकृतौ विलीयते तदा सः प्राकृतः प्रलयः कथ्यते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तस्यान्ते सर्वसत्त्वानां सहेतौ प्रकृतौ लयः।
तेनायं प्रोच्यते सद्भिः प्राकृतः प्रतिसञ्चरः।
ब्रह्मानारायणेशानां त्रयणां प्रकृतौ लयः।

अर्थात् कार्यब्रह्मणः नष्टे तन्निमित्तकसमग्रकार्याणां नाशः भवति। अत्र नाशशब्दः लयार्थवाचकः न तु प्रध्वंसवाचकः। सुषुप्तिकाले कार्यब्रह्मविनाशनिमित्तकसकलकार्याणां नाशः न भवति। अतः अतिव्याप्तिदोषः न भवति। कार्यब्रह्मणोऽर्थः हिरण्यगर्भः प्रथमजीवः, आदिकर्ता तथा ब्रह्मापि स एव।

स वै शरीरी प्रथमः स वै पुरुष उच्यते।
आदिकर्ता स भूतानां ब्रह्माग्रे समवर्तते।।

हिरण्यगर्भस्य यदा परब्रह्मणः साक्षात्कारः जायते, तदा ब्रह्माण्डाधिकारलक्षणप्रारब्धकर्मसमाप्ते सति विदेहकैवल्यनामिका परमा मुक्तिः प्राप्यते। अपि च हिरण्यगर्भलोके वर्तमानजीवा अपि परं ब्रह्म साक्षात्कारानन्तरं विदेहमुक्तिं लभन्ते। अर्थात् प्राकृतप्रलयप्राप्ते सति यदा हरिण्यगर्भस्य मुक्तिः भवति, तदा सत्यलोकनिवासिनोऽपि ब्रह्मसाक्षात्कारेण विदेहमुक्ताः भवन्ति।

ब्रह्मणा सह ते सर्वे सम्प्राप्ते प्रतिसञ्चरे।
परस्यान्ते कृतात्मानः प्रविशन्ति परं पदम्।

प्राकृतप्रलयं व्यञ्जन् कथयितुं शक्यते यत् निमेषारम्भस्य सत्त्वात् प्राकृतप्रलयान्तर्गतप्रकृतेः, कार्यम् उत्पत्तिः , लयश्च तस्याधारः।

निमेषादिकालोत्पत्तिः ब्रह्मण एव। प्रलयसमयनिमेषादयोऽपि तस्मिन्नेव ब्रह्मणि लीयन्ते। तात्पर्यमिदमस्ति यत् समग्रकार्याणां प्रकृतौ मायायां लयो, जायते। कार्यब्रह्महिरण्यगर्भस्य च परब्रह्मणिलयो जायते। एवं तेनैव सह तल्लोकवासिनां सर्वेषां तस्मिन् परब्रह्मणि लयो भवति। अयमेव प्राकृतप्रलयः महाप्रलयोऽपि कथ्यते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नारायणभट्टतिरिमहोदयस्य व्यक्तित्त्व–कृतित्त्वविमर्शः

अमित मीणा
शोधच्छात्र
साहित्य–विभाग
जरारासंविवि, जयपुर

संस्कृतसाहित्ये विषयवैपुल्यदृष्ट्या यथा तथैव विषयगाम्भीर्यदृष्ट्या विषयविश्लेषणमहिम्ता च तत्त्वानि विदुषां विविदिषुणां च कृते शेवधिः एव भवतीति मन्यते। पुराणेषु दर्शनेषु वेदेषु तन्त्रा विषयां ज्योतिषे च नूतनशोधानां कृते महान् अवकाशः वर्तते। तथैव काव्यसाहित्यमपि संस्कृते विरचितं नानादृष्ट्वा शोधार्थीनां कृते महानतमवसरं प्रददाति। यथा मध्ययुगवर्तिनि साहित्यलेखने भारतीयसमाजोपरि आपतितानामान्तरसमस्यानां बाह्याक्रमणानां च प्रतिक्रियाः, प्रदेशवेशभाषाजातिकर्माचारादिभिः त्रुटि तस्य समाजस्य संयोजनसमर्थं सूत्रं प्रति अन्वेषणशीलता इत्यदयः बहवो विषयः तत्कालिकसाहित्ये द्रष्टुं शक्यन्ते। कवीनां प्रवृत्तिरेव भूयसि समाजस्य चिन्तनं प्रतिबिम्बयति।

मध्ययुगे भक्तिप्रधाने साहित्ये कविभिः पराक्रान्तम् ऐतिह्यविदां नागोचरम्। पराभवे, शोषणे, अत्याचारे, लुण्ठने सत्येपि तद्विरोधिप्रतिक्रियापेक्षया तत्सहनपूर्वकं स्वात्मशक्तिसमृद्धिवृद्धिविधायिनि साहित्यसर्जने एव तात्कालिकानां कविनां प्रवृत्तिः लक्ष्यते। जनेषु तादृश शक्तिसंचारञ्च ईश्वरभक्तिरिव नान्योपायः कर्तुमलमिति विगते समये भारतीयनैतिह्यं जानतामपरोक्षमेव। प्रान्त्यभाषासु रचितेन भक्तिसाहित्येन यथा समाजे विलक्षणः प्रभावः भवति, संस्कृतभाषायां तदा रचितैः भक्तिसाहित्यैः तथैव प्रभावः कृत इति यद्यपि वक्तुं न शक्यते तथापि संस्कृतकाव्यानां समाजे अन्यादृश एव प्रभावः जातः इति वक्तुं शक्यते।

अस्मिन् एव भक्तिसाहित्यमण्डले केरलेषु नीलनदीतीरे पेरुमलंग्रामवास्तव्येन नारायणभट्टतिरिनामकेन विदुषां प्रणीतं श्रीनारायणीयं नाम काव्यमन्यतम। षोडश्यां शताब्द्यां विरचितमिदं काव्यं भक्तिप्रधानम्। श्रीमद्भागद् महापुराणमुपजीव्य श्रीभागवतोक्तविषयान् तेनैव क्रमेण समुपस्थापयति इदं काव्यम्। समग्रतामाहत्य अस्मिन् काव्ये षट्त्रिंशद्युत्तरसहस्रं पद्यानि सन्ति। दशकेषु विभक्तेऽस्मिन् काव्ये नानाविधानि छन्दांसि प्रायोजिषत। बहुत्र वातव्याधिहरणाय कृतानि प्रार्थनानि च अस्य काव्यस्य शिवेतरक्षतये इत्युक्तप्रकारं कायाधिशमनमेव प्रयोजनमिति प्रतिपादयन्ति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ऋग्वेदे सृष्टिविमर्शः

अक्षय दाधीच
शोधच्छात्र
ज.रा.रा.सं.वि.वि

आधुनिक समये ब्रह्माण्डस्योत्पत्तेः विषये बहुविधाः प्रकल्पनाः कृताः । अद्यापि ब्रह्माण्डस्योत्पत्तेः विषये वैज्ञानिकैः बहुविधाः सिद्धान्ताः प्रतिपादिताः । तेषु जैव भौतिक सिद्धान्तः बिगबैगं थ्योरी च प्रसिद्धा वर्तते ।

अस्माकं शास्त्रेष्वपि ब्रहमाण्डस्योत्पत्ते विषये वर्णनं वर्तते । शास्त्रेषु प्राचीनतमः ग्रनथः ऋग्वेदः इति सयुंक्तराष्ट्रसंघेन उद्घोषितम् । ऋग्वेदे ब्रह्माण्डस्योत्पत्तेः विषये नासदीय सूक्ते चर्चा विहिता ।

नासदीय सूक्तम् ऋग्वेदस्य दशममण्डलस्य एकोनत्रिंशदधिकं शततमं सूक्तं वर्तते । अस्मिन् सूक्ते ब्रह्माण्डस्योत्पत्तेः विषये क्रमिकं वर्णनं क्रियते ।

यथा–

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं नासीदनो नोव्योमा परोयेत् ।
किमावरीवः कुहकस्य शर्मन्नंभः किमसीद्र गहनंगभीरम् ।।

अर्थात्–

सृष्टेः उत्पत्तेः प्राक् प्रलयदशानां अभामात्मकं तत्वं भावात्मकं तत्वं च न आसीत् । स्वर्लोकं मृत्युलोकं पाताललोकञ्च नासीत् । अन्तरीक्षमपि नासीत् । ततः परं न किमपि नासीत्, किमपि आवृत्तं नासीत्, अर्थात् तस्मिन् काले किमपि गतनं गभीरं नासीत् । कस्यापि सत्तात्मिका स्थितिः नासीत् । तस्मिन् समये मृत्योः स्थितिः नासीत् मृत्येः अभावः अपि नासीत् । दिवरात्री अपि न आस्ताम् । तस्मिन् समये केवलं सर्व विवृतैः अवच्छिन्नं ब्रह्मतत्वमेव क्रियाशून्यत्व रूपेण आसीत् उक्तञ्च–

तम आसीन्तमसा गूढमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम् ।
तुच्छ्येनाम्भविहितं यदासीत्तपसस्तन्महिना जायतैकं ।।

अर्थात्– जगदीदं तमोव–त्तेन आच्छादीतं आसीत् यत् जगतः मूलकारणरूपेण विद्यमानमासीत् । सम्पूर्णस्य जगतः सलिलात्मिका स्थितिः आसीत् । अद्यापि जलं जीवनस्य पर्यायत्वेन गृह्यते । वैज्ञानिकाः जीवनस्य अन्वेषणाय प्रथमं जलमेव आविष्क्रियन्ते अनेयेषु गृहेषु । एभिः बहुभिः मन्त्रैः मूलतत्वानां वर्णनं अत्र कृतमस्ति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"पतंजली व्याकरणमहाभाष्ये प्रथम आह्निके शब्दस्वरूपम्"

शोधच्छात्रः
अशोक कुमार पंचोली
जरारासंविवि जयपुरम्,

अत्र शब्दस्वरूपं प्रतिपादयन्। लोके प्रचलित ध्वनिनां पतंजलिशब्दरूपेण स्वीकरोति। लोके शब्दानां शब्देन ध्वनिऽर्थे जानाति। पतंजलि अन्यत्र महाभाष्ये ध्वनिनां शब्दस्य गुणेऽपि कथ्यते। एव तर्हि स्फोटशब्दः ध्वनिशब्दगुणः। "ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षड्ंगोः वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च" कथित्वा पतंजलि महोदयेन तस्य नित्य अध्ययनस्य वार्ता करोति। शब्दज्ञानेन विना अध्यापनं न भविष्यति। अत एव ब्राह्मणानां शब्दज्ञानं अवश्यमेव करणीयम्। पतंजलिमहोदयेन शब्दस्य निम्नऽर्थ प्रतिपादयन्। पतंजलिनां प्रोक्ताः –

दुष्टः शब्द स्वरतो वर्णतो वा,
मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति,
यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात्।।

दुष्टान् शब्दान्मा प्रयुक्षमहीत्यध्येयं व्याकरणम्। दुष्टः शब्दः। दुष्ट शब्द इति स्वरेण स्वरतः। महाभाष्ये शब्दस्य अतिमहत्त्वपूर्णऽर्थे अपि प्रयुज्यते। यथा –

यद्यपि बहुनाधीसे पटपुत्र तथापि व्याकरणम्।
स्वजनः श्वजनो मा भूत्सकलः शकलः सकृच्छकृत्।।

शब्दः एकस्मिनऽर्थे प्रयुक्तः साधुः भवति। अन्यत्रऽर्थे शब्दः अपि असाधुः भवति।

'''

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अष्टाध्याय्यां प्रसङ्गः

Anil Kumar Sanmuk
University of Hyderabad

पाणिन्युपज्ञं व्याकरण तद् ग्रन्थमधिकृत्य कृत सन्दर्भः "अष्टाध्याय्यां प्रसङ्गः" प्रसङ्गार्थम् अभिधेयार्थम् इयं लघुसञ्चिका आरभ्यते, पाणिनिना सूत्रैः यत्र आचरितः प्रसङ्गमभिधीय सन्दर्भः, तत्प्रसङ्गमभिधीय कार्याणि तु आचार्यः निष्कुर्वते, परन्तु स प्रसङ्गशब्द आचार्यस्तु न व्यभिचरति, तदपि कार्याणि तत्र समाभवन्ति इति। विना शब्देन अर्थस्तु न प्रचलति, "अर्थेन विना शब्दः शब्देन विना अर्थः इति" शब्दान्तरं प्रयुज्य आचार्यः तत्प्रसङ्गमभिधीय कार्याणि निष्कुर्वते इत्याशयः। तस्य शब्दस्य अर्थो प्रपञ्चितः व्याख्याकारैः अनुचारिभिः वैय्याकरणैः सुमुखसरस्वतीभिः विप्रपण्डित– मण्डितभूषण "जिनेन्द्रबुद्धिना" इति। तस्य जिनेन्द्रबुद्धिनः वचनमादाय अष्टाध्याय्यां यत्र यत्र आचार्येण प्रसङ्गमभिधीय कार्याणि आचरितः, तत्र तत्र तदुद्देश्यमुद्धृत्य प्रसङ्गिता इयं प्रलेखिका इति। आचार्यस्य मूलवचनमधिकृत्य जिनेन्द्रबुद्धिना कृतार्थं सन्धाय अष्टाध्याय्यां सूत्रैः विकीर्णान् प्रसङ्गान् उद्धृत्य साभिमतशास्त्रेण सानुकूलससन्दर्भोचित शब्दैः प्रपञ्चितोऽयं शोधलेखः इति।

शोधलेखस्य प्रयोजनम् प्रसङ्गस्सन्दर्भमधिकृत्य सूत्रार्थप्रयोजने च विबाध्येते इति, सूत्रस्थ पदं न केवलं रूढं न च योगरुढं यादृच्छिकञ्चेति, सूत्रस्थ पदान्यपि लोकायुक्त स्थानानि समागृह्य सशास्त्रेण व्यवहारेण च सम्मिल्य स्वामर्थं प्रकिरति इति। व्यवहाराधीनं शास्त्रम्, न शास्त्राधीनं व्यवहारमिति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतसाहित्ये राष्ट्रप्रेमभावना

डॉ0 छगन लाल शर्मा
सहायकाचार्यः, संस्कृतविभाग
आर0बी0एस0 कॉलेज, आगरा

संस्कृतसाहित्यस्य आरम्भः वेदैः जातः इत्यत्र नास्ति कस्यापि कापि विप्रतिपत्तिः। एतेषु वेदेषु अस्मदृषिभिः मानवजीवन–सम्बन्धितानामनेकेषां विषयाणां पर्याप्तमीमांसा प्रस्तुतीकृता वर्तते। तेषां दृष्टिः न केवलं मानवस्य सामाजिक – आर्थिक– धार्मिक– सांस्कृतिकपक्षाणामेव मूल्यांकनं विदधाति अपितु स्वदेशभक्तिसम्बन्धिभावान् अपि प्रकटयति। यतो हि ऋषयः अस्मदीयाः सम्यग्विजानान्ति स्म यत् सामूहिकसम्मानपूर्णस्थित्यर्थम् एतत् परमम् आवश्यकं यत् स्वभूमेः स्वराष्ट्रस्य च रक्षा मनसा वचसा कर्मणा चैव कार्येति। एतत्तदैव सम्भवति यदा वयं स्वजन्मभूमेः, स्वराष्ट्रस्य कृते निष्ठावन्तो भवेम। तदुन्नत्यै सर्वदा क्रियाशीलाः भवेम। स्वराष्ट्रास्तित्वरक्षार्थं सर्वदा संगठिताः जागकरूका च भवेम इति। अन्यथा अन्न–जल–धन–धान्यसमृद्धस्य अस्य राष्ट्रस्य उपरि अन्यदेशवासिनः आक्रमणं करिश्यन्ति। फलस्वरूपं स्वदेशीयाः एव जनाः अभावग्रस्ताः भविष्यन्ति। एतत्सर्वं विचार्यैव भारतीयैः ऋशिभिः अत्रस्थ–सामान्यजनमनसि राश्ट्रियभावनां पूरयितुं वेदेशु अनेकेषु स्थलेषु स्वमातृभूमेः मुक्तकण्ठेन प्रशंसा कृता वर्तते। यत्पठित्वा श्रुत्वा वा अस्माकं समेशां मनसि अस्मद्देशं प्रति गौरवभावो प्रेमभाव च वर्धते।

स्वजन्मभूमिं मातृत्वेनांगीकरणस्य भावना प्रप्रथमतया वेदेभ्यः एव समुपलब्धा वर्तते। उक्तं च ऋग्वेदे–

तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः।

तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना श्रृणुतं धिष्ण्या युवम् ।। (1/89/4)

स्वजन्मभूमेः कृते 'मातृभूमिः' इति पदस्य सम्बोधनकरणस्य शिक्षा वेदेभ्यः एव लभ्यते। तत्र च प्रमाणम् ऋग्वेदस्य अयं मन्त्रः–

"द्यौमे पिता जनिता नाभिरत्र बन्धुर्मे माता पृथिवीमहीयम्" (ऋग्वेदः, 1/164/33)

ऋग्वेदस्य अन्ये अपि मन्त्राः प्रमाणम्–

'द्यौर्व :पिता पृथिवी माता सोमो भ्राता अदितिः स्वसा' इति (ऋग्वेदः, 1/191/6)

एवमेव–

मा नो माता पृथिवी दुर्मतौ धात् । (ऋग्वेदः, 5/42/16)

वैदिकर्षीणां दृष्टौ मातृभूमिरेव तेषां सर्वस्वम् आसीत्। ते इमामेव स्वर्गत्वेन गणयन्ति स्म। तेषां मते इयं कल्याणकारिणी माता विपुलशक्तिदायिनी, नित्या, विशाला, सुखदा, योगक्षेकारिणी, भोजनदायिनी च अस्ति। ते इत्थं गायन्ति अस्याः यशोगीतम् –

"अदितिद्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः

विश्वे देवा अदितिः पंचजना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। इति (अथर्ववेदः 7/6/1–4)

वेदेषु न केवलम् आकाशपृथिव्योः एव मातृपितृत्वेन स्तुतिः कृता वर्तते अपितु नगराणां प्रति स्वाभिमानभावना प्रकटीकृता वर्तते। तदयथा–

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

'यस्याः पुरो देवकृतः' (अथर्ववेदः, 12/1/44)

अर्थात् तेषां वैदिकर्षीणामियं भावना आसीद्यत् ये ये नगरविशेषाः वर्तन्ते तेषां सर्वेषां स्थापना अस्मद्देवैः कृता अस्ति । एतत्कथनेन वैदकर्षीणां मनसि नगराणां प्रति दिव्यता, पवित्रता, तीर्थभूमिभाव च इत्येतत्सर्वं साक्षात्कर्तुं भाक्यते।

न केवलमेतदेव अपितु नदीनां प्रति समादरभावना, पर्वतानां प्रति प्रेमभावना इत्येतत्सर्वं राष्ट्रप्रेमभावनामेव उद्बोधयति ।

<u>पुराणेषु राष्ट्रप्रेमभावनाः</u>

पुराणानि अस्मद्भारतीयसंस्कृतिसभ्यताया च कोशागाराणि सन्ति। अत्रापि राष्ट्रप्रेमभावना बहुधा मुखरिता दृश्यते। पुराणेषु भारतमातुः बहु यशोगानं कृतं वर्तते। इयं भारतभूमिः तादृशी महीयसी गरीयसी च यत्र देवाः अपि समागत्य वासं कर्तुम् इच्छान्ति। देवगणाः सर्वे अपि अस्याः भारतभूमेः गुणगानादिकं कुर्वन्ति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मनोवैज्ञानिकानां मते सामाजिकव्यवहारः

दीपक तिवारी
शोधच्छात्र
शिक्षा–विभाग
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, भोपाल परिसर

समाजमनोवैज्ञानिकः सामाजिकपरिस्थितिषु व्यक्तेः व्यवहारस्य अध्ययनं करोति। अयं व्यवहारः सामाजिकव्यवहारः कथ्यन्ते। सामजमनोविज्ञानं सामाजिकव्यवहारस्य स्वरूपकारणञ्च अध्ययनाय बलं ददाति। एवञ्च जनस्य सामाजिकव्यवहारस्य विश्लेषणमपि पृथक् पृथक् स्थानानुसारं करोति। एतस्य तात्पर्यं सामाजिकव्यवहारस्य समग्रतया ज्ञानमस्ति।

सामाजिकव्यवहारस्य स्तराणि–

1 वैयक्तिकस्तरः– वैयक्तिकस्तरेषु व्यक्तित्वशीलगुणम् अभिप्रेरणामनोवृत्तिञ्च आगच्छन्ति।

व्यक्तित्वशीलगुणम्– जनानां शीलगुणसिद्धान्तानुसारेण व्यक्तित्वस्य संरचना पृथक् पृथक् रूपस्य अनेकशीलगुणानां मिलित्वा निर्माति। शीलगुणस्य तात्पर्यं व्यक्तेः व्यवहारस्य वर्णनम्।

अभिप्रेरणा– आधुनिकमनोवैज्ञानिकानुसारं जनानां विभिन्नव्यवहाराणां संचालितानिर्देशितसंघटितश्च कारयति। सा प्रमुखशक्तिरूपेण अभिप्रेरणायाः ज्ञानं महत्त्वपूर्णं भवति।

अभिवृत्ति– अभिवृत्तिजनस्य व्यक्तित्त्वस्य महत्त्वपूर्णं पक्षो वर्तते। यथार्थे अभिवृत्तिः एका सामाजिक पत्ययः अस्ति। यो इतरेतर परिस्थितिषु जनेन क्रियमाणानां व्यवहारस्य प्रवृत्तिं पश्यति

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ब्राह्मणग्रन्थानां लोकोपयोगिता

डॉ.देवेन्द्र कुमार
सहायकाचार्य
जरारासंविवि, जयपुर

भारतीयमान्यतानुसारेण वेदाः सृष्टेः प्रपञ्चस्यास्य प्राथमिकी वाणी वर्तते। सर्गस्य सर्गक्रमस्य वेद एव कारणम्। **मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्** इति प्रतिज्ञापरिशिष्टवचनात् ब्राह्मणभागः वेदोऽस्ति ब्राह्मणशब्दः संस्कृतसाहित्ये द्विविधः एको जातिवाचकः एपरः ग्रन्थवाचकः। जातिवाचको ब्राह्मणशब्दः पुल्लिङ्गे प्रयुज्यते तत्रैव ग्रन्थवाचको ब्राह्मणशब्दः नपुंसकलिङ्गे प्रयुक्तो भवति।

ब्राह्मणं ब्रह्मणः व्याख्यापरकग्रन्थानां नाम अस्ति। ब्राह्मणग्रन्थेषु सर्वाधिकमहत्वशाली विपुलकायस्तथा यीगीनुष्ठानस्य स्रवोत्तमप्रतिपादको ग्रन्थः इदमेव शतपथब्राह्मणमस्ति। यजुर्वेदस्योभयोः काण्वमाध्यन्दिनशाखयोः शतपथब्राह्मणमुपलब्धमस्ति। शतपथब्राह्मणस्य महत्ताऽनया घटनया एव प्रस्फुटा भवति यदयं ग्रन्थः प्रायः समग्रयज्ञयागानां सांगोपांगं विवरणं प्रस्तौति, तच्चान्यब्राह्मणेषु दुर्लभमस्ति। यज्ञस्यारम्भः वैदिकयुगस्यारम्भकालादेवास्ति । पूर्वं तु यज्ञस्य विधानं संक्षेपतः एवाभवत् किञ्च कालान्तरे याज्ञिकसंस्थेयमतिविस्तृताऽभवत्। ब्राह्मणयुगः याज्ञिकसंस्थायाः पूर्णविकासस्य युगोऽस्ति। अस्य परिचयो विभिन्नब्राह्मणग्रन्थेषु प्राप्यते। स्वकीयवर्ण्यविषयाणां गम्भीरविचारहेतुना सम्पूर्णब्राह्मणसाहित्यस्य शतपथब्राह्मणमिदं मुकुटमणि मन्यते।

आधुनिककाले जनाः यज्ञकर्मणो विमुखाः दृश्यन्ते, अज्ञानवशाच्च यज्ञेन न कोऽपि लाभः इति मुहुर्मुहुः जल्पन्ति। वस्तुतः यज्ञस्य आध्यात्मिकदृष्ट्या लाभस्तु सर्वजनविदित एव यथा–**यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म, यज्ञो वै विष्णुः, विष्णुर्वै यज्ञः, स्वर्गकामो यजेत्, अग्निष्टोमेन यजेत स्वर्गकामः** इत्यादिवचांसि यज्ञस्य आध्यात्मिकं महत्वं प्रतिपादयन्ति। निष्कामकर्मणः सर्वप्रथममुदाहरणं वर्तते यज्ञः। परमात्मनः प्राप्तेः कृते समर्पणभावनां **तेन त्यक्तेनभुञ्जीथाः** सूचयत्ययं यज्ञः। ईश्वरविरचितमिदं जगत्, तस्य स्मृतिं कारयत्ययं यज्ञः। इत्थम् आध्यात्मिकदृष्ट्या बहवो लाभाः सन्ति यज्ञस्य।

वैज्ञानिकदृष्ट्याऽपि यज्ञस्य लाभ इतोऽप्यधिको वर्तते। यस्मिञ्जगति वयंजीवामः तत् परितः स्थितमावरणं पर्यावरणं कथ्यते। पर्यावरणाय यज्ञस्य सर्वाधिका उपयोगिता भवति। वायुमण्डल ऑक्सीजेन तथा कार्बन डाइऑक्सइड इति वाय्वोः सन्तुलनं यज्ञमाध्यमेन संस्थाप्यते इति बहुविधपरीक्षणैः वैज्ञानिकाः साधितवन्तः। एताः प्राकृतिकाः विसङ्गतीः दूरीकर्तुमस्माकं प्राचीनर्षयः पृथ्वीअन्तरिक्षद्युलोकस्थितं पर्यावरणं सन्तुलयितुं प्राकृतिकशक्तीनां गहनमध्ययनं कृत्वा देवतारूपेण ताः स्वीकृतवन्तः। एताः देवरूपशक्तीः यथावत् स्वानुकूला निर्मातुम् ऋषयः नानाकर्मभिः तासाम् आराधनां कृतवन्तः। तेष्वेव कर्मसु यज्ञोऽपि श्रेष्ठतमकर्मरूपेण मन्यते। पर्यावरणशुद्धेः अभिन्नङ्गत्वेन ऋषयः मानवस्य दिनचर्यायांयज्ञकर्मणः अनिवार्यत्वं प्रतिपादितवन्तः।

अयं यज्ञः वेदे भुवनस्य नाभिरूपेण कथितः अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः। ब्रह्माण्डस्य केन्द्रबिन्दुः उद्गमस्थलं यज्ञो वर्तते । शतपथब्राह्मणानुसारम् ऋतशब्दः यज्ञस्यपर्यायो वर्तते। अस्मिन्नेव ऋते सम्पूर्णञ्जगद् नियन्त्रितं भवति। गीतायां ब्रह्मरूपेण चेद् ब्राह्मणग्रन्थे सार्वभौमसत्तारूपेण अयं यज्ञः स्वीक्रियते। सम्पूर्णजगतः सत्ता अस्मिन्यज्ञे निहिता, सृष्टेः अन्तेअयमेव अवशिष्यते।

यज्ञदृष्ट्या ब्राह्मणग्रन्थेषु शतपथब्राह्मणस्य महत्त्वमस्ति। मनोरमया रीत्या दैविकविधानस्य याज्ञिकव्यवहारस्य च शिक्षार्थमेव शतपथब्राह्मणं प्रवृत्तमिति यावदुपरितनाद् वर्णनात् स्पष्टमेव।अस्मिन् ग्रन्थे

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यज्ञविद्या स्ववैभवपूर्णेन सहालोचकानां सम्मुखे समुपस्थिता भवति। यज्ञीयानुष्ठानस्य क्षुद्रातिक्षुद्रतरस्यापि विधिविधानस्य विशद वर्णनमस्मिन् ग्रन्थेऽस्ति। यज्ञीयक्रियायै हेतुनिर्देशः प्राचीनाख्यानानां सरसविवेचनम्, अस्य ब्राह्मणस्योत्कर्षं प्रदर्शयितुं पर्याप्तमस्ति। पुराणेषूल्लिखितमत्स्यावतारस्य बीजमस्यामेव कथायामस्ति, येनं ज्ञातं भवति यत् केन प्रकारेण ननु मानवीयसृष्ट्या स मत्स्यसहाय्येन जलौघात् त्रातुं समर्थोऽभवत्। जलौघे यदा मानवानां विनाशोऽभवत् तदा पुनः तेन सञ्चितबीजेनैवास्मिन् भूतले तेषां प्रादुर्भावोऽभवत्।

ब्राह्मणग्रन्थेषु विधेः अर्थवादस्य विस्तृतं वर्णनं मिलति। इदं वर्णनं पठित्वा साधारणपाठकः समुद्वेलितो भवति। किञ्चैतेषूद्वेजकविषयसमूहेषु यत्र तत्रात्यन्तरोचकमाकर्षकं महत्त्वपूर्णञ्चाख्यानमपि प्राप्यते।तमसि प्रकाशकिरण इव, दीर्घमरूभूमौ हरितभूमिरिवैतान्याख्यानानि पाठकानामुद्विग्नचित्तय शान्तिदायकानि शीतलानि च भवन्ति। विधिविधानानां स्वरूपस्य व्याख्या एवास्याख्यानस्य जननी अस्ति। किञ्च यदा कदाऽऽख्यानमिदंयज्ञस्य संकीर्णप्रान्तं परित्यज्य साहित्यस्य सर्वभौमक्षेत्रे विचरणं करोति तदा कर्मकाण्डस्य कर्कशता तद्रोद्धुं न शक्नोति। आख्यानमिदं द्विविधं भवति स्वल्पकायमाख्यानम्, दीर्घकायमाख्यानञ्चेति। स्वल्पकायिकेष्वारख्यानेषु तासां कथानां गणना भवति यत्र कथायां समुक्तिताप्रदर्शनं समुल्लिखितं भवति। एतान्याख्यानानि किञ्चिद्भेदेन सहानेकेषु ब्राह्मणेषु समुपलब्धानि सन्ति। ईदृक्षु लघ्वाख्यानेषु कतिपयमुख्यान्येतानि सन्ति वाचः देवान् परित्यज्य सलिले तदनु वनस्पतौ च प्रवेशः। अग्निमन्थनकाले घोटकमग्रेस्थापनम्, देवासुराणां मध्ये बहुविधसंग्रामादिकम्।

एतेषु लघ्वाख्यानेषु यदा कदाऽतीवगम्भीरतात्विकतथ्यानामपि संकेतो मिलति।यद् ब्राह्मणस्य कर्मकाण्डात्मकवर्णनाद् नितान्तं भिन्नं भवति तथा गूढगम्भीरार्थप्रतिपादकमपि भवति। प्रजापतेः प्रार्थनायै शतपथब्राह्मणे यस्य कथानकस्योपक्रमं मिलति तत्तु नितान्तं रहस्यमयमस्ति। श्रेष्ठतांप्राप्तुं वाक्मनसोः कलहः समुत्पन्नोऽभवत्। मनसः कथनमासीद् यन्मयाऽनभिगतवार्ता वाण्या न उच्यते। अस्य कथानकस्याभ्यन्तरे मनोवैज्ञानिकतथ्यस्य विशदः संकेतो प्राप्यते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वाक्यार्थाभिवादः

दीक्षाशर्मा
शोधच्छात्रा (व्याकरणम्)
जरारासंवि जयपुरम्।

वाक्यस्य कोपादेयता चावश्यकता इति विचिन्त्यते, यतोहि सामाजिकः प्राणी मनुष्योऽयमिति। लोकेऽस्मिन् व्यवहारे वाक्यमेव प्रधानं मुख्यञ्च किन्तु वाक्यविषये अनेकानि मतानि समुपलभ्यन्ते तानि अधः प्रस्तूयन्ते।

1 पदसंघातजं वाक्यम् – व्याडिः।
2 पदसमूहो वाक्यमर्थसमाप्तौ – कौटिल्यः।
3 एकार्थः पदसमूहो वाक्यम् – काशिका।
4 पदसमूहो वाक्यम् – तर्कसंग्रहः।
5 शाब्दबोधसहकारिकारणानि आकांक्षायोग्यतासत्ति – तात्पर्याणि – परमलघुमञ्जूषा।
6 वार्त्तिककारभाण्यकाराभ्यां पुराचार्याणां लक्षणानि संग्रह्य वाक्यस्य चत्वारि प्रमुखलक्षणानि गदितानि।
1 आख्यातं साव्यपकारकविशेषणं वाक्यम्।
2 सक्रियाविशेषणं च।
3 आख्यातं सुविशेषणम्।
4 एकतिङ्वाक्यम् (प्रधानम्) इति।

अतः सारांशरूपे वक्तुं पारयामः वयं वैयाकरणाः ''धात्वर्थव्यापारमुख्यविशेष्यकम्'' ''धात्वर्थफलमुख्यविशेष्यकम्''

शाब्दबोधं मन्यमानाः प्रतीयन्ते। एतैः तिङन्तघटितमेव तिङन्तार्थनिष्ठमुख्यविशेष्यताकं वाक्यं स्वीक्रियते।

वाक्यञ्च स्फोटात्मकं तच्च निरवयवं नित्यमखण्डञ्चेति अतः वाक्यार्थोऽपि निरवयवः तथैवाण्डश्च। स च वाक्यार्थः ''प्रतिमात्मकः'' इति शाब्दिकजनैः गद्यते। एवञ्च श्रीमन्नागेशभट्टेनापि स्वीये ग्रन्थे ''परमलघुमञ्जूषायाम्'' सुष्ठुरूपेण वाक्यप्रधानता नित्यताखण्डता प्रतिपादित चेति वर्तते।

वर्णस्फोटः, पदस्फोटः, वाक्यस्फोटश्चेत्यत्र वाक्यस्फोटो मुख्यः प्रधानश्च यतोहि वाक्यस्यैव लोकेऽर्थबोधकत्वात् वाक्यनैवार्थसमाप्तेश्चेति।

''पदसमूहोवाक्यमर्थसमाप्तौ''[1]– न्यायभाष्यकारः।

अर्थात् पदानां तत्समूहः यः निराकांक्षज्ञानप्रतिपादने समर्थः भवति तदेव वाक्यं भवतीति। अन्यस्फोटापेक्षा वाक्यस्फोटरेव मुख्यः हि वाक्यव्यवहारे एव शक्तिग्रहः भवितुम् अर्हति। एतेनैव लोकेऽस्मिन् बोधः सञ्जायते। वाक्येनैव अर्थावसानः निराकाङ्क्षज्ञानञ्च भवति।

---

[1] परमलघुमञ्जूषा 3

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"आधुनिकमनोविज्ञानस्य संस्कृतवाङ्मयनिहितविज्ञानैः सह सम्बन्धः"

डॉ0 दिवाकरमिश्रः
सहायकाचार्यः शिचाशास्त्रविभागीयः
जरारासंविवि जयपुरम

प्राग्वैज्ञानिककाले दर्शनशास्त्रस्याङ्गत्वेन प्रसिद्धस्य आधुनिकमनोविज्ञानस्य स्वतंत्रवैज्ञानिकस्वरूपनिर्धारणे 'विलहेल्म वुण्ट' महोदयैः स्थापितायाः प्रथममनोवैज्ञानिकप्रयोगशालायाः महद्योगदानमिति सर्वैः समालोचकैरङ्गीक्रियन्ते।

वस्तुतः, विज्ञानं एका पद्धतिः मन्यते नहि विषय–विशेषः। एतदर्थमेव दर्शनशास्त्राश्रयात् बहिरागते सति अस्य आधुनिकमनोविज्ञाननामकस्य विज्ञानस्यापि स्वरूपप्रकृतिक्षेत्राध्ययनपद्धत्यादीन् उद्दिश्य विविधाः परिभाषाः कृताः तत्तदाधुनिकैः मनोवैज्ञानिकैः। वर्तमानसमये एतदाधुनिकमनोविज्ञानं तत् विज्ञानं मन्यते, यत्र प्राणि–व्यवहाराणां मानसिक–क्रियाणाञ्च अध्ययनं क्रियते। अपरेषु शष्देषु आधुनिकमनोविज्ञाने प्रेक्षणीयव्यवहाराणाम्, मानसिकक्रियाणाम्, दैहिकप्रकियाणाञ्चाध्ययनं चिन्तन–भाव–मूलप्रकृति–वातावरणजन्यानां घटनाञ्च सन्दर्भे क्रमबद्धरीत्या वैज्ञानिकविधिना च क्रियते। अतो अद्यत्वे **मनोविज्ञानं व्यवहारविज्ञानं मानसिक प्रक्रियाविज्ञानञ्चोच्यते**। ध्यातव्यमस्ति यत् व्यवहारे पशुमानवयोः व्यवहारः तथा च मानसिक–प्रक्रियायां चिन्तन–भाव–संवेगादिभिः सह विविधानुभूतिनाञ्चाध्ययनं सम्मिलितं भवति।

एवमाधुनिकमनोविज्ञानस्य वर्तमानकालिकं स्वरूपं मनसि निधाय यदि वयं संस्कृतवाङ्मयनिहितविज्ञानैः सह अस्य सम्बन्धान्वेषणं कुर्मः तु प्राप्नुमः यत्, संस्कृतवाङ्मयनिहितं विज्ञानम् अतीवगभीरतममस्ति उद्देश्यवैभिन्यवशात्। संस्कृतवाङ्मये पारलौकिकोद्देश्यप्राप्तये जीवात्मा – परमात्मा – मन – चित्त – बुद्धि – अहंकारादीनां तत्वानाम् अवबोधाय वैज्ञानिकं चिन्तनं प्राप्यते, येन जनाः मानवजीवनस्यान्तिमपुरूषार्थसाधने समर्थाः स्युः। एतदर्थमेव निखिलेऽपि संस्कृतवाङ्मये मनोविज्ञाननामकः ग्रन्थः नोपलभ्यते अपितु, विविधेषु शास्त्रेषु तत्तद् प्रकरणेषु मनोविज्ञानस्य श्रेष्ठतमं निदर्शनं प्राप्यते। परञ्चाधुनिकमनोविज्ञाने व्यवहारजगति सफलतायै चिन्तन–भाव–संवेग–मूलप्रकृति–बुद्धि–समायोजनादीनां तत्वानां स्वरूपावबोधाय प्रययते, येन जनाः स्व परिवेशे, समाजे, कार्यस्थले वा समायोजिताः स्युः।

उपर्युक्तोद्देश्यगतवैभिन्येऽपि संस्कृतवाङ्मयवर्णित – प्राणिविज्ञान – शारीरविज्ञान – सांख्यदर्शन – योगदर्शन – न्यायदर्शन – वेदान्तदर्शन – गीतादर्शन – सौन्दर्यशास्त्र – सामुद्रिकशास्त्र – तत्वमीमांसा – ज्ञानमीमांसदिभिः सह आधुनिकमनोविाानस्य सम्बन्धः दरीदृश्यते।

वस्तुतः, एतैः संस्कृतवाङ्मयनिहितविज्ञानैः सह आधुनिकमनोविज्ञानस्य सम्बन्धमीमांसैव अस्मिन् शोधालेखे कृता वर्तते। लेखकस्य दृढ़विश्वासोस्ति यत् आधुनिकमनोविज्ञानाध्ययनसरणीमनुश्रृत्य यदि संस्कृतवाङ्मयनिहितविज्ञानाध्यनमनुशंसते तु न केवलं वर्तमानवैश्विकपरिप्रेक्ष्ये संस्कृतज्ञानविज्ञानयोः प्रसारो भविष्यति, अंपितु, अखिलेऽपि विश्वे संस्कारसम्पन्नाः व्यवहारकुशलाश्च जनाः विकसिताः भविष्यन्ति। सहैव आधुनिकमनोविज्ञानस्य स्वरूपविकासोऽपि भविष्यतीति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

श्रीमद्भगवद्गीतायां कर्मयोगविमर्शः

डॉगेह प्रदीप शर्मा

आध्यात्मिक वाङ्मये भागवद्गीतायाः स्थानं असाधारणमपि च आदिस्थानं अलंकरोति । भगवद्गीता एव भारतीयानां आध्यात्मिकतायाः प्रामाणिको ग्रन्थः इति मन्यन्ते । वेदानां अन्तिमभागः उपनिषदः वेदसारज्ञानं ते प्रबोधयन्ति । भगवद्गीता उपनिषदां सारः इति लोकोक्तिः प्रचलति यथा–

सर्वोपनिषदो गावः दोग्धा गोपालनन्दनाः।

पार्थो वत्ससुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ॥

श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहासरूपं पञ्चमवेदं महाभारतं वेदव्यासः लोकहिताय आविष्कृतवान् । सर्वे मानवाः संसारचक्रे निबद्धन्तः आत्मतत्त्वं सम्यक् अवलोकयितुं न समर्थाः। तेषां कृते एव लोकहिते रतः श्रीकृष्णपरमात्मा भगवद्गीतां पेरबोधयत् । अतः भगवद्गीता घोरं संसारसागरं तर्तुं समर्थाः।

एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्तीति श्रुतिमाश्रित्य एकं सन्तं महात्मानं बहुरूपेण प्रपञ्चयति इति प्रपञ्चः–

विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥

इति भगवद्गीता प्रमाणाश्च । इतः पूर्वमेव भगवद्गीता उपनिषत् सारमिति उक्तम् । सम्पूर्ण भगवद्गीता नरनारायणयोः सम्भाषणरूपेण वर्तते । अत्र नरः अर्जुनः, नारायणश्च श्रीकृषणः इति । कुरुक्षेत्रे अर्जुनस्य विषादं दूरीकर्तुं तस्य वास्तविकतत्त्वं संसूच्य अर्जुनस्य अज्ञानं अत्यन्तं शोचनीयमिति निरूपयामास।

कुतस्त्व कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम् ।

अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यम् अकीर्ति करमर्जुनम् ॥

एवम्प्रकारेण सर्वेषां मानवानां अज्ञानं उत्पाठ्य विवेकयुक्तान् कर्तुं प्रयतते स्म ।

भगवद्गीतायां प्रदर्शिताः भिन्नमार्गाः भिन्नमनुष्याणां सुलभोपायमार्गाः न तु वैरूध्यमतानि इति सम्यक् अवगन्तव्यम् । भगवद्गीता कर्म, भक्ति, ज्ञानरूपी त्रीन् मार्गान् उपदिशति । त्रयः मार्गाः अपि अत्यन्ताचरणीयात्मकाः इति वक्तुं शक्यते ।

कर्मयोगं अनुसर्तुं चतुर्विधलक्षणानि आवश्यकमिति विस्तरेण श्रीमद्भागवद्गीतायां प्रतिपादितमस्ति । यथा–

1 स्वधर्माचरणम्–

श्रेयान् स्वधर्मोविगुणः परधर्मास्त्वनुष्ठितात् ।

स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥

2 असक्तबुद्धिः–

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत ।

कुर्याद्विद्वांस्तथाऽसक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

3 कर्मफलत्यागः—

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासात् ज्ञानाध्यानं विशिष्यते ।

ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ॥

4 परमेश्वरार्पणम्—

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्मोग्नौ ब्राह्मणाहुतम् ।

ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना ॥

एवम्प्रकारेण सम्पूर्ण भागवद्गीतायां बहुत्र कर्मयोग विषयक चर्चा प्राप्यते । अस्मिन् शोधपत्रे इतोऽपि भागवद्गीतायां वर्णित कर्मयोगविषयाः वर्णनं कृतो वर्तते । यः वर्तमान समाजस्य कृते दर्पणरूपेण मार्गदर्शनं स्व दर्शनञ्च कारयिष्यति इत्याशयः।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व्याकरणे वाग्विज्ञानस्य उपादेयता

गोविन्द सहाय गौड़
शोधच्छात्रः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्
जयपुरपरिसर

वाचो हि जनानां भावनायाः अभिव्यक्त्यर्थं साधनरूपेण वर्तते। वाचो बहूनि नामानि प्रयुज्यन्ते यथा - ब्राह्मी भारती भाषा गीः वाक् वाणी सरस्वती। वाण्या एव शब्दानां अर्थज्ञानं जायते। ज्ञानस्य स्रोतांसि वेद कथिताः। त एव अस्माकं संस्कृतेः आदर्शभूताः सन्ति। वेदाङ्गेषु व्याकरणस्य वेदमुखत्वेन प्रयोगो भवति मुखेनैव शब्दाभिव्यक्तिः जायते। तेन व्याकरणं भाषाशास्त्रं गदितम्। अस्मिन्नेव वाग्विज्ञानम् अन्तर्निहित वर्तते। वाणी लोकव्यवहारं प्रवर्तयति। सा एव वाक्तत्त्वरूपेण जगति प्रतिष्ठिताऽस्ति। यदि शब्दरूपा वाक् न स्यात् तर्हि जगदिदमन्धंतमसि निमज्जेत्। वाण्या सत्यवर्त्मनि प्रतिष्ठा जायते। सा ज्योतिरूपेण संसार द्योतयति।

यथोक्तं दण्डिना –

'इदमन्धंतमः कृत्स्नं जायते भुवनत्रयम् ।यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।।'[2]

भाषायाः शुद्धये वाग्विज्ञानस्य ज्ञानम् आवश्यकं भवत्येव। न हि वाग्विज्ञानस्य ज्ञानेन अज्ञः साधून् शब्दान् प्रयोक्तुं शक्तः। सार्थकशब्दानां समष्टिप्रयोगः वाग्विज्ञानस्य मुख्यो विषयः। व्याकरणशास्त्र वाग्विज्ञानं प्रतिपादयति।

पतंजलिना वाचः सन्दर्भे कथितम् –

'चत्वारि शृङ्गाः त्रयोऽस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्ता सोऽस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महोदेवो मर्त्यां आविवेश।।'[3]

अस्य वृषभरूपी शास्त्रस्य चत्वारि शृङ्गाणि कथितानि – नाम–आख्यात–उपसर्ग–निपात–रूपाणि त्रिपादोऽस्य भूत–भविष्य–वर्तमानाः। सुप्तिङन्तश्च द्वे शीर्षे स्तः, सप्तविभक्तयश्च सप्तहस्ताः सन्ति। उरसि शिरसि च कण्ठे त्रयो बद्धो वृषभोऽयमस्ति ।

एवंविधव्याकरणज्ञानाद् यो जनोऽनभिज्ञो वर्तते स जानन्नपि न जानाति, पश्यन्नपि न पश्यति शृण्वन्नपि न शृणोति। किंच यो हि जनो व्याकरणशास्त्रज्ञोऽस्ति, तत्सन्निधौ वाणी सुसज्जिता कामिनीव समागत्य सर्वतोभावेन समर्पिता भवति।

भर्तृहरिणा वाक्यपदीये वाचो विषये गदितम् –

वैखर्या मध्यमायाश्च पश्यन्त्याश्चैतदद्भुतम्। अनेकतीर्थभेदायास्त्रय्या वाचः परं पदम् ।।[4]

अर्थात् श्रोत्रयोः विषयरूपत्वेन प्रतिष्ठिता वाक् वैखरी गद्यते । सामान्यजनाः वैखर्याः प्रयोगं कुर्वन्ति वैखरीरूपेण वाक् दुन्दुभौ वेणौ च सन्निहिता वर्तते। तस्याः ध्वनिः विषयत्वेन गृहीतः। मध्यमा वाक् अन्तःसन्निवेशिनी भूत्वा प्राण एव संचरति। मध्यमावाचो नादः स्फोटात्मकः कथितः। सा बुद्धिमात्रोपादान वर्तते। शब्दसाधुत्वज्ञानेन लभ्यमाना पश्यन्ती वाक्। सा एव सूक्ष्मनादरूपेण व्यवस्थिता। भर्तृहरिणा वाच रूपत्रयं स्वीकृतम्। पश्यन्ती परारूपेण शब्दब्रह्मरूपेण च व्यवह्रियते। एवं वाग्विज्ञानस्य प्रतिपादनं बहुभि भाास्त्रवचोभिः कृतम्।

---

2 काव्यादर्शः 1.4

3 ऋग्वेदः 4 58 6 पातंजलमहाभाष्यः

4 वक्यपदीयम् 1 159

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शिक्षायां सूचनाप्रौद्योगिक्याः वैश्विकचिन्तनम्

डॉ हरिओम शर्मा
सहायकाचार्यः, शिक्षाशास्त्र–विभागः
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् जयपुरपरिसरः जयपुरम

परिवर्तनशीलेऽस्मिन् संसारे बुद्धिमान मानवः सम्प्रति अल्पीयसी काले अल्पेनैव श्रमेण पूर्वापेक्षया अधिकफलप्राप्त्यर्थं निरन्तरं प्रयतमानो वर्तते। मानवस्य एतादृशः प्रयासः एव समाजे श्रेष्ठस्थानप्राप्तये तस्य साहाय्यं विदधाति। इदानीन्तनकाले मानवजीवनस्य प्रत्येकपक्षः वैज्ञानिकानुसन्धानैः आविष्कारैश्च प्रभावितो विद्यते। तैः मानवानां दृष्टिरपि वैज्ञानिकी सञ्जाताऽस्ति, तथैव शिक्षाक्षेत्रेऽपि आधुनिकोपकरणानाम् आविर्भावेन शिक्षणेऽपि यान्त्रिकीकरणमुच्यते। अधिकसामर्थ्यलाभार्थं मानवसृष्टा इयं प्रविधिविद्या वैदेशिकी सत्यपि अस्माकं शब्दभण्डागारेजमबीदवसवहल इत्यांग्लशब्दः प्रभावं विस्तारयति। व्यवहारे समुचितपरिवर्तनमेव हि शिक्षणम्। किं नाम व्यवहारः? अत्र शास्त्रीयरूपे अस्य निर्वचनं स्वीकुर्यात् तर्हि नानासन्देहहरणाद् व्यवहारः इति। यथा– कोऽपि कथयति यत् इदं क्षेत्रं मदीयमिति, अन्यः अपि कथयति यत् इदं क्षेत्रं मदीयमिति, अनयोः मध्ये विवादः जायते, अतः विवादशमनार्थं यद् किमपि व्यवहरति, व्यवहार इत्योच्यते। परञ्च शिक्षायाः क्षेत्रे एकोनविंशतिशताब्द्यां मनोविज्ञानस्य यद् स्वरूपमस्माकं पुरतः आगच्छति, तस्मिन् स्वरूपे व्यवहारः एव मानवस्य स्वरूपम् उत कार्यक्षेत्रं निर्धारयति। तत्र पूर्वमपि मनोविज्ञानं आत्मनः विज्ञानं–मस्तिष्कस्य विज्ञानं– चेतनायाः विज्ञानम् इत्यादिषु विविधरूपेषु प्रस्फुरितम्। अन्ते वुडवर्थमहोदयेन प्रतिपादितं यत्– मानवव्यवहाराणाम् अध्ययनमेव मनोविज्ञानं वर्तते। शिक्षणक्षेत्रे मनोविज्ञानस्य ज्ञानमपि अत्यावश्यकं वर्तते, इति अपरा वार्ता यत् शिक्षायाः क्षेत्रे मनोविज्ञानस्य या शाखा विहिता वर्तते, यथा किमपि परिवर्तनमपेक्ष्यते। तत् तु सर्वम् अस्माकं पुरतः अस्माकं व्यक्तित्वस्य आधारभूतदृष्टिकोणमुपस्थापयति। पूर्वमपि कथितं यत् व्यवहारेण एव परिवर्तनं जायते। व्यवहारे परिवर्तनं शिक्षणेन जायते तथा शिक्षणेन खलु अधिगमः भवति। शिक्षणाधिगमप्रक्रियायां जायमानानां समस्यानां परिहारार्थं शिक्षाविद्भिः काले–काले नव–नवविधयः आविष्कृताः वर्तन्ते। एतान् अभिनवविधीन् उपयुज्य शिक्षकाः शिक्षणक्रियां सफलां रुचिकराम् आकर्षिकां च कर्तुं सर्वदा प्रयतन्ते। एतदर्थं शिक्षायां सूचना प्रौद्योगिक्याः प्रभावः परिलक्ष्यते।

साम्प्रतं प्रत्येकं ज्ञानक्षेत्रे निरन्तरविकासत्वात् सर्वत्र दृष्टिः प्रसारयितुं न शक्यते। तदनुगुणैव अल्पेनैव श्रमेण अल्पीयसी काले बहून् विषयान् ज्ञातुं सम्प्रयते मानवः। न केवलं ज्ञानप्राप्तिक्षेत्रे अपि तु शिक्षणस्य, शिक्षणदानस्य क्षेत्रे पूर्वोक्तरीत्या अल्पश्रमेण अल्पसमये च बहुषु छात्रेषु अधिगमोत्पादनं कर्तुं प्रयतते। एतत् सर्वं समाधातुं प्रविधिरेव प्रभवति। वैषयिकज्ञानकौशलम् इत्यपि इत्यस्य नामान्तरं ज्ञानस्य यान्त्रिकीकरणत्वात् सम्प्रति शिक्षा कठिनत्वेन गोपनीयत्वेन वा नावलोक्यते। मानवसमाजस्य एकैकेन विषयेण सह यन्त्राणि सर्वतोभावेन संश्लिष्टानि सन्ति। परिणामतः जीवनधारणस्य मूल्यमुन्नतं जायमानं वर्तते। आकाशवाणी, ध्वनिपञ्जिका, प्रक्षेपिका, दूरदर्शनं चलचित्रम् इत्यादीनां शिल्पानां साहाय्येन शिक्षायाः मूल्यमद्य समृद्धं जातमस्ति। सर्वोपरि सङ्गणकयन्त्रस्य उद्भावनं, शिक्षाक्षेत्रे तस्य प्रयोगः शिक्षया सह प्रविधिज्ञानं शिक्षादर्शनं शिक्षामापनं मूल्याङ्कनम् इत्यादि शिक्षानीतिवत् शैक्षिकप्रविधिशास्त्रेऽपि सूचनाप्रौद्योगिक्याः वैश्विकचिन्तनं मया अत्र अन्ताराष्ट्रियसङ्गोष्ठ्यां चितम्।।4

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सौरमानसमीक्षणम्

डॉ शिवाकान्तमिश्रः
सहायकाचार्यः, ज्योतिशविभागः,
जगद्गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतवि ववविद्यालयः,जयपुरम्,

ज्योतिषशास्त्रे गणनात्मककालस्य द्विविधत्वमाचार्यैः कल्पितम्। मूर्त्तकालः अमूर्त्तकाल च। अमूर्त्तकालस्यातिसूक्ष्मत्वात् व्यवहारे प्रयोगवाह्यः अर्थात् दैनिककार्याणां सम्पादने न प्रयुज्यते परं स्थूलत्वात् मूर्तकालः व्यवहारोपयोगीः भवति। अस्य स्थूलात्मकस्य खण्डकालस्य नवविधानि मानानि त्रिस्कन्धात्मकज्योतिषशास्त्रस्य सिद्धान्तस्कन्धे भास्करादिभिराचार्यैः कल्पितानि। मीयते अनेन इति मानम् अर्थात् येन मीयते तत् मानम् । अतः येन कालं मीयते तत् कालमानम् । भारतीयसिद्धान्तग्रन्थेषु स्थूलकालस्य नवधा मानानि उक्तानि । यथोक्तं सूर्यसिद्धान्ते –

ब्राह्मं दिव्यं तथा पित्र्यं प्राजापत्यं च गौरवम् । सौर च सावनं चान्द्रमार्क्षं मानानि वै नव ।।

अर्थात् ब्राह्मं, दिव्यं, पित्र्यं, प्राजापत्यं, गौरवं, सौरं, सावनं, चान्द्रं, नाक्षत्रं चेति कालस्य नवधा मानानि सन्ति। मानवव्यवहारे सौरसावनचान्द्रार्क्षेति चतुर्भिरेव मानैः सर्वं कार्यसंचालनं भवति। ब्राह्म–दिव्य–पित्र्य–प्राजापत्यैर्मानैः सर्वदा व्यवहारो न भवति।

चतुर्भिर्व्यवहारोऽत्र सौरचान्द्रार्क्षसावनैः । ब्रार्हस्पत्येनाष्ट्यब्दं ज्ञेयं नान्यैस्तु नित्यशः ।।

नारदमतानुसारं नवविधकालमानेषु सौरसावनचान्द्रनक्षत्रगौरवेति पंचमानानि मानवैः प्रयोज्यानि भवन्ति। तद्यथा –**एषां तु नवमानानां व्यवहारोऽत्र पंचभिः ।**

एषां नवविधकालमानानां प्रमाणं भिन्नं–भिन्नं भवति। एशां गणना मध्यममानेनैव क्रियते यतोहि स्पश्टमानं प्रतिक्षणं विलक्षणं भवत्यर्थात् स्पश्टमानं स्थिरं न भवति। नवविधेषु कालमानेषु सर्वाधिकलघुमानं चान्द्रमानस्य तथा महत्तमं मानं ब्राह्ममानम्। अतः क्रमेण चान्द्रमानं, नक्षत्रमानं, सावनमानं, सौरमानं, पैत्रमानं, गौरवमानं, दिव्यमानं, प्राजापत्यमानं, ब्राह्ममानमिति एतानि नवमानानि उत्तरोत्तराणि महत्तानि भवन्ति अर्थात् चान्द्रमानात् नाक्षत्रमानं, नाक्षत्रमानात् सावनमानं, सावनात् सौरमानं, सौरात् पैत्रं, पैत्रात् गौरवमानं, गौरवात् दिव्यं, दिव्यात् प्राजापत्यं, प्राजापत्यमानात् ब्राह्ममानमधिकं च भवति। एशु नवविधेशु कालमानेषु चतुर्णामेवमानानां चान्द्रार्क्षसौरसावनानां व्यवहारो लोके जायते। कस्य कालमानस्य केषु–केषु कार्येषु लोके व्यवहार इति भास्कराचार्येण उक्तं –

वर्षायनर्तुयुगपूर्वकमत्र सौरान् मासास्तथा च तिथयस्तुहिनांशुमानात् ।
यत् कृच्छ्रसूतकचिकित्सितवासराद्यं तत् सावनाच्च घटिकादिकमार्क्षमानात् ।। सिशिमभलो31

वर्षायनर्तुयुगादिकं सौरमानात् प्रवर्तते अर्थात् रवे चलनादुत्पद्यते, मासास्तिथय च चान्द्रात् अर्थात् चन्द्रस्य गतिवशादुत्पद्यन्ते। घटिकादिकं नाक्षत्रादेव प्रवर्तते। व्रतोपवासचिकित्सितसूतकवासराद्यर्कसावनात् च प्रवर्तन्ते। सूर्यसिद्धान्तानुसारं दिनरात्र्योर्मानं, षड्शीतिमुखानि, अयनद्वयं, विषुवद्दिनं, संक्रान्तेः पुण्यकाल च सौरमानेन प्रयुज्यते।

रवेः एकराशिसंक्रमणकालादपरराशिसंक्रमणकालं यावत् त्रिंशद्भिरंशैरेको सौरमासो भवति। अतः रविसंक्रान्त्युपलक्षिता मेषादयो द्वादशराशय एव द्वादशमेषादय सौरमासाः भवन्ति। सूर्यबिम्बकेन्द्रस्य मेषराशिप्रवे शकालादन्यराशिप्रवेशकालं यावदेकः सौरमासः मेषमाससंज्ञकः। एवमेव यस्मिन् राशौ सूर्यस्य संक्रमणं भवति तस्य राशेः नामानुसारं सा संक्रान्तिः सौरमास च भवति। एकस्मिन् सौरवर्षे मेष–वृष–मिथुन–कर्क–सिंह–कन्या–तुला–वृश्चिक–धनु–मकर–कुम्भ–मीन चैते द्वादशसौरमासैरेकं सौरवर्षं भवति। सूर्ययावता कालेन पूर्वगत्या मेषादयद्वादशराश्यात्मकं भचक्रं भ्रमति तावत्प्रमाणं सौरवर्षमिति । यथोक्तं भास्करेण –**"रवे चक्रभोगोऽर्कवर्षं प्रदिष्टमिति"**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

महाभारतकालीनसमाजः

डॉ लोकेशकुमारशर्मा,
प्राचार्यः,
रविशिक्षकप्रशिक्षणमहाविद्यालयः,
नेवटा, जयपुरम्

रामायणस्यानन्तरं सांस्कृतिकदृष्ट्या सर्वाधिकं महत्त्वपूर्णो ग्रन्थोऽस्ति महाभारतम्। महाभारतं भारतस्य तात्कालीनाः धार्मिक–सामाजिक–राजनीतिक–क्रियाः, मान्यतास्तथा परम्पराः उपस्थापयति। महाभारतस्य विहङ्गमदृष्ट्या अवलोकनेन ज्ञायते यत् तात्कालीनः समाजः रामायणकालस्य समाजस्य अपेक्षया शिथिलव्यवस्थोपेत अभवत्। मनुष्यस्य आध्यात्मिकी वृत्तिः लुप्तप्राया सतां भौतिकवादितां प्रति उन्मुखी सञ्जाताऽभवत्। अहंकारस्य उत्पत्तौ कर्तृभावस्य स्थापनमभवत्। समाजस्य दृढानि सामाजिकबन्धनानि शिथिलान्यभवन्। तत्र सामञ्जस्यं दृष्टं न अभूत्, यद् रामायणकालीने समाजे विद्यमान आसीत्। संक्षेपेण वक्तुं शक्यते यन्महाभारतकालीने समाजे वर्णव्यवस्थायाः शैथिल्यस्य, अनीतेः अवतरणस्य, वैवाहिकसंस्कारस्य पतनावस्थायाः, धर्मस्य स्खलितावस्थायाः, अहन्तायाः चरमसम्रिः आदीनाम् उद्भवः सञ्जात आसीत्। एतत्सन्दर्भाणां परिप्रेक्ष्ये वयं महाभारतकालीनसमाजस्य वर्णनं कर्तुं विचारयिष्यामः।

1 वर्णव्यवस्था

2 आश्रमव्यवस्था

3 सामाजिकबन्धनानां शैथिल्यम्

4 विवाहः

5 स्त्रीणां दशा

6 अनीतेः अवतरणम्

7 धर्मस्य स्खलनम्

8 अहंकारस्य पराकाष्ठा

9 अशान्तेः साम्राज्यम्।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

।।लक्षणाविचारः।।

मदन लाल सूमरा
शोधच्छात्र
साहित्य विभाग
जरारासंविवि

सर्वेष्वपि शास्त्रेषु शब्दार्थयोः सम्बन्धस्वरूपवृत्तिनिरूपणं स्वस्वशास्त्रसिद्धान्तमर्यादानुगुणं क्रियते। अलंकारनये च सा त्रिविधा स्वीकृता अभिधा लक्षणा व्यजंना चेति[5]। तत्र सकेतितार्थगोचरः शक्तयारण्यः अर्थस्य शब्दगतः शब्दस्य अर्थगतो वा सम्बन्धविशेषः अभिधा[6]। शक्यसम्बन्धो लक्षणा[7] इति लक्षणा लक्षणम्। अत्र अभिधावृत्तिबोध्यः अर्थः वाच्यः शक्यश्च कथ्यते। तस्य च शक्यार्थस्य अन्येण तात्पर्यविषयीभूतेन अर्थेन सह सम्बन्धः लक्षणा। स च सम्बन्धः अनेकधा। यथा गगनयां घोषः इत्यादौ शक्यस्य प्रवाहस्य तीरे सामीप्यं सम्बन्धः। मुखं चन्द्रः इत्यत्र सादृश्यं सम्बन्धः एवं तीरे विद्यमानस्य शक्यप्रवाहसम्बन्धस्य एव लक्षणा इति नाम। एवं प्रवाहसम्बन्धितीरमित्याकारकं लक्षणाज्ञानं लक्ष्यार्थस्य तीरस्य उपस्थितौ हेतुः। पुनः तादृशउपस्थितिद्वारा सा लक्षणा गदापदात् तटसम्बन्धितीरविषयकशाब्दबोधे कारणं भवति।

तस्याश्चार्थोपस्थापकरने न केवलम् अन्वयानुपपत्तिः, न वा केवलं तात्पर्यानुपत्तिः बीजम्[8]। तथा हि गडयां घोषः इत्यादिस्थलेषु शक्यतावच्छेदकप्रवाहत्वेन रूपेण लक्ष्यस्य तीरस्य बोधः। यतः प्रवाहत्वव्याप्यस्य शैव्यपावतत्वस्य तीरे प्रतीतिः, तत्र तीरे प्रवाहत्वज्ञानं विना न संभवति। अतः तीरेवृत्तेः घोषान्वयितायाः अवच्छेदकता मुख्यार्थतावच्छेदके प्रवाहत्वे विद्यते एव परन्तु न तत्र अभावः। तात्पर्यविषयान्वयितावच्छेदकताभावः न लक्षणायाः अर्थोपस्थापकत्वे कारणम्।।

गङायां घोषः इत्यत्र मुख्यार्थतावच्छेदकरूपेण प्रवाहत्वेन मुख्यार्थस्य प्रवाहस्य प्रतियोगिकता मीनशैवालाधन्वये, न तु तात्पर्यविषये घोषान्वये। अतः अत्र तात्पर्यविषयघोषान्वये मुख्यार्थतावच्छेदकप्रवाहत्वेन रूपेण मुख्यार्थप्रतियोगिकतायाः अभावः इति उक्तप्रकारं लक्षणासंगतिः। पुनः काकेभ्यो दधि रक्ष्यतामित्यत्र काकस्य दधिरक्षायां सर्वथा अन्वयाभावः, नास्ति। परं काकत्वेन काकस्य दधिरक्षायां नान्वयः अपि तु दध्युपधातकत्वेनैव अन्वयः। एवं च दधिरक्षासम्बन्धस्य प्रतियोगिकता काके, किन्तु प्रतियोगिकतावच्छेदकं न काकत्वम् अपि तु बिडालमूषकादिसाधारणं दध्युपधातकत्वम्। तथा चात्र मुख्यार्थतावच्छेदक कात्वरूपेण तात्पर्यविषयदधिरक्षान्वये मुख्यार्थकाक प्रतियोगिकतायाः अभावः। इत्यंनिरूपित तात्पर्यनुपत्तिरेव लक्षणायाः कारणत्वेवक्ता कस्मिन्नपि (अर्थ) तात्पर्ये किमपि वदेत् यत्र लक्षणोपस्थितिः अनवस्थिता स्थाल्। तस्मात् लक्षणायाः नियामकतया रूढिप्रयोजनयोः एकतरं च तात्पर्यानुपपच्या सह कारणं भवति।
अत्र प्राचीनानाम्–

शब्दण्यापारतो यस्य प्रतीतिस्तस्य मुख्यता।
अर्थावसेयस्य पुनः लक्ष्यमाणत्वमुच्यते।।
शक्यसम्बन्धेन अशक्य (प्रतीति) प्रतिपत्तिः लक्षणा।।
मुख्यार्थबाधात् अन्योऽर्थः यल्लक्ष्यते सा लक्षणा।। इति वृत्तयः।
लक्षणानि न युज्यन्ते। यतः बोधस्य कारणमेव लक्षणादि।।

---
[5] वृत्तिवार्तिकम्,
[6] रसंगधरः द्वितीयपरिच्छेदः
[7] रसंगधरः द्वितीयपरिच्छेदः
[8] रसंगधरः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

न तु तत्स्वरूप एव। प्राचीनास्तु बोधस्वरूपत एव लक्षणां लक्षितवन्तः इति दोषः। यदपि "मुख्यार्थसम्बन्धेन शब्दस्य प्रतिपादकत्वम्"[9] इति वृत्तिवार्तिके लक्षणा लक्षिता तदपि न सङ्च्छते। अत्र आत्माश्रयरूपः दोषः विद्यते। तथाहिप्रतिपादकत्वं नाम प्रतिपत्तिनिष्ठधर्मविशेषः। परन्तु तादृशधर्म विशेषज्ञानं कस्यापि अर्थस्य उपस्थितौ कारणं न भवति। यतः एतत्पदनिष्ठं प्रतिपादकत्वमस्तीत्यनेन ज्ञानेन न कस्यापि अर्थस्य स्मृतिः, तस्मात् कथं नाम प्रतिपादकत्वं लक्षणायाः लक्षणम्? अय यद्युच्येत प्रतिपादकत्वं नाम प्रतिपदच्यनुकूलव्यापारः, स च ज्ञातः सन्नेव उपयुज्यते प्रतिपत्ताविति तथापि मुख्यार्थसम्बन्धेन इति लक्षणघटकतृतीयान्तपदेन शक्यसम्बन्ध एव प्रतिपत्तिहेतुत्वेन विवक्षित इति प्रतीयते। तेन प्रतिपत्तिहेतुभूतया वाक्यसम्बन्ध रूपया लक्षणया प्रतिपादकत्वं लक्षणा इति पर्यवसन्नं लक्षणम्। अत्र लक्षणाज्ञाने लक्षणा ज्ञानस्यैव हेतुत्वात् आत्माश्रयरूपो दोषः।।

इयं च लक्षणा द्विविधा–निरूढा, प्रयोजनवती[10] इति। अनादिप्रयोगप्रवाहवशेन एकवस्तुप्रवणत्वात् शब्दस्य अन्यार्थे रूढत्वम् निरूढा–द्विभेदा चेयम्–अत्र लावण्यातु कूलानुगुणादयः उदाहरणम्। प्रयोजनवती पुनः गौणी शुद्धा इति द्वेधा। गौणी लक्षणा सारोपा साध्यवसाना इति द्विविधा। तत्र विषयविषयिणोः पृथङ्गिर्दिष्टयोः। अभेदः आरोपः। यत्र लक्षणायामारोपः सा सारोपा। अत्र मुखं चन्द्रः इत्यादीनि उदाहरणानि।।

विषयिप्रतिपादकैः चन्द्रादिशब्दैः लक्षणया उपस्थापितानां चन्द्रादिसदृशानाम् अभेदसंसर्गेण मुखादिशब्दोपस्थापितैः मुखत्वादिविशिष्टैः मुखादिभिः अन्वयः। यतः निपातारिक्ततामार्थयोः अभेदातिरिक्तः सम्बन्धः नोपपद्यते। एवमत्र मुखचन्द्रयोः पृथङ्गिर्दिष्टयोः विषयविषयिणोः सादृश्यप्रयोजनात् अभेदान्वयः। अतः अत्र गौणी सारोपा लक्षणा। एवम् अपृथङ्गिर्दिष्टे विषये विषय्यभेदः अध्यवसानम्[11]। साध्यवसानायाः पुरेऽस्मिन् सौधशिखरे चन्द्रराजी विरानते इत्युदाहरणम्। सौधशिखरस्थितौ मुखत्वविशिष्टमुखप्रतियोगिकता अत्र चन्द्रप्रतियोगिकत्वाभावः। चन्द्रत्वेन अत्र मुखत्वविशिष्टस्य लक्षणया बोधात् सौधशिखरस्थिव्यन्वयः।।

शुद्धा पुनः जहरस्वार्था अजहहत्स्वार्था सारोपा साध्यवसाना इति चतुर्विधा। गङ्गायां घोषः इत्यत्र गङ्गापदं प्रवाहरूपं स्मर्थं जहाति लक्षणया तीरं बोधयतीति जहत्स्वार्था इयं लक्षणा। काकेभ्यो दधि रक्ष्यतामित्यत्र काकशब्दः मुख्यार्थात्यागं विनापि दध्युपघातकं सर्वं लक्षयति इत्यत्र अजहत्स्वार्था लक्षणा।।

दर्पणकारैः यल्लक्षणायाः अशीतिर्भेदाः प्रपण्चिताः[12] तत् लक्षणाया विशुद्धस्वरूपविश्लेषणात्मिकया दृष्टया कृताः। काव्यप्रकाश–रसंगधरादिषु तु अस्या द्वित्राधिकदशभेदा एव परिगणिताः। अत्र तु लक्षणाविचारः सर्वथा काव्यचमत्कृतिमाधारीकृत्यैव कृतः। तस्मात् अलंकारशास्त्रोपयोगिन एव भेदा अत्र उक्ताः। अत एव जहदजहत्स्वार्थापि लक्षणा अलंकारशास्त्रे अनुपयोगिनी नात्र आलंकारिकैः सा स्वीत्रिक्यते। निरूढालक्षणाभेदेपि आलकांरिकाणामरूचेः कारणं तस्य चमत्कृत्यनाधायकत्वमेव। निरूढायाः न व्यंजने उपयोगः न वाऽलंकारे।

गौणी सारोपायाः रूपके,"साध्यवसानायाः अतिशयोक्तौ शुद्धा सारोपायाः साध्यवसानायाश्च हेत्वलंकारे, जहत्स्वार्थायाः अत्यन्ततिरस्कृतवाच्यध्वनौ, अजहत्स्वार्थायाः अर्थान्तरसंगमित्वाच्यध्वनौ च उपयोगः।।

---

[5] वृत्तिवार्तिकम्,

[6] काव्यप्रकाशः।

[11] चित्रमीमांसा– रूपकप्रकरणम्

[12] साहित्यदर्पण – द्वितीयपरिच्छेदः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतासाहित्ये नारीणां वैशिष्ट्यप्रतिपादनम्

ममता कुमारी जाट
शोधच्छात्रा
जरारासंविवि

अस्माकं भारतीयानां संस्कृतौ नारीणां भूमिका महत्त्वपूर्णा वर्तते। भारतीयसंस्कृतौ मातृशक्तेः सम्मानमेवं वैशिष्ट्यं वर्तते। यत् अद्यत्वेऽपि भारतीय संस्कृतेर्महत्वं विदेशेऽपि स्वीक्रीयते। एतस्य प्रमुखं कारणं मातृशक्तिसम्मानमेव प्रतिभाति। योषित स्त्री–महिला प्रभृतयः नारी इत्यस्य पर्यायवाचीनः शब्दाः सन्ति। नारीणां स्थानम् अतीव गौरवपदमासीत्। यस्मिन् गृहे योषिताम् आदरः भवति तत्र देवाः निवसन्ति इति अस्माकं स्मृति शास्त्रेषु उक्तमस्ति–

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्रा फला किया:।।"[13]

समाजे एका एव नारी भिन्ना भिन्ना भूमिकासु तिष्ठति। क्वचित् मातृरुपेण, क्वचित् जाया रूपेण, क्वचित् भगिनी रूपेण। परन्तु एतासु भूमिकासु तस्याः मातृ भूमिका सर्वोपरि परिगणिता भवति। पत्नीरूपेण सा गृहस्वामिनी पदमलंकरोत् श्वसुर श्वश्वादिषु तस्या अधिकारो मन्यते स्म।

लोकजीवने यथार्था अर्थवत्तमास्तथैव वेदे स्वगौरवगरिम्णातिस्पृहणीयं श्लाघ्यं च पदम् अलंकुर्वन्त्यो नार्याः कामपि विशिष्टां नान्यदुच्छिष्टां विभामादधाति। तत्र हि 'स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ' इति उक्त्वा ताः सातिशयादरार्हा अमीमनम्। सा एव गृहे लक्ष्मीः सरस्वती, साक्षात् श्री चेति। पारस्करस्तु निजे गृह्यसूत्रे तासां गौरवगाथां सगौरवमघासीत्। मनुरपि विस्पष्टं **नार्यादरमन्वयकल्याणकारणं प्रत्यपीपदत्**[14] । तस्मात् ताः सुवस्त्राभूषणादिभिरलंकरणीयाः।

नारीषु लज्जा–शील–सौन्दर्य–कला–ममता–ज्ञानानि तथा भूतानि भवन्ति यानि जनिजुषां मनांसि विशेषेणाकर्षयन्ति। एतस्य खल्वाकर्षणस्य मूले तासां हार्दिकी विशुद्धिरार्जवं नि छलत्वं च वरीवर्ति, यद्धि समानगुणशीलवन्तं पुमांसमावर्जयति। तदीये रुपसौन्दर्ये मदीयं मोहकत्वं भवति। एतेनात्मातिचुम्बकीयेन आकर्षणेन सौन्दर्यप्रेमिजनाँस्तथैवाकर्षयति यथा सुविकसितानि सुमानि मिलिन्दवृन्दम्। दृष्टेव एतामसौ सहसा एव ब्रवीति–**"अहो लब्धं नेत्रनिर्वाणं"**[15] ।

---

[13]मनु.3/56
[14]मनु.3/56
[15]अभिज्ञान.अंक 3

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वैदिकवाङ्मयेषु नारीणां वैशिष्ट्यप्रतिपादनम्

ममता जाखड़ शोधच्छात्रा (व्याकरणम्)
जरारासंवि जयपुरम्।

ऋग्वेदे बहुत्रेदं विलोक्यते यत् नारी स्वकीयाति उच्चगुणवत्तया मनो–वाक–कामसम्पत्या च कमपिपुमांसम् आकर्ष्टुं क्षमा। तदीया कमनीया तन्वी गात्रयेष्टि, मधुरातिमधुरा कोमलकान्त पदावली च कोकीलकाकलीव सदयहृदयानां सहृदयानां हृदयानि कान्तानां जर्हरतीति। एषैव मेनकेव कौशिकं, उर्वशी, पुरुरवसं, सुजातेव साक्षिणं स्वकटाक्ष आक्षेप मात्रेण मनोमुग्धमनोहरमानसराजहंसीव सहजसरलहृदयमानुषमरालं घर्रटमिव भ्रामयति स्वेच्छया, तथा च मन्त्रः – ''समनेव वपुष्यतः कृणवन् मानुषा युगा।। विदे तन्द्रिदश्चेतनमधश्श्रुतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः''[16]।। ''एयमगन् पतिकामा जनिकामोऽहमागमम्। अश्व कनिकद् यथा भगेनाहं सहागमं''[17]।। यथा प्रधिर्यथोपधिर्यथा नभ्यं प्रधावधि। यथा पुंसो वृषण्यत स्त्रियां निहन्यते मनः। एवा ते अग्न्ये मनोऽधि वत्से निहन्यताम्''[18]।। अयं भावः नारीषु लज्जा–शील–सौन्दर्य–कला–ममता–ज्ञानानि तथा भूतानि भवन्ति यानि जनिजुषां मनांसि विशेषेणाकर्षयन्ति। एतस्य खल्वाकर्षणस्य मूल तासां हार्दिकी विशुद्धिरार्जवं नि''छलत्वं च वरीवर्ति, यद्धि समानगुणशीलवन्तं पुमांसमावर्जयति। तदीये रूपसौन्दर्ये मदीयं मोहकत्वं भवति। एतेनात्मातिचुम्बकीयेन आकर्षणेन सौन्दर्यप्रेमिजनाँस्तथवाकर्षयति यथा सुविकसितानि सुमानि मिलिन्दवृन्दम्। दृष्टेव एतामसौ सहसा एव ब्रवीति – ''अहो लब्धं नेत्रनिर्वाणं''[19]।। उपरि उद्धृते मन्त्रे अनेन भावेन सममिदमपि अभिव्यंजितं यद् बाह्यसौन्दर्य अपेक्षया मनोभित्तिस्थं सौन्दर्यं किमपि विशिष्टं कमनीयं भवति, यद्धि भव्य–विचार–भावावलिभूषितं विशेषेण रारा‍ष्टि। अत एवाह अथर्वागिरसः – नरस्य प्रेमाधिकरणं नारी। सतिस्त्रीयो एको विशिष्टो गुणः, तस्याः पतिर्दीर्घायुर्भवति तदीयं सौभाग्यं च चिरस्थायी भवति। न तत्र क्लिश्नाति वार्धक्यप्रभविष्णुतेति, तथा हि मन्त्रः ''इन्द्राणिमासु नारीषु सुभगामहमश्रवम् नह्यस्या अपरं चन जरसा मरते पतिः विश्वस्मादिन्द्रः उत्तरः''[20]।। अत्र पुरुषस्य बलाबलस्य कारणं नारीति विस्पष्टम्। यदि संयमिनी सा संयमिनं संयुनक्ति तर्हि तयोर्जिवनं दीर्घायुष्ट्वायाव'' यम् उपकल्पते, नो चेत् रुजाक्लिष्टं हतायुष्ट्वा येति ध्रुवम्। नारीणां धार्मिक अधिकाराः कर्त्तव्यानि च।

ऋग्वेदः कल्याणीजाया इत्युक्त्वा नारीन् गृहलक्ष्मी इत्यपि अकथयत्। भाविक बैभवविभाभावितं तद् गृहं संगितस्य मधुरध्वनिभिरध्वनीनवर्गं प्रसह्य कथयति। यतोहि निखिल निजकुल कुलयस्यासौ साम्राज्ञी तस्मात् स्योना स्यात् तस्मै सा सर्वदेति तस्याः कर्त्तवयम्। कुलायिनी पुरंधि कुलपा पभृतिभिः विशेषणैः इममेव आशयं वेदो भूयो भूयः पर्यपूपुषत्। जायदेस्तं इति व्याहृत्य गृहस्य आगर्हान् सर्वान् अधिकारान् तस्यै समार्पिपद्वेदः। वस्त्राभूषणादिभिः विभूषितासौ सर्वागावृता लज्जावती मधुरया भाषया जगजज्जिगीषेत्। कर्मशीला सा सुशीला स्वेन सौशील्येन स्वकुलसाम्राज्यधूरं सहर्षं समुद्वहेत्। वरकन्ययोः परस्परं प्रेम एव उद्वाहाधारः। यथा अभिमतां वृणुते वरो वधं तथैव कन्यापि स्वयं वृण्विताभिष्टं वरम्। अयं तस्याधिकारः। उभयोः उभयं प्रति सम्पूर्णसमर्पणं अन्योन्या अन्वय उन्नयन कारणमितस्था विद्वेषविषं विनाशस्य इति नि'' चप्रचम्। विविधविधान् मतवादान् मतिभेदाँ'' च वदान्यवद् उभौ मिलित्वा समाप्य सुखं लभेताम्।

---

[16]ऋग्.8/62/9
[17]अथर्व.2/30/5
[18]अथर्व.6/70/3
[19]अभिज्ञान. अंक 3
[20]ऋग्.10/86/11

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

।। अथर्ववेदेरोगशमनस्य वैज्ञानिकोपायाः ।।

रामनारायण शर्मा
शिक्षा–शास्त्री द्वितीय–वर्ष
(शिक्षा विभाग)
जरारासंविवि जयपुरम्

अथर्ववेदस्य विषये गोपथ व्राह्मणे कथयति " एतद्वै भूयिष्ठं ब्रह्म यद् भृग्वङ्गिरसः। येङ्गिरसः स रसः। येथर्वाणस्तद् भेषजम्। यद् भेषजं तद् अमृतम् । यदमृतं तद् ब्रह्म " इति (गोब्रा34) अर्थात्– ये भृग्वङ्गिरसः नामनी ऋषी तेषामेव श्रेष्ठ वेदः अस्ति। ये अङ्गिरा सः रसः अस्ति। ये अथर्वाः सः औषधः अस्ति। ये औषधः अस्ति सः अमृतमस्ति। यं अमृतमस्ति सैव ब्रह्म अर्थात् अथर्व नाम वेदः अस्ति अथः अथर्ववेदः अस्तीति। एवञ्च अथर्वपरिशिष्टे वर्णनं वर्तते यत् अथर्ववेदस्य मन्त्राणां प्राप्तिर्भविष्यति तर्हि तिथिः, नक्षत्रम्, ग्रहो तथा च चन्द्रशुद्धीत्यादीनां कस्यापि आवश्यकता नास्ति। यत्–

न तिथिर्न च नक्षत्रं न ग्रहो न च चन्द्रमाः।
अथर्वमन्त्रसंप्राप्त्या सर्वसिद्धिर्भविष्यति।।अप24।।

एवञ्च अथर्ववेदे नैकेषु सूक्तेषु रोगाणां शमनाय चर्चा विहिता । अथर्ववेदे आरोग्यार्थं भगवतः सूर्यस्य स्तवनं कृतम्। अत्र अथर्वगायत्री व्याहृतीनाञ्च महत्वं प्रतिपादितम् सूक्तेषु शारीरिकाङ्गानां यादृशं वर्णनं वर्तते तत्तु शारीरिकविज्ञानस्य उत्तमकालस्य प्रज्ञानं ददाति। तत्र हस्तस्पर्शस्य यादृशं महत्वं प्रदत्तं तत् स्पन्दनचिकित्सायाः (एक्युप्रेशरचिकित्सा) महत्वमनुर्णयति। सर्वे जनाः एवमीहन्ति यत् वयं मृत्युञ्जयाः भवेम।

अथर्ववेदे तत् कृते बहुषु विधयः कथिताः सम्मोहनविद्यायाः जन्म अथर्ववेदकाल एवाभवत्। जलेनामपि बहूनां रोगानां समाधानं अथर्ववेदे कृतम्।

यथा–जल चिकित्सा

आपः हृदयरोगाणां शमनं करोति , आपः सर्वेषां रोगान् हरति। आपः विशेषता अस्ति यत् पदार्थस्य आद्रीकरणं कृत्वा शरीरात् बहिष्करणं करोति आपः यत्राऽपि वसति तत्र आर्द्रता भवति। यत्

1कृणोमि ते प्राणापानौ जरां दीर्घमायुः स्वस्ति। अ8211

2 उदायुषा स्वायुषोदोषधीनां रसेन।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेणसमायुषा।।अ 33110

एवं प्रकारेण अथर्ववेदे विविधमन्त्रैः विविधरोगाणां शमनार्थं वैज्ञानिकोपायाः सन्ति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व्याकरणशास्त्रे आचार्यचन्द्रगोमिनः योगदानम्

फूल चन्द चौधरी
शोधच्छात्रः
जरारासंविवि

व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः अनेनेति व्याकरणम् इत्यनेन परिभाषयानुसारेणयत् शास्त्रेण शब्दानां व्युत्पत्ति अभवत् तत् व्याकरणं कथ्यते । व्याकरणशब्दस्य निष्पत्तिः वि + आङ् उपसर्गाद् पूर्वकं कृ धातोः करणे अर्थे ल्युट् प्रत्ययस्य संयोगेन भवति । साधुत्वशब्दज्ञानाय व्याकरणस्य ज्ञानमनिवार्यः उक्तञ्च भर्तृहरिणा–

साधुत्वज्ञानविषया, सैषा व्याकरणं स्मृतिः।

व्याकरणशास्त्रे अष्टौ आचार्यपरम्पराणां उल्लेखः साम्प्रति प्राप्तवन्तः तद्यथा–

इन्द्रश्चन्द्रः काशकृत्स्नापिशली शाकटायनः।

पाणिन्यमर जैनेन्द्रा जयन्त्यष्टादि शाब्दिकाः॥

उपर्युक्तं यत् अष्टौ व्याकरणशास्त्रस्य उल्लेखः तस्यैव द्वितीय चन्द्रः अर्थात् चान्द्रव्याकरणस्य कर्ता आचार्य चन्द्रगोमि अस्ति । अस्यैव आचार्यस्य व्याकरणे क्रियमाणस्य योगदानस्य विवेचनं मम निबन्धस्य निष्कर्षोऽस्ति । वाक्यपदीयस्य रचनाकारस्य भर्तृहरिणः मतेन चान्द्रव्याकरणस्य कर्ता चन्द्राचार्यः अस्ति । उक्तञ्च–

पर्वतादागमं लब्ध्वा भाष्यबीजानुसारिभिः।

स नीतो बहुशाखत्वं चन्द्राचार्यादिभिः पुनः॥[21]

एतदतिरिक्तं पुरूषोत्तमदेवः, उज्ज्वलदत्तः, पृथिवीश्वरः, वर्धमान इत्याद्याचार्याणां अनुसारेण चान्द्रव्याकरणस्य रचनाकारः चन्द्रगोमी एव अस्ति । सर्वगुणसम्पन्नः एकः प्रतिभा सम्पन्नः आचार्यः आसीत् । आचार्यचन्द्रगोमी बौद्धधर्मेण सम्बद्धः आसीत् । अस्य विषयस्य प्रमाणस्वरूपं द्वादश प्रमाणानि प्राप्तनि । तेषु प्रमाणेषु प्रमुखानि प्रमाणानि अधोलिखितानि सन्ति । यथा–

1 सिद्धं प्रणम्य सर्वज्ञम् (प्रतिज्ञावचनम्)
2 नमो बुद्धाय नमो मञ्जुशेषाय नमो मृत्युजिते (चाधा)
3 नमो मञ्जुद्घोषाय (चाउसू)
4 निर्वाणो भिक्षुः (चावृ६/३/८६)
5 जिनो भगवान् बुद्धः (चाउसू१/८६)
6 तारा भगवती (चाउसू१/६४)

एतद् प्रमाणेन स्पष्टं भवति यत् आचार्यः चन्द्रगामी बौद्धधर्मस्य आचार्यः आसीत् । आचार्येण चन्द्रगोमिना विरचिते चान्द्रव्याकरणे षडध्यायाः एवञ्च चतुर्विंशति पादाः सन्ति। परञ्च स्वरवैदिकप्रकरणेन सप्त अष्टौ द्वौ अन्या अध्यायौ अपि स्वीचकार ।

चान्द्रव्याकरणस्य मुख्यतया (विशेषता) महत्त्वं अधोलिखितं वर्तन्ते–

1 लाघवम् 2 विस्पष्टता एवञ्च 3 सम्पूर्णता

1 लाघवम्–

एकस्यैव विषयस्य अर्थसम्पादनसमये यदा कदा लाघवस्य, गौरवस्य आश्रयः सम्भवति, अस्मिन् विषये महाभारते श्रीकृष्णद्वैपायनव्यासेन उक्तम्–

विस्तीर्य हि महज्ज्ञानमृषिः संक्षेपतोऽब्रवीत् ।

इष्टं हि विदूषां लोके समासव्यासधारणम् ॥[22]

---

[21]वाक्यपदीय.२/४८३

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लाघवं द्विधा भवति शब्दलाघवम् अर्थलाघवञ्च । शब्दलाघवे न्यूनातिन्यूनशब्द–माध्यमेन अभीष्ट अर्थानां सम्पादनं भवति । परञ्च अर्थलाघवेन शब्दानां प्रयोगः अपेक्षाकृतमधिकं भवति। आचार्यचन्द्रगोमिनः व्याकरणशास्त्रे लाघवस्य प्रयोगः षडविंशति प्रकरणे कृतः । तद्यथा–

पाणिनीयव्याकरणस्य तुलना चान्द्रव्याकरणेन सह–

क्र	पाणिनीयव्याकरणे (लाघवः)	चान्द्रव्याकरणे (लाघवः)
1	अकः सवर्णे दीर्घः	अकोऽकि दीर्घः
2	तस्माच्छसो नः पुंसि	शसो नः पुंसि
3	तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य	सप्तम्यां पूर्वस्य

चान्द्रव्याकरणं असंज्ञकम् अस्ति । आचार्यचन्द्रगोमिनः स्वव्याकरणशास्त्रे संज्ञासूत्राणां निर्माणं न कृतवन्तः परञ्च संज्ञाशब्दानां विना व्याकरणशास्त्रस्य रचना सम्भवति अतः आचार्येण लोकप्रसिद्धमनेकं संज्ञानां प्रयोगं कृतवान् परञ्च संज्ञार्थ सूत्रनिर्माणं न कृतवान् ।

2 विस्पष्टता–

सूत्रलक्षणे सर्वप्रथमं उक्तं अल्पाक्षरत्वं परञ्च सूत्रं सर्वदा अल्पाक्षरत्वे सति सन्दिग्धरहितं सारवदेव भवितव्यम् । सारवदेव अर्थो हि शब्दस्य प्राणभूतः विस्पष्टता तु अर्थस्य जीवनः अस्ति। महाकविभारविना वाग्मी जनः उक्तः चतुर्धा वाग् विभक्ता । उक्तञ्च–

स्फुटता च पदैरपाकृता न च न स्वीकृतमर्थगौरवम् ।
रचिता पृथगर्थता गिरो न च सामर्थ्यमपोहितं क्वचित् ॥

एतदेव स्पष्टं स्फुटता, अर्थगौरवं पृथगर्थता एवञ्च सामर्थ्ययोगा च गिरां सुशोभितं एतद् कारणादेव आचार्यचन्द्रगोमिनः मंगलाचरणे क्रियमाणप्रतिज्ञानुसारेण विस्पष्टतार्थकविधायकं सूत्राणां रचनायाः प्रयासः कृतवन्तः। विस्पष्टता कारणादेव चन्द्रगोमिनः पाणिनेः सूत्राणामपेक्षा यत् परिवर्तनं कृतवान् ।

महर्षि पाणिनिना प्रतिपादितानां शब्दानां विस्पष्टार्थकमाध्यमेन सम्पादितः किञ्चित् प्रधानानां वा सरससरलशब्दानां प्रयोगः अधोलिखितः वर्तन्ते ।

क्र	पाणिनीय	आचार्यचन्द्रगोमिनः
1	प्रत्यवसाने (३/४/७२)	आहार (१/२/७१)
2	निगरणम् (१/३/८७)	आहार (१/४/३६)
3	उपसर्जनम् (४/१/५४)	अप्रधानम् (२/३/६१)
4	गन्धनम् (१/२/१५)	सूचना (५/३/४७)

3 सम्पूर्णता–

चान्द्रव्याकरणस्य त्रिविधविशेषतानां अन्तिमो यो सः सम्पूर्णता अस्ति । आचार्यचन्द्रगोमी बौद्धधर्मस्यास्ति यो दर्शनशास्त्रानुसारेण नास्तिकदर्शनमस्ति । परञ्च आचार्यः स्व व्याकरणशास्त्रे स्वरवैदिकशब्दानां अथवा लौकिकमलौकिकं शब्दानां प्रयोगः कृतवान् । अतः स्पष्टमभवत् चान्द्रव्याकरणं सर्वविधशब्दानां साधुत्वज्ञानाय सम्पूर्णतां याति।

---

[22]महाभारत.१/१/५३

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म

डॉ प्रशान्त शर्मा

आधुनिककाले जनाः यज्ञकर्मणो विमुखाः दृश्यन्ते, अज्ञानवशाच्च यज्ञेन न कोऽपि लाभः इति मुहुर्मुहुः जल्पन्ति। वस्तुतः यज्ञस्य आध्यात्मिकदृष्ट्या लाभस्तु सर्वजनविदित एव यथा–**यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म, यज्ञो वै विष्णुः, विष्णुर्वै यज्ञः, स्वर्गकामो यजेत्, अग्निष्टोमेन यजेत स्वर्गकामः** इत्यादिवचांसि यज्ञस्य आध्यात्मिकं महत्वं प्रतिपादयन्ति। निष्कामकर्मणः सर्वप्रथममुदाहरणं वर्तते यज्ञः। परमात्मनः प्राप्तेः कृते समर्पणभावनां तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः सूचयत्ययं यज्ञः। ईश्वरविरचितमिदं जगत्, तस्य स्मृतिं कारयत्ययं यज्ञः। इत्थम् आध्यात्मिकष्ट्या बहवो लाभाः सन्ति यज्ञस्य।

वैज्ञानिकदृष्ट्याऽपि यज्ञस्य लाभ इतो प्यधिको वर्तते। यस्मिञ्जगति वयं जीवामः तत् परितः स्थितमावरणं पर्यावरणं कथ्यते। पर्यावरणाय यज्ञस्य सर्वाधिका उपयोगिता भवति। वायुमण्डले ऑक्सीजेन तथा कार्बन डाइऑक्सइड इति वाय्वोः सन्तुलनं यज्ञमाध्यमेन संस्थाप्यते इति बहुविधपरीक्षणैः वैज्ञानिकाः साधितवन्तः। एताः प्राकृतिकाः विसङ्गतीः दूरीकर्तुमस्माकं प्राचीनर्षयः पृथ्वीअन्तरिक्षद्युलोकस्थितं पर्यावरणं सन्तुलयितुं प्राकृतिकशक्तीनां गहनमध्ययनं कृत्वा देवतारूपेण ताः स्वीकृतवन्तः। एताः देवरूपशक्तीः यथावत् स्वानुकूला निर्मातुम् ऋषयः नानाकर्मभिः तासाम् आराधनां कृतवन्तः। तेष्वेव कर्मसु यज्ञोऽपि श्रेष्ठतमकर्मरूपेण मन्यते। पर्यावरणशुद्धेः अभिन्नङ्गत्वेन ऋषयः मानवस्य दिनचर्यायां यज्ञकर्मणः अनिवार्यत्वं प्रतिपादितवन्तः।

अयं यज्ञः वेदे भुवनस्य नाभिरूपेण कथितः अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः। ब्रह्माण्डस्य केन्द्रबिन्दुः उद्गमस्थलं यज्ञो वर्तते । शतपथब्राह्मणानुसारम् ऋतशब्दः यज्ञस्य पर्यायो वर्तते। अस्मिन्नेव ऋते सम्पूर्णञ्जगद् नियन्त्रितं भवति। गीतायां ब्रह्मरूपेण चेद् ब्राह्मणग्रन्थे सार्वभौमसत्तारूपेण अयं यज्ञः स्वीक्रियते। सम्पूर्णजगतः सत्ता अस्मिन्यज्ञे निहिता, सृष्टेः अन्ते अयमेव अवशिष्यते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मयूखकारमते श्राद्धलक्षणम्

पुनित शर्मा
शोधच्छात्र
जरारासंविवि, जयपुर

मयूखकारेण लक्षणाध्याये श्राद्धस्वरूपं सुस्पष्टीकृतं कथितं च मृतोद्देश्यकोविप्रस्वीकारांकोद्रव्यत्यागः श्राद्धम्। द्रव्यत्यागादेवद्रव्यदेवतासंयोगेनेन्द्रोध्वोध्वरः।

नममइत्युच्चारणमाचारात्सर्वे। ग्रन्थकारः एनं प्रलापं एव कथयति आचरणाभावात्। त्यागस्तु मनसा एव भवति। नीलकण्ठः विप्रस्वीकाराकत्वं आवश्यकं मन्यते। केचन्पिण्डदानम् अग्नौकरणमपिप्राधान्यं सिद्धिः मन्यते। आपस्तम्बसूत्रे पितरोदेवताब्राह्मणस्तुआहवनीयार्थः। ब्रह्माण्डपुराणस्य उदाहरणश्लोके-पितृनुद्दिश्यविप्रेभ्योदत्तं श्राद्धमुदाहृतम् तदापित्रुद्देश्यकान्नत्यागरूपत्वात्विप्रभोज–पिण्डदानयोः एवप्राधान्यम्।

ग्रन्थकारः कथयतियत्संक्रात्त्यादिश्राद्धेषु कदाचित्पिण्डदानं प्राच्यैः निषिद्धं वृद्धयादिश्राद्धेषु पिण्डदानोऽपिन भवति। तस्माद्श्राद्धे पिण्डदानं गौणताममिहितंगौणतां भवति। विप्रस्वीकारकाको द्रव्यत्याग एव श्राद्धे प्राधान्यम्। अत्र कर्कानुयायिनां मतमपि उल्लिखितम्कृतम्। पिण्डदानमेवप्रधानंनान्नत्यागः परञ्चनीलकण्ठभट्टः विप्रस्वीकारकत्वं द्रव्यत्यागः एवंप्रधानश्राद्धलक्षणं मन्यते।

अतएव मयूखकारः श्राद्धलक्षेण विप्रभोजनं वा विप्रस्वीकारत्वेन द्रव्यत्यागस्य एवं प्राधान्यं मन्यते। यथा आमन्नश्राद्धं, हेमश्राद्धं अपिविप्रस्वीकारकत्वेन एव भवति। अपिचेत्दर्भबटवोऽपिश्राद्धस्थाने संस्थाप्य विप्रभोजनं आवश्यकं भवति, तेषांमते दर्भबटवोऽपि विप्राणां प्रतिनिध्यत्वमावहन्ति। यदि विश्वेदेवानां आवाहनेचत्रिदैवत्यं, षट्देवत्यं, नेवदैवत्यं, द्वादशदैवत्यं वा प्रत्यक्षनिमंत्रणपूर्वकविप्रान्संस्थाप्य श्राद्धं कुर्वन्ति तर्हि विप्रस्वीकारांको द्रवत्यागस्तु सर्वथा समीचीनः एव।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

काव्यप्राणमयमौचित्यम्

पुष्पा कुमारी झांझडिया
शोधच्छात्रा
साहित्य–विभाग
जरारासंविवि, जयपुर

आचार्यक्षेमेन्द्रेण विविधसाहित्यिकविधासु चत्वारिंशदधिकग्रन्थाः विरचिताः। तेषु काव्यालंकारविवेचनायुतो ग्रन्थः कविकर्णिकेति रचितः। तथा काव्यदोषादिसम्बद्धः काव्यालंकारनामकः ग्रन्थः विरचितः। एतेषां ग्रन्थानां रचनानन्तरमाचार्यक्षेमेन्द्रस्य मनसि विचारागतः गुणालंकारदोषादीनां सम्यग् विवेचनं औचित्यनामकेन तत्त्वेनैव सम्भवति, यच्च चमत्कारमयमास्वाद्यं चारुचर्वणायुतं काव्यस्य जीवितभूतमेव। यदि रसः काव्यस्यात्मा वर्तते, तर्हि रसस्य आत्मा औचित्यमेव–

औचित्यस्य चमत्कारकारिणश्चारुचर्वणे ।
रसजीवितभूतस्य विचारं क्रियतेऽधुना ॥

काव्ये औचित्यानुरूपविधानमावश्यकम्, अन्यथा गुणालंकारादिभिः सुशोभिते सति तत् निरर्थकं मिथ्यापरमेव भविष्यति । यथा–

काव्यस्यालमलंकारैः किं मिथ्यागणितैर्गुणैः।
यस्य जीवितमौचित्यं विचिन्त्यापि न दृश्यते ॥

गुणालंकारेष्वपि तावत् सुन्दरता अभिव्यञ्जिता न भवति, यावद् औचित्यस्य तात्त्विकसञ्चारो न भवति। यथा स्थानभ्रष्टा न शोभन्ते दन्ताः केशा नखा नरा इति कथाश्रुतिरपि पोषयति यदौचित्योल्लंघनं न शोभादायकमिति।

वस्तुतः निष्कर्षरुपेण वक्तुं शक्यते यत् काव्यप्राणमयमौचित्यं विना काव्यसर्जनं निष्प्राणा निष्क्रिया च। यथोक्तम्–

अलंकारस्त्वलंकारा गुण एव गुणाः सदा ।
औचित्यं रससिद्धस्य स्थिरं काव्यस्य जीवितम् ॥

उक्त कथनं आचार्यभरतः, आचार्यभामहः, रुद्रटः, भट्टलोल्लटः, आनन्दवर्धनादयः सुविख्यातसाहित्यकाराः स्वीकृतम् तथा विषयेऽस्मिन् स्व स्व मतमप्युपस्थापितम्।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ऋतुचर्यायाः अस्माकं जीवने प्रभावः

रघुशर्मा
विद्यानिधिः,
जरारासंविवि, जयपुरम्

आयुर्वेदे स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षार्थं ये उपायाः उक्ताः तेषु अन्यतमोऽयम् उपायः ऋतुचर्या ।एवं गण्यन्ते–

मासैर्दिवसङ्ख्यैर्माघाद्यैः क्रमात् षड्तवः स्मृताः।
शिशिरोऽथ वसन्तश्च ग्रीष्मवर्षाशरद्धिमाः ।।

तत्र षष्ठिनिमेषाणाम् एका घण्टा । चतुर्विंशतिघण्टानाम् एकं दिनम् । एकस्मिन् दिने दिवा रात्रिः इति द्वौ भागौ स्तः । सप्त दिनानां सप्ताहः इत्युच्यते । पञ्चदश दिनानाम् एकः पक्षः । द्वयोः पक्षयोः एकः मासः । द्वादश मासानाम् एकः संवत्सरः । द्वयोः मासयोः एका ऋतुः तस्मात् ऋतवः षट् ।

प्रत्येकम् ऋतौ आचरणं भिद्यते, तदेवम् –

हेमन्ते जठराग्निर्बलवान्। स चाधिकमन्नरूपमिन्धनमपेक्षते। अतोऽस्मिन् ऋतौ मधुराम्ललवणरसात्मकानि भोज्यान्यधिकं भोक्तव्यानि। अन्यथा इन्धनाभावादग्निर्धातून्पचति, बलहानिं च जनयति।हेमन्ते निशा दीर्घा। तेन प्रातरेव नरा बुभुक्षवो भवन्ति। अतः प्रातरेव नरैः क्षुधा शमनीया ।रौक्ष्यमधिकमतोऽभ्यङ्गो विशेषतः कार्यः। शैत्याधिक्यमस्त्यतः उष्णजलेनैव स्नान–माचरितव्यम् । अगरु–वचा–हरिद्रासदृशैरुष्णद्रव्यैः शरीरस्योद्वर्तनं कार्यम् । बलमुत्तममस्ति, अतो व्यायामः शक्त्यनुसारमाचरणीयः। शिशिरे हेमन्ततोऽपि शैत्यमधिकं, रौक्ष्यं चाप्यधिकम् । अत एते एव आहाराः विहाराश्च विशेषतः सेव्याः।हेमन्तचर्याया एवातिदेशोऽत्र क्रियते।हेमन्तशिशिरयोः शैत्येन कफसञ्चयो भवति। वसन्ते प्रखरसूर्यतापेन तस्य कफस्य द्रवीभावो जायते। तस्माद्वसन्तारम्भ एव वामकैरौषधैर्वमनं शस्यते। तेन द्रवीभूतः कफः बहिर्निरेति। मस्तकादारभ्य कण्ठं यावत् कफो विशेषेण तिष्ठतयतःकफघ्न–नस्यैश्च तत्रत्यकफस्य निराकरणं कार्यम् । कफप्राबल्यादग्निर्मन्दो भवति। अत आहारो लघुर्भवितुमर्हति। कफविलयनायाग्निबलविवर्धनाय च व्यायामोऽनिवार्यः। रूक्षमुद्वर्तनमङ्गमर्दनं चाप्यनुष्ठेयम्। पानार्थं शुण्ठीसिद्धं खदिरसिद्धं मुस्तासिद्धं वा जलमुपयोक्तव्यम्। मधुसंयुतं जलमपि वसन्ते शस्यते। ग्रीष्मचर्यायां सूर्यातपश्चण्डतरो भवत्यस्मिनृतौ, अतोऽम्ल–लवण–कटुरसा अत्र वर्जनीयाः, आग्नेयत्वात्।मधुरप्रायं लघु, स्निग्धं च भोजनं भवेत् । पानार्थं नवे मृत्कुम्भे स्थापितं जलं प्रशस्तम्। सकर्पूरं सुशीतलं सुगन्धयुतं पानकं मध्यन्दिने पेयम् ।निशि च चन्द्रकिरणैः शीतं ससितं माहिषं क्षीरं पेयम्। गात्रे चन्दनलेपो भवेत्। सूक्ष्मं तनु च वासो धार्यम् । व्यायामो न्यूनतरः स्यात् । वर्षासु नराणां शरीराणि त्रिभिरपि दोषैर्दुष्यन्ति। तत्रापि वातः प्रकुप्यतितराम्। अग्निर्नितरां मान्द्यमुपैति। तस्मादन्नद्रव्याणि प्रभूतसावधानचेतसा भक्ष्याणि। तेन सहैवाग्निदीपनानि पाचनानि द्रव्याणि च सेव्यानि। एकस्माद्वर्षात्पूर्वं जातं धान्यमस्मिनृतौ हिताय भवति। द्विदलेषु मुद्गाः सुखजीर्याः, तसमाद्भक्ष्याः। अन्नस्य रुचिप्रदानकर्मणि सलवणं पञ्चकोलमिश्रितं हि तक्रं प्रशस्यते। वर्षादौ नरशरीराणि वामकरेचकौषधक्षमानि च सञ्जायन्ते। तस्मात्तेषामुपयोगः कार्यः। बृहदान्त्रस्य स्वच्छीकरणाय बस्तिस्वीकरणं भवति। तेन सार्वदेहिकवातस्यापि शोधनं जायते। पानार्थे सुतप्तमम्बु सुखाय भवति। स्नानार्थे शौचार्थे च नित्यमे–वोष्णं जलम् उपयोज्यम्।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दर्शनशास्त्रदृष्ट्या सृष्टिविज्ञानम्

डॉरामेश्वर नाथ द्विवेदी
सहायकाचार्य (दर्शनविभाग)
जरारासंविवि

सृष्टिपदमत्र सृज् धातोः कर्मणि क्तिन् प्रत्यये सति दृश्यप्रपञ्चपरम्। प्रकर्षेण प्रथमतो वा क्रिया प्रक्रिया। सर्वप्रथममुपनिषत्सु वर्णितःसृष्टिक्रमः प्रदर्श्यते। स एव क्रमोऽत्र दर्शनेऽपि प्राधान्येन समादृतोऽस्ति।

उपनिषत्सु अनेकधा सृष्टिप्रक्रिया वर्णितः। तथा हि तस्माद् एतस्माद् आत्मनि आकाशः सम्भूतः, आकाशाद्वायुः, वायोरग्निः, अग्नेरापः, अद्भ्यः पृथिवी, पृथिव्या अन्नौषधयः इत्याकाशादिका सृष्टिः। प्रलये बहुकालातिक्रमोत्तर प्राणिनां मायानिलीनादृष्टपरिपाकाद् मायावृत्तिरूपे क्षणसम्पन्नादात्मनः आकाशः सम्भूतः।

लयः प्रधानविक्षेपशक्तिमद् अज्ञानोपहितचैतन्यादाकाशादि सृष्टिः उत्पद्यते। सत्त्वरजस्तमांसि कारणगुणप्रक्रमेण आकाशादि उत्पद्यन्ते । अर्थात् कारणस्याव्याकृतस्य चे गुणाः सत्त्वादयः तेषां प्रक्रमेण तान् गुणानारभ्य यथाकार्य क्रमं सत्त्वादिगुणाः सहैव कार्यः तेषु उत्पद्यन्त इत्यर्थः।

अद्वैतवेदान्ते आत्मनो नित्यत्वेनैकरूपस्य परिणामासम्भवात्। किन्तु अत्र अज्ञानोपाधिरूपत्वात् जगतः विवर्तरूपेण सम्भवति। सर्वप्रथमं सूक्ष्मशरीराणि सप्तदशावयवानि लिंगशरीराणि जायन्ते। अवयवास्तु द्रियपञ्चकं, बुद्धि, मनसी, कर्मेन्द्रियपञ्चकं, वायुपञ्चकं चेति। ज्ञानेन्द्रियाणि आकाशादीनां सात्त्विकांशेभ्यो व्यस्तेभ्यः पृथक् पृथक् क्रमेणोत्पद्यन्ते। कर्मेन्द्रियाणि वाक्पाणिपादपायूपस्थाख्यानि आकाशादीनां रजोऽशेभ्यो व्यस्तेभ्यः पृथक् पृथक् क्रमेणोत्पद्यन्ते। स्थूलमतानि तु पञ्चीकृतानि। तमोगुणयुतेभ्यः पञ्चीकृतभूतेभ्यः चतुर्दशभुवनात्मकब्रह्माण्डस्य जरायुजादि चतुर्विधस्थूलशरीराणां चोत्पत्तिः।

न्यायवैशेषिकमतानुसारेण प्रलयकाले धर्माधर्मसंस्कारानुविद्धान् जीवात्मनः मोक्षमलममानान् दृष्ट्वैष भगवान् करूणापरवशः धर्माधर्मसंस्कारक्षायार्थं सुखदुःखपरिपूर्ण जगदिदं सृजति। जगतसृजनस्य प्रयोजनम् गौणमस्ति भोगः जीवात्मानाम्। वैशेषिकमते अयं ईश्वरः जगतः स्रष्टा निमित्तकारणमस्ति। जगतोऽस्य परमाणवः समवायिकारणभूताः, परमाणूनां संयोगोऽसमवायिकारणम्, ईश्वरश्चास्य जगतः निमित्तम् अयमधिष्ठाता परमाणूनाम् अन्यथा सर्ग एव न स्यात्। अचेतनानां चेतनमधिष्ठातारमन्तरेण प्रवृत्तेरसम्भवात्।

सांख्यदर्शनानुसारं सृष्टेः प्रयोजनं पुरूषस्य कृते भोगापवर्गयोः संसिद्धिः एव। अतः भोगापवर्गौ एतौ परमपुरूषार्थौ स्तः। साख्यमते सर्वप्रथमं प्रधानाद् महत् तत्त्वमुपजायते, तदनन्तरं महत्तत्त्वमपि अहंकारमुत्पादयति एवं च अहंकाराद् पञ्चज्ञानेन्द्रियाणि, पञ्चकर्मेन्द्रियाणि, पञ्चतन्मत्राः, मनश्च षोडशगणाः उत्पद्यन्ते। तदेव सम्भूय षोडशतत्त्वानां समूहः जातः। ततश्च पञ्चतन्मात्रेभ्यः पञ्चमहाभूतानाम् उत्पत्तिः जायते। सांख्यशास्त्रे एवमेव सृष्टिप्रक्रिया सम्भवति।यथा

प्रकृतेः महांस्ततोऽहंकारः तस्माद् गणश्च षोडशकः।

तस्मादपि षोढशकात् पञ्चभ्यः पञ्चभूतानि॥ सांकारिका२२

वाक्यपदीयविधात्रा श्रीहरिणाऽपि अनादिनिधनं व्यापकं चिद्रूपं वेदान्तवेद्यं यद् ब्रह्म तदेव **वाग्वै ब्रह्म** इत्यादि श्रुतबलेन शब्दरूपतयाऽभ्युपेत्य तत्र जगतो विवर्तोपाद्यनत्वमेवा विद्याशक्तिसहकृतकालशक्तेश्च सस्कारित्वं सिद्धान्तितम्। तथा चोक्तम्

अनादि निधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वं यदक्षरम्।

विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः॥

श्री नागोजिभट्टेन उक्तं यत् प्रलये नियतकालपरिपाकां सर्वप्राणिकर्मणामुपभोगेन प्रक्षये सर्वं जगद् मायायां लीयते। सा च चेतनेश्वरे लीयते। ततोऽपरिपक्वप्राणिकर्मभिः कालवशात् प्राप्तपरिपाकैः स्वफलप्रदानाय भगवतोऽबुद्धिपूर्विका सृष्टिर्मायापुरुषौ प्रादुर्भवतः। ततः परमेश्वरस्य सिसृक्षात्मिका मायावृत्तिर्जायते। ततो बिन्दुरूपमव्यक्तं त्रिगुणं जायते। इदमेव शक्तितत्त्वम्। एवं प्रकारेण संक्षेपेण दर्शनशास्त्रेषु सृष्टिविषयकं मतमस्ति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

महर्षिपाणिनिशास्त्रव्याकरणाध्ययनफलम्
(आलेखसारांशः)

डॉ प्रमोदकुमारशर्मा,
व्याकरणविभागाध्यक्षचरः
सहाचार्यो व्याकरणविभागे,
जगद्गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालये, जयपुरे

"आलेखेऽस्मिन् पाणिनिव्याकरणशास्त्रस्य फलविषयकचिन्तनं लिखितमस्ति। महर्षिपाणिनिशास्त्राध्ययनेन न केवलं संस्कृतभाषाज्ञानमपितु शास्त्रपूर्वकशब्द प्रयोगादभ्युदयनिश्श्रेयससिद्धिरपि भवति। यद्यपि पाणिनीयव्याकरणाध्ययनस्य बहूनि प्रयोजनानि महाभाष्यकारेण पतञ्जलिना पस्पशाह्निके महाभाष्ये प्रोक्तानि तथापि वाक्यपदीयादिदार्शनिकग्रन्थेषु शब्दब्रह्मणः स्वरूपं तथा तत्प्राप्तिरूपमोक्षप्राप्तिः प्युपदर्शिताऽस्ति। व्याकरणज्ञानाद् शब्दसाधुत्वासाधुत्वबोधोत्पत्तिरूपफलं तु लौकिकमस्ति किन्तु परमपुरुषार्थमोक्षफलप्राप्तिरपि पाणिनीयव्याकरणज्ञानाद् भवतीति सप्रमाणमत्रालेखे संसाधितमस्ति।"

पाणिनिशास्त्राध्ययनफलकथनावसरे इत्थमेव प्रतिपाद्यते यत् महाभाष्यप्रतिपादितमुख्यानुषङ्गिकप्रयोजनरूपफलेभ्योऽतिरिक्तं व्याकरणशास्त्रस्य साधुत्वासाधुत्वान्वाख्यान प्रथमं प्रत्यक्षम्फलं दृश्यते। अतः एव महावैयाकरणभर्तृहरिणा वाक्यपदीये निगदितं यत् शब्दस्य द्वे रुपे स्तः शब्दत्वं साधुत्वं च। तत्राद्यस्य श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यत्वेऽपि द्वितीयं व्याकरणादेव गृह्यते न तु श्रोत्रात्, अन्यथा अनधीतव्याकरणकोऽपि प्रतिपद्येत। एकस्मिन्नेव गोरुपेऽर्थे गोत्वजातिनिमित्तेन गोणीशब्दोऽसाधुः, आवपन सादृश्यात् प्रयुक्तः साधुः, इत्येवम्भूतशब्दार्थसम्बन्धस्य निमित्तं प्रवृत्तिनिमित्तं तस्य अविपरीतं तत्त्वम् साध्वसाधून्, एवम् अयं शिष्टः साधुशब्दप्रयोक्तृत्वात्, इत्येवमनुमितान् शब्दान् तान् विशिष्टांश्च अवैयाकरण कथं ज्ञातुं समर्थो भविष्यति।

प्रतिपदोक्तशब्दपारायणस्तु, अत्यन्तकृच्छो मार्गः इति भगवता पतञ्जलिना प्रथमाह्निके महाभाष्ये निगदितम्। साधुशब्दान्वाख्यानञ्च पुण्यजनकमिति प्रोक्तं महाभाष्ये पतञ्जलिना।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतवाङ्मये वैज्ञानिकचिन्तनपरम्परा

सुरेन्द्र सिंह बैरवा
प्रशिक्षितस्नात्तकशिक्षकः (संस्कृतम्)

संस्कृतस्य स्वरूपम्–

किं नाम संस्कृतमिति जिज्ञासितं चेत् परिष्कृतं, परिशुद्धं, व्याकरणादिदोषरहितं यत् तत् संस्कृतम्। प्राचीनैः ऋषिभिर्मुनिभिश्च भाषागतदोष–परिष्कारेण,अपशब्दादिदोषवारणेन या परिष्कृता भाषा व्यवहृतिमानीता सैव संस्कृत–भाषा–नाम्ना सम्बोध्यते, प्रशस्यते,आद्रियते च। 'विद्वांसो हि देवाः' विद्वज्जनव्यवहृता चेयं भाषा।

संस्कृतस्य विपुलं साहित्यम्–

भारतवर्षस्य समस्तमपि प्राचीनं वाङ्मयं संस्कृत–भाषामिश्रत्यैवावतिष्ठते। निखिलवैदिकं वाङ्मयं, ग्रन्थाः,दर्शनानि,काव्यानि,आख्यानसाहित्यम्,नीतिग्रन्थादयश्च संस्कृतभाषायामेवोपलभ्यन्ते।नकेवलमतदेव,व्याकरणं,काव्यशास्त्रं,गणितं,ज्योतिषम्,आचारशास्त्रं,काव्यशास्त्रम्,आयुर्वेदः,धनुर्वेदः,वास्तुकलाशास्त्रं,अर्थशास्त्रं,राजनीतिशास्त्रं,ऐतिह्यम्,छनदःशास्त्रं,कोषग्रन्थाश्च संस्कृतभाषाया गौरवमभिवर्धयन्ते। ज्ञानस्य विज्ञानस्य न तादृशं किमप्यङ्गम्,यन्नैवौपलभ्यते संस्कृतभाषायाम्।

संस्कृतस्य भाषाशास्त्रीयं महत्त्वम्–

भारोपीयपरिवारे संस्कृतभाषैव प्राचीनतमा। तन्मूलकमेव भाषाविज्ञानस्य उद्भवः। संस्कृतभाषायामुपलब्धं वाङ्मयं भाषाशास्त्रीयां सर्वामप्यावश्यकतां पूरयति। संस्कृतभाषामूलकमेव तुलनात्मकदेवशास्त्रस्योत्पत्तिः। संस्कृतभाषाश्रयेण सर्वा अपि भारतीय भाषाः सारल्येनावगन्तुं पार्यन्ते। यतो हि तत्र प्रतिशतं षष्टि–प्रतिशतादारभ्य अशीतिप्रतिशतं यावत् संस्कृतशब्दाः प्रयुज्यन्ते। जर्मन–फ्रेन्च–आङ्ग्लभाषादिष्वपि महती संख्या संस्कृतस्य तत्सम–तद्भव शब्दानाम्। एवं विज्ञायते यत् भाषाविज्ञान–दृष्ट्या संस्कृतभाषा बहुमूल्यो निधिः।

संस्कृतवाङ्मयः तद्भेदाश्च–

विद्वांसः संस्कृतं द्विविधं विभज्यते । वैदिकसंस्कृतं लौकिकसंस्कृतम् चेति । पाणिन्यादिमुनित्रयनिबद्धं संस्कृतं लौकिकसंस्कृतम्। परन्तु संस्कृतं त्रिविधं भवितुम् शक्यते वैदिकसंस्कृतम्, आर्षसंस्कृतम्, लौकिकसंस्कृतम्। वेदेशु उपनिषत्सु या भाषाप्रयुक्ता सा वैदिकसंस्कृतभाषा। अथ च पाणिन्यादि त्रिमुनिभिः पूर्वं प्रयुक्ता रामायणमहाभारतपुराणादिषु प्रयुक्ता भाषा आर्षभाषा अस्ति अत्र अपाणिनीयाः प्रयोगाः दृ यन्ते ते एव आर्षप्रयोगाः कथ्यन्ते। लौकिकसंस्कृते पाणिन्यादि त्रिमुनिभिः सिद्धानि पदानि प्रयुक्तानि भवन्ति।

संस्कृतवाङ्मये गणितशास्त्रं –

आर्यभटः 499 खोष्टाब्दे पाटिलपुत्रे 'आर्यभटीयम्' लिखितवान्। अस्मिन् ग्रन्थे ज्यामितिप्रकरणे बहुविधवृत्तविशेषाः π मितिः (31416), प्रतिलेखीयज्यामितिः च व्याख्याताः। त्रिकोणमितिरपि वदासम्भवितासीत्। बीजगणिते चतुरक्षरसमीकरणस्य विधिः आर्यभटीयस्य गणितपादे प्रवर्तते।

संस्कृतवाङ्मये आयुर्वेदः –

बहुविधाओषधयः वेदेषुसमाज्ञाता बभूवुः यथा–

याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः।
बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचन्त्वंहसः।। ऋग्वेद 109795

संस्कृतवाङ्मये रसायनविज्ञानम् –

अग्निचूर्णस्य प्रथमोल्लेखः स्पष्टरूपेण वाल्मीके रामायणे वर्तते। तद्यथा–

अग्निचूर्णमिवाविद्धं भास्वराम्बुमहोरगम्।सुरारिविषयं घोरं पातालविषमं सदा।। युद्धकाण्डे 4119

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतवाङ्मये भौतिकविज्ञानम्–

तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य ।विश्वमाभासि रोचनम् ।।

संस्कृतवाङ्मये वनस्पतिविज्ञानम्–

ऋग्वेदानुसारमोषधीनां वैदिकयुगे पर्यालोचनाय वैद्या अवसरं प्राप्तवन्तः। यतः

यत्रोषधीः समग्मत राजानः समिताविव।

विप्रः स उच्यते भिषग् रक्षोहामीवचातनः।। ऋग्वेदे 10976

संस्कृतवाङ्मये प्राणीशास्त्रम् –

सूक्ष्मप्राणिनामस्तित्वं स्पष्टरूपेण महाभारते निर्धारितम्। तथा हि–

सूक्ष्मयोनीनि भूतानि तर्कगम्यानि कनिचित्।

पक्ष्मणोऽपि निपातेन तेषां स्यात् स्कन्धपर्ययः।। शान्ति0 1526

ऋग्वेदानुसारं यन्त्रप्रयोगस्य प्रचलनमासीत्। तद्यथा–

सविता यन्त्रैः पृथिवीमरम्णात् ।101491

संस्कृतवाङ्मये विमानविज्ञानम् –

विमानरचना–विधिः समराङ्गणसूत्रे वर्तते। भारद्वाजेन रचिते वैमानिकशास्त्रे विमानरचना–रीतिवर्तते।

संस्कृतवाङ्मये कृषिविज्ञानम् –

पक्षयोः शोषणं रौद्रे खगानामम्बहुचारिणाम्।

झिन्झीरवतस्थाकाशे सद्यो हि वर्षलक्षणम्।। कृषिपराशरः–70

संस्कृतवाङ्मये परमाणुविज्ञानम् –

जालान्तरगते भानोःसूक्ष्मं यत् दृ यते रजः।

तस्य षष्ठतमो भागः परमाणुः सःउच्यते।।

संस्कृतवाङ्मये संगीतविज्ञानम् –संस्कृतवाङ्मये धातुशास्त्रम् –संस्कृतवाङ्मये यंत्रविज्ञानम्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"संस्कृतसाहित्ये ज्योतिषशास्त्रीयतत्वानि"

सिद्धार्थ उपाध्यायः
(आचार्य प्रथमवर्षम्)
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (केविवि)
(मानितविश्वविद्यालयः)
जयपुरपरिसरः

वेदांगेषु शिखरायितो नेत्रायितश्च ज्योतिर्वाङ्मयविशिष्टः प्रायः सर्वेष्वेव परवर्तिग्रन्थेषु न्यूनाधिकरूपेण प्रतियादितो विद्यते। साहित्यशास्त्रीपकाव्यग्रन्थेष्वपि ज्योतिषशास्त्रस्य नेकविषयाः प्रतिपादिताः सन्ति। प्रायः समेऽपि प्राचीनयरम्परायाः साहित्यकाराः काव्यकारा ग्रन्यकाराश्च स्वीयेषु काव्यनाटकचम्पूगद्यपद्यरचनासु ज्योतिषशास्त्रीयतत्वानि स्वीयोद्देश्यपूर्तये साहाय्सत्वेनांगीकृतवन्तः। नायक– नायिकानां शरीरांगलक्षणविमर्शणावसरे सामुद्रिकशास्त्ररीत्या विवेचन तेषां व्यक्तित्वानां विवेचनं सहजतयेव सह्रदयानां मनांस्याकर्षयति। प्रकृतिनटिविवेचनावसरे सरलतयैव संहिताज्योतिषोक्तविषया प्राकृतिकलक्षणविभ्मर्शाश्च प्रकटिता भवन्ति। घटनाविशिष्टावसरे कार्यविशेषाचरणकाले वा समुचितनक्षत्रग्रहमुहूर्त्तकालानामुल्लेखाः साहित्याचार्याणां ज्योतिर्ज्ञानगौखमनायासेनेव प्रतिष्ठाययन्ति। महाकविमाघस्य शिशुपालवधो भवतु अथवा कालिदासस्य काव्यग्रन्था भवन्तु अथवा कादम्बरी भवतु प्रायः सर्वयैव ज्योतिषशास्त्रीया सामुद्रिक–प्राकृतिक–मौहूर्तिक–सांस्कारिक'ग्रहनक्षत्रग्रहणोल्कातपनेन्द्रधनुषदिग्दाहादयो नैकविषयाः साहित्याचायैः प्रतियादिताः सन्ति। महाभारते त्रयोदशदिनानां पक्षस्य ग्रहणफलस्य पशुपक्षिचेष्टाफलस्य विवेचनं तु प्रसिद्धमेवास्ति। शुकन्तला दुष्यन्त–भरतेन्दुमती–मालविकादिविशिष्टपात्राणां सामुद्रिकारीत्या विवेचनं तु साहित्यकाराणां निधिरेखास्ति। मदीये शोधालेखे विषयेऽस्मिन् इतोऽपि ग्रन्थोद्धरण पुरस्सरं लोकोपकारकं सह्रदयह्रदयावर्जकं च विवेचनं भविष्यतीति शम्।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

गौतम धर्मसूत्रे नारी

कैलाश चन्द्र बुनकर
शोधार्थी
वेद विभाग (धर्मशास्त्र)
जरारासंविवि,
मदाऊ,जयपुर

''अस्वतन्त्रा धर्मे स्त्री'' 1291 पत्यनुसरणं स्त्रीधर्मो वर्तते, सा धर्मे स्वतन्त्रा नास्ति । धर्मसूत्रे नार्याः धर्मस्य मूलमन्त्रं इदमेव सूत्रं वर्तते। स्त्री पत्यौ आश्रिता स्यात्, तस्यानुसरणं च कुर्यात्। अस्मिन् कथने धर्मसूत्राणि कामपि नवीनतां न प्रस्तुवन्ति। गृहकर्मसु धार्मिकक्रियासु च सा गृहिणी , सहधार्मिणी इत्यादिरूपेण गौरवपूर्णपदे प्रतिष्ठिता अस्ति। परन्तु तस्या एतस्य विषये स्थानस्य प्रश्नः अस्ति। तस्या जीवनस्य लक्ष्यं वर्तते, पुत्रस्य सन्ततेर्वा उत्पत्तिः। पुत्रस्य सुयोग्यपुत्रस्य च कामना तस्य अनिवार्यतां च धर्मशास्त्रेषु केवलं लौकिकदृष्ट्यां एव न अपितु पारलौकिकदृष्ट्याऽपि पुत्रप्राप्तिः गृहस्थाश्रमस्य लक्ष्यम् उक्तमस्ति। सुयोग्यपुत्रः वशंस्य पापान् दूरीकरोति। तथा स्वपूर्वजानपि स्वर्गं प्रापयति। ''पुनन्ति साधवः पुत्राः'' आदि गौतम धर्मसूत्राणि 1424—27 इति धर्मसूत्रस्य स्वकथनशैली वर्तते। वस्तुतः अनेन इदमेव स्पष्टीभवति यत् कुलस्य पवित्रता मर्यादा च सर्वोपरि वर्तते। धर्मसूत्रस्य दृष्ट्यां मातृत्वकारणादेव नर्याः महत्वं वर्तते, सा सन्तानस्य जननी अस्ति, अत एव धर्मसूत्रम् अस्य स्पष्टं संकेतं करोति यत् श्रेष्ठजनेषु माता सर्वोपरि वर्तते। ''आचार्यश्रेष्ठो गुरूणां मातेत्येके'' 1256 पवित्रसन्ततेः कृते नार्याः पवित्रता अनिवार्या वर्तते। पवित्रतायाः सम्बन्धः कुलस्य शुद्धतया वैवाहिकसम्बन्धस्य धर्मसम्मतत्वेन आचरणस्य च श्रेष्ठतममस्ति। सन्तानस्य जीवनविकासे मातुः प्रभावः योगदानञ्च सर्वाधिकं भवति। अतः धर्मसूत्राणि नार्याः पवित्रताविषये विशिष्टं बलं ददति। गृहस्थाय, धर्मरक्षणाय तथा जीवनसमाजयोः सन्तुलनं स्थापयितुं विवाहः अनिवार्या श्रेष्ठा च व्यवस्था वर्तते, अतः धर्मसूत्रं विवाहस्य विधौ योग्यतायां वैधतायां च विस्तरेण विचारं प्रस्तौति। गौतम-धर्मसूत्रेऽपि पत्न्याः योग्यतायां तस्या भिन्नप्रवरत्वं मातृपितृपक्षाभ्यां रक्तसम्बन्धात् दूरीभावः इत्यादिषु विचारः तस्याः विवाहस्य भिन्नभेदेषु दृष्टिपातः कृतः। तथा ब्राह्म–प्राजापत्य–आर्ष–दैव–विवाहश्च धर्मसम्मताः कथिताः।

''चत्वारो धर्म्याः प्रथमाः'' । 1—4—12

धर्मशास्त्रेषु प्रेम्णा धनदाननिमित्तेन वा कन्यां प्राप्य कृतः विवाहः उचितः कथ्यते। एतस्य संकेतः गौतम धर्मसूत्रे कृतः 1—4—13

विवाहस्य अनिवार्यतायां धर्मसूत्रकारः तावत् बलं ददाति येन सः स्ववर्णविषयककठोरताम् अपि विस्मरति। सः व्यवहारे सिद्धान्ते च पाशित इव प्रतीयते तथा विवाहाय स्वतन्त्रतां ददाति। सवर्णविवाहस्य श्रेष्ठताप्रतिपादनेन सह अनुलोमविवाहापक्षेया वरस्य निम्नवर्णस्य कन्यया सह विवाहं धर्मसम्मतं कथयति, येन स्पष्टीभवति यत् वैवाहिकसम्बन्धे वर्णानाम् अवरोधः तावत्पर्यन्तं नासीत्। ब्राह्मणेन शुद्धवर्णस्य कन्यायाः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पत्नीरूपेण ग्रहणं धर्मसूत्रे स्वीक्रियते। समाजे प्रतिलोमविवाहा अपि प्रचलिता दृश्यन्ते। धर्मसूत्रे केवलम् एतादृशेन विवाहेन समुत्पन्नान् पुत्रान् प्रति सहानुभूतिः नास्ति। तत्र तेषां कृते समाजे धार्मिकस्थानं न दीयते, अपितु धर्माचरणेन आत्मोन्नतिं कर्तुं मार्गः प्रशस्तः क्रियते। तस्य वर्णस्य उत्कर्षः अपि भवितुं शक्नोति। गौतमधर्मसूत्रं प्रतिलोमविवाहेषु आघाताय अनेन विधिना उत्पन्नानां पुत्राणां विषये कथयति ''प्रतिलोमास्तु धर्महीनाः'' एतदपि यत् शूद्रस्त्रीतः उत्पन्नः पुत्रः कर्महीनः भवति, तस्य दर्शनं स्पर्शं प्रतिग्रहं च वर्जितमस्ति। तथा ब्राह्मणानां चतुर्वर्णपत्नीभ्यः उत्पन्नपुत्रेषु वर्णानुसारं सम्पत्तेर्विभाजनं भवति स्म। ''त्रीन्कुमार्य तानतीत्य स्वयं युज्यतेतानिन्दितेनोत्सृज्य पित्र्यानलंकारान्'' विवाहकर्मणि उक्तञ्चः –''द्रव्यादानं विवाहसिद्ध्यर्थं धर्मतन्त्रसंयोगश्च शूद्रात्'' 2924 गौतमधर्मसूत्रस्य दृष्ट्या नार्यै विवाहः अनिवार्योऽस्ति यत् सूत्रकारस्य मतमस्ति यत् कन्या यदा लज्जानुभूतिं कृत्वा वस्त्राधारणं प्रति रुचिं करोति तदानीमेव तस्या विवाहसंस्कारः करणीयः। विवाहस्य प्रमुखलक्ष्यं–सन्तानप्राप्त्यै यस्यै स्त्रियै धर्मसूत्रम् आदेशं ददाति यत् सा स्वपत्युः अतिरिक्तं अपरं प्रति विचारम् अपि न कुर्यात् ''नातिचरेद् भर्तारम्'' 2921 वाण्यां नेत्रयोः कर्मणि च संयमं कुर्यात्। तस्याः पत्युः मृत्युसमये, तस्या सन्तानोत्पत्रौ अयोग्यतायां अपरपुरूषेण यौवनसम्बन्धेन पुत्रोत्पत्तेः विधानं करोति'' अपतिरपत्यलिप्सुर्देवात्'' 294। सन्तानोत्पत्तिः एकं पुण्यकर्म वर्तते। धर्मसूत्रस्य च दृष्ट्या नैतिकताया भावना अस्य धर्मस्याधीना वर्तते। धर्मसूत्रस्य दृष्ट्या स्त्रीपुरूषयोः च सम्बन्धानां प्रमुख प्रेरकः भवेत् न तु कामः। अस्यां धर्मस्य छायायां स्त्रियाः कृते धर्मसूत्रे यथोचितं गौरवदत्तम्। परिवारे समाजे च महत्त्वपूर्णं स्थानं प्रदत्तम्। आचार्यस्य पत्नी आचार्येण समानमेव पूज्यावर्तते। तस्या नामग्रहणं न कुर्यात् ''आचार्यतत्पुत्रदीक्षितनामानि'' 1224। तस्याः चरणस्पर्शः शिष्याय विहितो वर्तते। ''विप्रोष्योपसंग्रहणं गुरूभार्याणाम्'' 1239 किन्तु अस्माकं धर्मसूत्रे नारी अन्यस्मिन् अपि रूपेदृश्यते यदा सा कथञ्चिदपि अधिकारिणी न भूत्वा केवलं मानवस्य सम्पत्तिभूता जायते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृते वर्णितानां मानवीय–मूल्यानाम् उपादेयता

शिखा रानी,
शोधच्छात्रा (संस्कृत विभागः, जेआरएफ)
चौ0चरणसिंहवि वविद्यालयःमेरठम् (उ0प्र0)
दूरभाशः – 9720442702

संस्कृतं भारतस्य अस्मिता अस्ति, राष्ट्रस्य प्राणः भवति। संस्कृतं विना तु भारतस्य कल्पना अपि न भवति। भारत–शब्दस्यार्थैव भा–भायां प्रकाशे रतोऽस्ति। भारतीयज्ञानविज्ञानयोः वाहिका संस्कृतमेवास्ति। समस्तब्रह्माण्डस्य ज्ञानं संस्कृते निहितम्। मानवजीवनस्य साफल्याय यद् ज्ञानम् अपेक्षितं तत्सर्वं संस्कृते समाहितम्। अस्मिन् ज्ञानमहाकोशे मानवस्य न केवलं नैतिकाध्यात्मिकविकासार्थं मानवीयमूल्यतत्त्वानि वर्तन्ते अपितु योग–आयुर्वेद–अध्यात्मज्ञान–चिकित्साशास्त्र–गणित–ज्योतिष स्थापत्य–पर्यावरणविज्ञानादिशाखानां वैज्ञानिकज्ञानमपि संवलितम्। संस्कृते मानवीयमूल्यानामपि भाण्डागारं दृ यते वैदिकसाहित्यं भवेत् अथवा लौकिसाहित्यं सर्वत्र मानवीय–मूल्यानि दृश्यन्ते। सर्वप्रथमं वेदैः बोधितं यत् किं करणीयं किमकरणीयं, कथं व्यवहारः करणीयः कथं जीवनं यापनीयमिति। वेदाः ईश्वरस्य संविधानं वर्तन्ते। अस्माकं प्राचीन–ऋषयः महर्षयः कवयोऽपि मानवजातेः कल्याणार्थं सन्देशं दत्तवन्तः। मानवीयमूल्यानि तानि सन्ति यैः कोऽपि जनः मानवः अर्थात् आदर्शव्यक्तिर्भवितुं अर्हति। यैः विना मनुष्यः प ुवत भवति। एतानि सन्ति–सत्यं, दया, धर्मः, अहिंसा, क्षमा, दानं, परोपकारः, सेवा, ज्येष्ठानामाज्ञापालनं, मित्रता, अनिन्दा इत्यादीनि। धर्मविषये महाभारते उक्तम्–

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।। अर्थात् यः धर्मं न पालयति तस्य ना ाो भवति, किन्तु यः धर्मस्य रक्षां करोति, धर्मः तं रक्षति। धर्मोऽस्ति स्वकीयस्य दायित्वस्य पालनमिति। ऋग्वेदे सत्यविशये कथितम्– सा मा सत्योक्तिः परिपातु वि वतः। सत्यं सर्वासु दिक्षु मनुश्यस्य रक्षां करोति। हितोपदे ास्य एकस्मिन् भलोके सदाचारस्य कियत् उत्तमस्सन्देशोदत्तोऽस्ति–

मातृवत् परदारेषु परद्रव्येशु लोष्टवत्।

आत्मवत् सर्वभूतेशु यः प यति स पण्डितः।।

अर्थात् अन्येषां भार्या मातृसमाना अर्थात् परपत्नीं मातरमिव प यति अन्येषां धनं मृत्समानं। सर्वेऽपि प्राणिनः आत्मसमानाः इति भावयन् यः आचरति सः पण्डितः। यदि एतादृ ी भावना मनसावाचाकर्मणा जनमानसेशु भवेत् तर्हि कुत्रापि चौर्यं, लुण्ठनं, हिंसा, भ्रश्टाचारः, बलात्कार च न भवेयुः। निर्भयाकाण्डं हैदराबादकाण्डं च एतादृ ाानि दुश्कर्माणि न भवेयुः। अद्यत्वे नार्यः सुरक्षिताः न सन्ति। अतः संस्कृतस्य पुनः प्रतिश्ठापनायाः समयः आगतोऽस्ति। समाजे मानव–मूल्यानि प्रति उपेक्षाभावः दृश्यते। अद्यत्वे सर्वत्र सेवाभावः, ज्येश्ठानामवज्ञा, अ ाान्तिः, मानसिकसंतापः, प्रत्येकं गृहे कलहः, ईर्ष्या, द्वेषः, आत्महत्या, चौर्यं, भ्रष्टाचारः, बलात्कार च भवन्ति। अतएव संस्कृते वर्णितानि मूल्यतत्त्वानि अस्माभिराचरणीयानि सन्ति तदैव सम्पूर्णवि वस्मिन् भाान्तिर्भविश्यति। संस्कृतं समाजे वैयक्तिकं भिन्नत्वं समाप्य **"वसुधैव कुटुम्बकम्"** इति शिक्षयति। संस्कृतस्य उद्‌घोषोऽस्ति –

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"परम्परागताधुनिकविद्यालयेषु संस्कृतशिक्षकाणाम् आत्मसम्प्रत्ययस्य वृत्तिसन्तृप्तेश्च अध्ययनम्"

डॉ माताप्रसाद शर्मा
(विभागाध्यक्ष)
शिक्षाशास्त्र विभाग, जरारासंवि, जयपुर

रोहिताश्व यादव
(शोधार्थी) शिक्षाशास्त्र

शिक्षा सभ्य, सुसंस्कृत एवं प्रगतिशील मानवसमाजाय एका आधारशिलायाः निर्माणं करोति। शिक्षा एव एकमात्र साधनमस्ति या पशवः मानवश्च मध्ये अन्तरं करोति। शिक्षा एवं ज्योतिपुंजमस्ति या मानवमस्तिष्कस्य अंहकारात्म अपा कृत्वा ज्ञान प्रकाशम् आलोकयति। यतो हि विष्णु पुराणेऽपि कथ्यते"सा विद्या या विमुक्तये"। अस्यायम् अभिप्रायो यत् एकः वृषभ उच्चैः स्वरेण किमपि भाषमाणः विलक्षणस्वरूपवानोऽस्ति। अस्य वृषभस्य चत्वारि श्रृङ्गा त्रयो पादाः द्वे शीर्षे सप्त हस्ताः च सन्ति। अयं त्रिधा त्रिषु स्थानेषु बद्ध अयं भाषते यत् महादेवः मर्त्यान् आविर्भूतः। भाष्यकारः पतञ्जलिः व्याकरणपरम्परानुसारं व्याख्यां कृतवान्। उभावपि आदर्शभूतौ।

(क) शिक्षणवृत्तिः (Teaching Profession) : "मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्य देवो भव" इत्युपदेशः वर्तते। आचार्यः देवतुल्यः भवति। आचार्यः सर्वगुणभूयिष्ठः स्यात्। तथा च वेदवाक्यमस्ति "देवमिव आचार्यम् उपासीत्" इति।शिक्षणं नाम एका पवित्रवृत्तिः। यद्यपि समाजे अन्याः वृत्तयः सन्ति, तेषां वृत्तिनां लक्ष्यं लाभप्राप्तिः, तन्नाम धनार्जनम्। अन्यासु वृत्तिषु दया, अनुकम्पा इत्यादि मानवीयमूल्यानां कृते स्थानं प्रायः द्रष्टुं न शक्यते। तदेव शिक्षकाणां कृते "गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णुः, गुरुर्देवो महेश्वरः" इत्युल्लेखो विद्यते। महाकविकालिदासेनापि मालविकाग्निमित्रे उक्तम् –

> श्लिष्टा क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था सङ्क्रान्तिरन्यस्य विषयुक्ता।
> यस्योभयं साधु स शिक्षकाणां धुरि प्रतिष्ठापयितव्य एव।। (1/16)

(ख) वृत्तिसन्तृप्तिः (Job Satisfaction) : वृत्तिः पदस्यार्थः व्यवसायः। सन्तृप्तिः पदस्यार्थः सन्तुष्टिः। अतः वृत्त्या सन्तृप्तिः वृत्तिसन्तृप्तिः इत्यस्य भावः व्यवसायः सन्तुष्टिः इति। आरम्भकालादेव जीवनयापनार्थं बह्व्यः वृत्तयः समाजे विद्यन्ते। जीवाः स्वस्वस्वभावानुसारेण कर्मानुसारेण च वृत्तिषु क्रियाशीलाः भवन्ति। स्वस्ववृत्तिषु सफलतायै सन्तोषः अपेक्षितः।यतः शिक्षणे क्षमता वृत्तिं प्रति अनुकूलाम् अभिवृत्तिमपेक्षते। अभिवृत्तिः तदेव अनूकुला परिवर्तते यदा कश्चित् स्वाश्रितवृत्तौ सन्तुष्टिमनुभवति।

(ग) आत्मप्रत्ययः (Self Concept) : आत्मसम्प्रत्ययस्य तात्पर्यमनुक्रियाणां व्याख्यया सह अस्ति। मानवस्य अनुभव–चिन्तनाभियोग्यता–क्षमता–चारित्रिकगुणैः सम्मिश्रित–प्रत्यक्षीकरणद्वारा प्राप्त प्रदत्तानां प्रस्तुतीकरणेन एवं संगठनेन सह अस्ति।तदैव जने प्रत्ययानां निर्माणं भवति। 1857 तमे खिस्ताब्दे बिनेनामाख्यमनोवैज्ञानिकेनोक्तं यत् "सम्प्रत्ययः अनुक्रियाणां सा व्याख्या वर्तते। यया प्रत्यक्षीकृताऽनुभवैः प्राप्तप्रदत्तानां व्याख्या संगठनञ्च भवति"। सामान्यतया अवबोध्यते यत् असमानतासु समानतानामन्वेषणं विधाय, तेभ्यः एकपृथक् संज्ञा प्रदानमेव "आत्मसम्प्रत्यय" इति नाम्ना सम्बोध्यते। अस्माभिः "सम्प्रत्ययः" योजनासु मानसिकश्रेणिष्वपि गणयितुं शक्यते।

संदर्भ :–

1. विष्णु पुराण
2. पतञ्जलि महाभाष्य
3. मालविकाग्निमित्र – महाकविकालिदास
4. शिक्षामनोविज्ञान – पीडी पाठक

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतसाहित्ये वर्णितमूल्यानां द्वारा शिक्षशास्त्र–तन्त्राणामभिवृद्धिः तथैव एतेषांद्वारा भाषाध्यापकेषु कौशलसम्पादनम

तुर्लापाटि शिवरामकृष्णः
(शिक्षा–आचार्यच्छात्रः(प्रथमवर्षम्),

अक्षण्वन्तः कर्णवन्तःसखायो मनोजवेष्वसमा बभूवुः

आदघ्नास उपकक्षास उ त्वे ह्रदाइव स्नात्वा उ त्वे ददृश्रे –ऋ.171.7

परिभाषा – सा विद्या या विमुक्तये इत्युक्त्यनुसारं विद् ज्ञाने अर्थे छात्रेषु अन्धकारं दूरीकृत्य सामाजिक–नैतिक–बौद्धिक–सांस्कृतिकविकाससम्पादनमेव शिक्षायाः परिभाषा भवतीति स्वामीविवेकानन्दमहोदयेन उक्तमासीत् ।

शिक्षकाः मनोविज्ञानिकाः वदन्ति यत् बालकेषु आनुवंशिककारणैः परसिरप्रभावेण समाजस्य कारणेन च वैय्यक्तिकभेदाः भवन्तीति । विशिष्य कक्ष्यायां छात्राणाम् अधिगमने वैविध्यता परिशील्यते अध्यापकैः । तदा शिक्षकाः छात्राणामवबोधाय विविधतन्त्राणामन्वेषणं कुर्वन्ति । यतः शिक्षायाः परमं लक्ष्यं छात्राणामधिगम एव ।तदर्थं अस्माकं संस्कृतसाहित्ये अपि बहुविधतन्त्राणि उपलभ्यन्ते । समग्रसंस्कृतसाहित्यस्य परमोद्देश्यः चतुर्विधपुरुषार्थप्राप्तिः । पत्रेस्मिन् समर्पणे शिक्षाशास्त्राधारितप्रधानांशान् परिशीलयामः

1 शिक्षकः

2 छात्रः

3 पाठ्योपकरणानि

4 समाजः(परिवारः, परिसराश्च)। शिक्षक–छात्रयोः अनुसन्धात्रि भवति शिक्षातन्त्रम् । संस्कृतसाहित्ये प्रस्तावित–शिक्षाशास्त्रसम्बद्ध–तन्त्राणि अधः प्रस्तावितांशानां द्वारा परिशीलयामः ।

1 बोधनपद्धतयः

2 शिक्षासूत्राणि

3 शिक्षोपागमाः

अध्यापनसमये शिक्षकः बहुविधत्वेन छात्राय दृश्येत इति शास्त्रं वदति यथा –उपाध्यायः पण्डितः शिक्षकः अध्यापकः आचार्यः गुरुः इति भिन्नरूपैः कर्तव्यं वहति शिक्षिकः । तथैव आधुनिककेन्द्रियविद्यासंस्थानां उद्देश्येषु एवमेकः अंशः दृश्यते ।शिक्षकः स्वबोधनशैल्या छात्रेषु अधिगमस्तरवर्धनीयमिति । भाषाध्यापकानां मुख्यं कार्यं छात्रेषु चतुर्णां कौशलानां सम्पादनम् । भाषाधिगमस्य चत्वारि सोपानानि श्रवणं भाषाणं पठनं लेखनं च भवन्ति । एकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत् वत् चतुर्षु कौशलेषु कस्यापि अभावः भवति तर्हि भाषाधिगमः न जायते । छात्रेषु । भाषा– कौशलानां द्वारा छात्रेषु बुद्धिविकासं मनोविज्ञानं कुशलत्वं विश्वासं अनुशासनं च सम्पादयितुं शक्यते । अतः तदर्थं छात्रः प्रेरितः भवेत् ।

संस्कृतसाहित्ये शिक्षासम्बद्धविषयाः – मनोवैज्ञिनिकदृष्ट्या छात्रेषु बुद्धि–मानसिक–सामजिक–सांस्कृतिक–अनुशासनयुक्तज्ञानसम्पादनाय संस्कृतभाषायां काव्यसाहित्ये कथासाहित्ये उपनिषद्सु, वेदेषु इइतिहासग्रन्थेषु चौनेके अंशाः वर्णिताः सन्ति । तेभ्यः एकमुदाहरणमात्रमधः उक्तमस्ति–

कालिदासविरचित–मालविका!ग्निमित्रे शिक्षकस्य लक्षणानि एवं वर्णितानि

शिलष्टा क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था संक्रान्तिरन्यस्य विशेषयुक्ता ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यस्योभयं साधु स शिक्षकाणां धुरि प्रतिष्ठापयितव्य एव ।।– मालविकाग्निमित्रम् ।
यरू ज्ञानवान् भवति सरू शिक्षकरू भवितुं शक्नोति द्य किञ्च स्वेनाधिगतं ज्ञानमितरेभ्यो नैपुण्येन सङ्क्रामयितुं शक्नोति सरू उत्तमशिक्षकरू भवितुमर्हतिद्य तथा च न केवलं ज्ञानार्जनम् अपि तु तत्प्रकटनमपि अध्यापकस्यावश्यकं लक्षणमिति कालिदासस्याभिप्राय सर्वेषां शिक्षकाणां बोधनकौशलमावश्यकम् विद्याभ्यासविषये कालिदासेन या प्रक्रिया सूचिता अस्ति सा प्रक्रिया सार्वकालिकी सार्वभौमिकी च वरीवर्ति ।
जीवनमूल्यानि उद्दिश्य तैत्तरीयोपनिषदि अपि शिक्षावल्यां केचन अंशाः निर्दिष्टाः यथा दृ मातृदेवो भव। पितृदेवो भव इति आरभ्य एषः आदेशः एष उपदेशः एतदनुशासनं पर्यन्तं विद्यायाः अनन्तरमपि छात्रेण कथं जीवितव्यं कथं व्यवहर्तव्यमिति उपदेशमन्त्राः सन्ति ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

महाकविभासविरचितेषु नाटकेषु मूल्यानाम् विवेचनम्

सुनिता चौधरी
शोधछात्राः (साहित्य)
जरारासंस्कृतविश्वविद्यालय जयपुर (राज)

प्रस्तावना –

प्राचीनकाले संस्कृतं न केवलं साहित्यिकभाषा किन्तु साधारण व्यावहारिकी भाषाष्यासीत् अनन्तरकाले उत्पन्नाः स्थानीयभाषाः संस्कृतभाषाया, साहित्येन च अत्यन्तं प्रभाविताः अभवन्त पाणिन्यादयो महर्षयः सूत्रसाहित्यस्य प्रणयनमकुर्वन्।

यदि वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृतम्।
रावणं मन्यमाना मां सीता भीता भविष्यति।।

विषयप्रवेश –

संस्कृतसाहित्य क्षेत्रे प्रथमनाटककारः महाकविभासः 327 ईपू मन्यन्ते प्रथितयशसां भाससौमिल्लकविपुत्रादिनां प्रबन्धानतिक्रम्य कथं वर्तमानस्य कवे कालिदासस्य कृतौ बहुमानः

१ सूत्रधार कृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभभूमिकैः।
सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैखि।।

२ भासनाटकचक्रेऽपिच्क्षेकैः क्षिजे परीक्षितुम्।
स्वप्नवासवदत्तस्य दाहकोऽभून्न पावकः।।

नाटकस्य प्रयोजनानि –

१ हितोपदेशजननम् – जनानां समाजस्य च कल्याणार्थम् उपदेशः।
२ विश्रात्तिपनन – सामाजिकानां मानसिकग्लानेः अपननेन विश्रान्तिकल्पनम्।
३ विनोदजननम् – जनानां मनोर†जनम्।

नाटकशिक्षणस्य उद्देश्यानि –

१ मानवस्वभावस्य अध्ययनम्   २ विभिन्नजीवनदर्शनानां ज्ञानम्
३ संवादशिक्षा   ४ भावाभिव्यक्ति
५ अनुकरणस्य अवसर   ६ विभिन्नपरिस्थितीनां ज्ञानम् स्वस्थमनो†जनम्
७ हितोपदेशः।

महाभारतासम्बद्धेषु भासविरचितेषु नाटकेषु रेखाचित्रमाध्यमेन सामान्यपरिचयः –

१ उदयनकथाश्रित
I. प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्   II. स्वप्नवासदत्तम्

२ लोककथाश्रित
I. अविमारकम्   II. चारदत्तम्

३ रामायणाश्रित
I. प्रतिमानाटकम्   II. अभिषेकनाटकम्

नाटकेषु मूल्यानां विवेचनम् –

अथ सर्वत्र सर्वेभ्य जनेभ्य शिक्षा समुपमब्धा भवेदितिधिया सर्वकारेणावि षष्ठवर्षादारभ्य चतुर्दशवर्षपर्यन्तं निःशुल्काऽनिर्वार्या च शिक्षा कृता वर्तते।

वृत यात्रेन संरक्षेत, वित्तमेति च यात्रि च।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वित्तमेति हतो हतः।।

जीवनमूल्यानां परिभाषाः – मनुस्मृतो मनु कथयति –

धृतिर्क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।
सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वेसन्तु निरामयाः।
सर्वेभाद्राणि वश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग भवेत्।।

जीवनमूल्यानां वैशिष्ट्यकम् –

१ मूल्यानां सम्बन्धो व्यक्तिः समाजस्य चाचारतिचारेषु दृश्यते।

२ मूल्यानि वयक्तेर्व्यवहारेषु परिदृश्यन्ते कस्यापि समाजस्य आदर्शाः, सिद्धान्ताः, विश्वासाः नैतिकनियमाः मानदण्डाश्चानेके भवति। परन्तु समाजे केषाश्चिदचिकं महत्वम्न्येषाश्च न्यूनं महत्वं परिदृश्यते।

मूल्यानां वर्गीकरणम् –

१ शैक्षिकमूल्यानि, नैतिकमूल्याने

२ सामाजिक – राजनैतिकमूल्यानि वैश्चिकमूल्यानि, विज्ञानिक, सांस्कृति, पर्यावरणीयः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उपाकर्मणः वैज्ञानिकोपादेयता

सूर्यप्रकाश ओझा
शोधच्छात्रः SVVU TIRUPATI

उपाकर्मणः तात्पर्यमस्ति प्रारंभणम् । उपाकरणस्य अर्थः आरंभणाय निमंत्रणम् उत पार्श्वगमनम् । वैदिककाले इदं वेदानाम् अध्ययनाय शिष्याणां गुरोः पार्श्वे एकत्रीभवनस्य कालः आसीत् । अस्य विधानकालः धर्मग्रंथेषु वर्णितः यत् यदा औषधीनां प्रादुर्भवनं भवति तदा श्रावणमासस्य पौर्णमास्यां उत भाद्रपदमासस्य हस्तनक्षत्रयुक्तायां कस्यामपि तिथौ उपाकरणं विधीयते । अध्ययनसत्रस्य सम्पूर्तिः उत्सर्जनम् उत्सर्गं वा कथितः । जीवनस्य वैज्ञानिकप्रक्रियायां उपाकर्म द्वितीयो जन्म गदितः । यः द्वितीयं जन्ममाप्नोति स एव 'द्विजः' उच्यते । 'द्विजत्वेन चिंतनम्, चरित्रम्, व्यवहार इत्येतेषां पवित्रीकरणं सम्भवति । स वेदाध्ययने दक्षो भवति । नवोपनीताः समे ब्रह्मचारिणः श्रावण्यां पौष्ठपद्यां वा उपाकर्म विधाय गुरोर्गृहं गत्वा वेदानधीयते । तथा चाह मनुः–

श्रावण्यां प्रौष्ठपद्यां वाप्युपाकृत्य यथा विधिः
युक्तश्च्छन्दांस्यधीयीत् मासान् विप्रोऽर्ध पंचमान् ॥

भाद्रपदमासादारभ्य मार्गशीर्षामावासीं यावद्वेदाध्ययनं प्रचलति । इमे वेदा अपात यामाः भवेयुरेतदर्थं ब्राह्मणाः प्रतिदिनं सन्ध्यामुपास्य भगवतः समक्षम् उपविश्य वेदाध्ययनं कुर्वन्ति । अतएव ज्ञानयज्ञरूपः स्वाध्यायो गृहस्थानामनिवार्य इति– 'स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्यात्' 'स्वाध्यायं सततं कुर्यात्' इति च स्मृतिवचनम् एवं सन्ध्योपासनमीश्वरोपासनं चास्य यज्ञस्य विशिष्टं कर्म ।
याज्ञवल्क्यस्मृतौ –

अध्यायानां उपाकर्म श्रावण्यां श्रवणेन वा ।
हस्तेनौषधिभावे वा पंचम्यां श्रावणस्य तु ।।

अध्येतृणाम् उपाकर्म श्रावणमासस्य पौर्णमास्यायां उत श्रवणनक्षत्रे गदितः । यदि श्रावणमासे यदि औषधीनां प्रादुर्भावो न भवति तर्हि हस्तनक्षत्रयुक्तस्य भाद्रपदमासे उपाकरणस्य व्यवस्था कृता । सामगास्तु अस्मिन्नेव काले उपाकर्म कुर्वन्ति ।

पौषमासस्य रोहिण्याम् अष्टकायां अथापि वा
जलान्ते छन्दसां कुर्यादुत्सर्गं विधिवद्बहिः । ।

पौषमासस्य रोहिणीनक्षत्रयुततिथौ अष्टकायां वा वेदशास्त्राध्ययनस्य उत्सर्जनं पुष्करिण्याः समीपे कुर्यात् ।

त्र्यहं प्रेतेष्वनध्यायः शिष्यर्त्विग्गुरुबन्धुषु ।
उपाकर्मणि चोत्सर्गे स्वशाखाश्रोत्रिये तथा । ।

त्र्यहम् अनध्यायः इदं नियमनं शिष्याणां गुरुणां ऋत्विजां च मृते विहितः । उपाकर्मणः विधानः यस्मिन् दिने भवति तद्दिने वेदशास्त्रस्य अनध्यायः गदितः ततः परं दिनद्वयस्य अनध्यायः । तथा च उत्सर्गेऽपि दिनत्रयस्य अनध्यायः भणितः । स्वशाखीयश्रौत्रियस्य मृते सत्यपि दिनत्रयस्य अनध्यायो भवति ।

संध्यागर्जितनिर्घात भूकंपोल्कानिपातने ।
समाप्य वेदं द्युनिशं आरण्यकं अधीत्य च । ।

सन्ध्याकाले मेघगर्जने सति भूकम्पे उल्कानिपातने च अनध्यायः गदितः । मन्त्रब्राह्मणस्य समाप्तौ , आरण्यकाध्ययनस्य समाप्तौ च अहोरात्रस्य अनध्यायः ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतज्ञानविज्ञानस्य वैश्विक चिन्तनम्

छात्र – श्रीराम झा
आचार्य,
शिक्षा शास्त्र

वैश्वीकरणस्य स्वरूपम्

जगति अनेकेषां देशानां सामाजिक –आर्थिक राजनैतिक क्षेत्रेषु एकः अन्यत् देशैः सह निकटता–एकीकरणं च वैश्वीकरणम् इति कथ्यते। कोऽपि बस्तुः सेवा, विचारः प्रद्धतिः अथवा सिद्धान्तं विश्वव्यापीकरणमेव तेषां वस्तुः सेवा, विचारः पद्धतिः अथवा सिद्धान्तानां वैश्वीकरणं कथ्यते। प्रत्येक देशस्य अन्यदेशेन सह वस्तुः सेवा, पूँजी, बौद्धिक–सम्प्रदायाः अप्रतिबन्धित–आदान–प्रदानमेव वैश्वीकरणं वर्तते। भूमण्डलीकृत विश्वस्य निर्माता प्रक्रिया व्यापार क्षेत्रे श्रम अन्वेषणार्थं विदेश गमने, आर्थिक मल्यांकने शिक्षा क्षेत्रे, अन्यान्य वस्तूनांम् आयात–निर्यात क्षेत्रे क्रियमाणं कार्यम् एव भूमण्डलीकरणम्। वैश्वीकरणस्य स्थापना जुलाई 1944 तमे वर्षे अभूत्। औद्योगिक विकासः, सूचना क्रान्तिः मानवस्य अभूतपूर्वा उपलब्धिः वर्तते । यत्र सूचना क्रान्तिः इत्यस्य विकासेन अधुना सम्पूर्ण विश्वम् एकं वैश्विक ग्रामरूपं दृश्यते। सूचनायाः अत्यधिक संकलनम् तस्य देशस्य ज्ञानवान–शक्तिसम्पननता च उद्बोध्यते। आधुनिक सूचनाक्रान्तेः सूत्रपातः प्रसिद्धः वैज्ञानिकः आर्थर सी क्लार्कस्य " संचार उपग्रह" इत्यस्य कल्पनायाः स्वरूपम् अस्ति । प्राचीन कलादेव भारतीयाः जनाः सद्भावस्य पक्षपातिनः सन्ति। विश्वघटकेषु सर्वेष्वपि देशेषु निवसतां जनानां परस्पंर सहयोगः प्रेम मैत्री च सद्भावः विद्यते । अनया भावनया कस्यापि जनस्य विशेषे धर्मे सम्प्रदाये जातौ भाषायां निष्ठायां तस्य मानवता एव सामान्य धर्मः भवति। सद्भावे दृढीजाते जनः मानवतायाः प्रसाधकः भ्रातृभावस्य संस्थापकः देशस्य , विश्वस्य, राज्यस्य सम्प्रदायस्य धर्मस्य जाते : भाशायाश्च एकतायाः प्रसाधको भवितुमर्हति। सद्भावेनैव मानवतायाः मXलं जायते। प्राणी शिव स्वरूपः भवति। देशकालातीतः जायते सम्पूर्ण विश्वस्य एक राष्ट्रमिव समावलोकयति विश्वेऽस्मन् सर्वेषां देशानां निवासिषु विविध आचार–विचार वेषभूषा संस्कृति राष्ट्रीयता – आहार विहार भाषादि भेदेष्वपि विभिन्नासु तत्र गुण दोषो दि चिन्तनम् परित्यज्य तेषां सदगुणानां समीचीनता प्रशंसनं जनानां समक्षं प्रकाशन७ सद्भाव पद वाच्यं भवति । विश्वस्य विभिन्नेषु राष्ट्रेषु विविधाकृति– वर्ण जाति धर्म सम्प्रदायानां विविधाः जनाः निवसन्ति परं ते मूलरूपेण मानव जातीयाः मानवाः एव विद्यन्ते। सर्वेषाम आत्मा ईश्वरश्चैकोऽस्ति । अतः विश्वबन्धुत्व भावना, अन्तराष्ट्रिय भावना (भूमण्डलीकरणभावना) वैश्वीकरणभावना एकतायाः भावना सद्भावेन एव समुदति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नारी सशक्तिकरणम्

मुकुन्दकुमार झा
एमए, शिक्षा शास्त्र

वैदिक कालात् आरभ्य इदानीम् समाजे स्त्रीणां स्थानम् अतीव गौरवास्पदमं विद्यते। नारी शब्दस्य व्युत्पत्तिः – ' न अरिः इति नारी' शब्दकोष ग्रन्थे नुः नस्य वा धर्म्या इत्यपि व्युत्पत्ति उपलभ्यते। एवं सिद्धयति यत् पुरूषाणां कृते नारी सर्वथा मित्रवत् कार्यं करोति। नारी गृहिणी, गृहस्वामिनी, सहधर्मिणी, इत्यादिभिः विशेषणैः सम्बोध्यते स्म। जन्मनः विवाह, समयं यावत् पितुः गृहे, 'कन्या' इति पावन शब्देन बाच्यायाः अस्याः समाजे अस्माकं महत्वम् परमम् अस्ति। पत्नी रूपेण सा गृहस्वामिनी पदम् अल४चकार। वेदे यथोच्यते–

"सम्राज्ञी श्वसुरे भव सम्राज्ञी श्वश्रवां भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधिदेवृषु ।। (ऋग्वेद) 10/85/46
जायेदस्तम् जाया एव अस्तं गृहमित्यर्थः। (ऋग्वेद) 3/53/4

गृहस्थाश्रमे नार्यः प्राधान्यं दुश्यते। अस्माकं शास्त्रेषु अपि कथितम् –

" न गृहं गृहमित्याहुः गृहिणी गृहमुच्यते। (प४चतन्त्र 3/146)

यत्र गृहेषु नार्याः सम्मानं भवति। गृहस्य सर्वै जनैः नारीणां सुखस्य प्रसन्नतायाश्च चिन्तनं क्रियते तत्र सदैव लक्ष्म्या वासो भवति। एतादृशेषु गृहेषु सर्वेषां देवानां महती कृपा भवति। अस्मिन विषये कथितम् मनना:–

" यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रिया ।। (मनुस्मृति 3/56)

अथर्ववेदे स्त्रीगुणानामपि वर्णनं प्राप्यते। सा तेजोवती, कुलपा, पतिहितकारिणी, मृदुभाषिणी सरला, अक्रोधना, पतिव्रता, अज्ञाकारिणी, प्रसन्नचिता च स्यात्।

पत्याऽविराधयन्ती (अर्थववेद 2/36/4)
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिनाम्। (अथर्ववेद 3/3/2)
पत्युरनुव्रता भूत्वा स नह्यस्वामृताय कम्। (अथर्व – 14/1/42)

एवं विज्ञायते यत् प्राचीन भारते स्त्रीणां स्थानं महत्वपूर्णम् आसीत्। महामानवेन मनुना उक्तम् यत् समाजे नारीणां स्थानं तथैव वर्तते यथा देवालये देवानाम् । स्त्रीपुरूष सामन्जस्यरूपेण भावने जीवनमपि सुखकरं करणीयम् इत्येकमेव अस्माकं समाजस्य देशस्य च समुन्नतिं भवितुं शक्यते । देशस्य सभ्यतायाः संस्कृत्याः च मूल्यांकनं नारीवर्गं दृष्ट्वैव क्रियते। पितृदेवोभव' 'मातृदेवो भव' इत्यादिभिः उक्तिभिः नारीणां स्थानं वैदिककाले स्पष्टमेव आभाति। शंकराचायाद् आरभ्य स्वामीविवेकानन्दं यावत् सर्वैः महापुरूषैः मातृशक्ति संस्तुता। अनेन पर्यालोचनेन स्पष्टमेतत् यत् भारतीय संस्कृतौ नारीणां स्थितिः प्रशंसनीया पूजनीया च अस्ति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वाक्यार्थाभिज्ञानम्

नरेशसिंहः , शोधच्छात्रः (व्याकरणम्)
जगद्गुरु–रामानन्दाचार्य–राजस्थान–संस्कृत–विश्वविद्यालयः, जयपुरम् ।

वाक्यलक्षणम्

सर्वैः ज्ञायते यत् पदसाधुत्वान्वाख्यायकं व्याकरणशास्त्रं शब्दानुशासन–नाम्ना पदशास्त्ररूपेण प्रसिद्धिमावहति। अर्थैकत्वादें वाक्यं साकाङ्क्षं चेद् विभागे स्यात् इति मीमांसासूत्रम् 2–1–46

1) पदसङ्घातजं वाक्यम् । – व्याडिः

2) पदसमुहो वाक्यमर्थपरिसमाप्तौ कौटिल्य–अर्थशास्त्रे ।

3) एकार्थः पदसमुहो वाक्यम् । – काशिका

सूत्रम् तिङ्ङतिङः 8–1–28 इति ।

सूत्रस्य अतिङ इतिपदेनज्ञायते यथा पचति , भवति , पश्य , मृगो धावति इत्यादि ।

कात्यायनः पतञ्जलिश्च

वार्तिककारेण भाष्यकारेण च प्राचीनाचार्याणां विभिन्नलक्षणानि सङ्ग्रह्य वाक्यस्य चत्वारि लक्षणानि उदितानि तथाहि

अ) – आख्यातं साव्ययकारकविशेषणं वाक्यम् ।

आ) सक्रियाविशेषणञ्च

इ) आख्यातं सविशेषणम् ।

ई) एकतिङ् इति ।

1) वाक्यस्य भेदाः

भर्तृहरिणोक्तम्

पदे न वर्णा विद्यन्ते वर्णेष्ववयवा न च ।
वाक्यात् पदानामत्यन्तं प्रविवेको न कश्चन ।।

वाक्यस्य भेदनक्रमे कथ्यते यत् वाक्यं मुख्यतया द्विविधं मुख्यतया सखण्डमखण्डञ्चेति । तत्र सखण्डवाक्यस्य पञ्चभेदाः सन्ति । अखण्डपक्षे वाक्यस्य त्रयो भेदाः सन्ति ।

2) वाक्यस्य अङ्गानि दृ

" उच्यते इत्यस्माद्वाक्यम् , वचेर्ण्यति । चजोः कुघिण्यतोः" इत्यादीनां कुत्वम् । शब्दसञ्ज्ञत्वाद् वचोऽशब्दसञ्ज्ञायाम् । अनेन निषेधो न भवति । एतद्विपरितं वाक्यमेव सिद्धयति , वाच्यं तु कुत्सिते दीने वचनार्थं च वाक्यवाद् इति कोशः ।

वाक्यरचनायाः प्राक् वाक्यस्य अङ्गानि चिन्त्यन्ते । तन्माध्यमेन सम्पूर्णार्थप्रकाशकस्य वाक्यस्य रचना क्रियते। वाक्यस्याङ्गानि इमानि भवितुं शक्यन्ते वाक्यार्थाभिज्ञाने शाब्दबोधस्य महत्त्वपूर्णं स्थानं वरिवर्ति । यदि वाक्यानां शाब्दबोधः न क्रियते तर्हि वाक्यार्थस्य स्पष्टता एव न जायेत , वाक्यार्थबोधस्य विभिन्नैः आचार्यैः स्व–स्वमतानुसारेण विवरणं कृतं वर्तते।वाक्यार्थाभिज्ञानं केन प्रकारेण सम्यक् ज्ञायेत तदर्थं आचार्यैः सिद्धान्ताः प्रतिपादिताः । तेषां विवरणं विस्तृते लेखे प्रस्तोष्यते । इति ।

सन्दर्भग्रन्थाः

1) वैयाकरणभूषणसारः2) परमलघुमञ्जूषा3) वाक्यपदीयम्4) वाक्यार्थविवेचनम् । (डॉ धनुर्धरझा)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भूम्यन्तर्गतजलस्थाननिरीक्षणम्

डॉ. मीनाक्षी योगी
ज्योतिर्विद्

जलस्य प्रश्नम् पृष्टुम् जलस्थानम् निरीक्षणाय प्रेरयति । तदर्थम् ज्योतिषशास्त्रस्य प्रश्नमार्गे जलसूचकायाः विविधाः केन्द्राः प्रोक्तम् । तात्कालिकं लग्नादिनां विचारः कर्त्तव्यम् । प्रश्नकुण्डल्यां लग्नात् चतुर्थस्थानम् भूम्यन्तर्गतजलस्थानं, सप्तमस्थानं नदीजलम्, दशमस्थानम् वृष्टिजलं, लग्नं च सामान्यं जल विचारणीयम् । अत्र ग्रहाणां बलं दृष्ट्वा भूरिजलं कथनीयम्। ग्रहाणां बलं न्यूनं चेत् न्यूनं जलं वाच्यम् यथोक्तं प्रश्नमार्गे–

हिबुकेनाधस्सलिलं नयागमनं तु सप्तमेनैव ।
दशमेन वृष्टिपतनं केन्द्रविशेषास्तोयं ह्येते ।।1।।[23]

भूजलस्य शिराज्ञानम्–

यदि चरलग्नं चेत् शिराएकैव वहति । यदि स्थिरं लग्नं चेत् बहवः शिराः प्रवहन्ति ।

भूम्यन्तर्गत जलस्थान निरीक्षणम्

बृहत्संहितायां वर्णितमस्ति –

जलपरिहिने देशे दृश्यन्ते अनुपजानि चिन्हानि ।
वीरणदूर्वा मृदवश्च यत्र तस्मिन् जलं पुरुषे ।।2।।

एवं प्रकारेण अस्मिन् शोधप्रबन्धे विविधानां जलस्थानानां जलशीराः प्राप्तिस्थानानां परीक्षण नीरीक्षणञ्च करिष्यामि । ये विषयाः साम्प्रतिक समाजस्यकृते महदुपयोगि सिद्धिर्भविष्यति ।

-1प्र.म.25 / 89

-2बृ.सं. / 54 / 47[23]

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व्याकरणसम्मतसृष्टिविज्ञानम्

डॉ. दयारामदास
सहायक आचार्य, व्याकरण विभाग
जरारासंविवि, जयपुर

व्याकरणशास्त्रे भागद्वयं प्रसिद्धम्। एकं प्रक्रियाप्रधानम् अन्यद् दर्शनप्रधानम्। यद्यपि दर्शने आत्मचर्चैव प्राधान्येन भवति, तथापि तदुपयोगितया सृष्टिचर्चापि कर्तव्या भवत्येव, यतो हि पूर्णरूपेण सृष्टिस्वरूपं ज्ञात्वैव ततो विरज्यति लोकः।

सृष्टिपदमत्र सृज्विसर्गे धातोः कर्मणि क्तिन्प्रत्यये सति दृश्यप्रपंचपरम्। विशिष्टं ज्ञानं विज्ञानम् सृष्टेः विज्ञानम् सृष्टिविज्ञानम्। तत्र प्रथमं पाणिनिसम्मतसृष्टि विज्ञानमुच्यते पाणिनिमते शब्दब्रह्म एव जगत उपादानकारणं वर्तते। तत्र महर्षिपाणिनेः प्रातिपदिकसंज्ञासूत्रमुपस्थापयामि –**'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्'**[24] इति। पदं पदमिति प्रतिपदम्, प्रतिपदगृह्णाति[25] प्रातिपंदिकमिति व्युत्पत्त्या शब्दस्य सर्वस्थानस्थितत्वाद् व्यापकत्वम्। अधातुरित्यस्य धातुः सर्वशब्दप्रकृतिः, सोऽविद्यमानो यत्र व्युत्पत्त्या, अप्रत्यय इत्यस्य चाविद्यमानः प्रत्ययो यत्रेति व्युत्पत्त्या चाधात्वप्रत्ययपदाभ्यां प्रकृतिप्रत्ययविभागसाहित्यं संहृतक्रमरूपत्वमपरिच्छिन्नत्वं च शब्दब्रह्मण इति सूचितम्। अर्थवदित्यनेन च घटपटाद्यर्थयुक्तत्वं सूच्यते। तथा च महर्षिपाणिनिनार्थवदिति सूत्रं विरचय्यापरिच्छिन्नः पूर्वापरीभावशून्यः, अत एवोत्पादविनाशरहितो व्यापकोऽर्थवानेव शब्दो ब्रह्मेत्यत्राभिप्रायः प्रदर्शितः। अत्रार्थशब्देन च शक्तिरवगम्यते। तथा च ब्रह्मणि शक्तिमत्त्वमायाति। एवं च शक्तिमद् ब्रह्मैव सृष्टिं करोतीति निष्कर्षः। अत एव केषाञ्चिद् वैयाकरणानां मते शक्तिमत्त्वमर्थवत्त्वमिति वर्तते।

एतदनन्तरं च **'कृत्तद्धितसमासाश्च'**[26]इति सूत्रयता महर्षिपाणिनिना शब्दब्रह्मणि कर्तृत्वं पालकत्वं संहारकत्वमपि प्रदर्शितम्। तद् यथा करोतीति कृदित्यनेन जगत्स्रष्टृत्वम्, तस्मादुत्पन्नाय जगते हितस्तद्धित इत्यनेन रक्षकत्वम्, समसनं संक्षेपकरणमिति समास इत्यनेन संहारशक्तिमत्त्वमिति।

व्याकरणसम्मतसृष्टिविज्ञाने श्रुत्यादिप्रमाणम्

यथान्ये परमाण्वादिभ्यः जगत्सर्गं मन्यन्ते, तथैव व्याकरणदर्शने शब्दतः एव सृष्टिः स्वीक्रियते। अत्रार्थे श्रुतयोऽपि प्रमाणभूताः। तथाहि –

वागेव विश्वा भुवनानि जज्ञे वाच इत् सर्वममृतं यच्च मर्त्यम्।
अथेद् वाग् बुभुजे वागुवाच पुरुत्रा वाचो न पदं यच्चनाह।।[27]

वागेव बुद्ध्यात्मना स्थितं सूक्ष्मं वाक्तत्त्वमेव, विश्वा भुवानि सर्वाणि भुवानि वाच्यवाचकोभयात्मकानि, जज्ञे जाता, इन्द्रियाणि प्राणं च द्वारीकृत्य।

शब्दब्रह्मपूर्विकासृष्टिर्मनुनापि उक्ता –

सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्।
वेदशब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे।।[28]

बादरायणेनापि भगवता **"शब्द इति चेन्नातः प्रभवात् प्रत्यक्षानुमानाभ्याम्"**[29] इति सूत्रेण वेदशब्देभ्यो जगतः सृष्टिः कथिता।

---

[24]अष्टाध्यायी 1.2.45
[25]पदोत्तरपदं गृह्णाति (अष्टाध्यायी 4.3.39)
[26]अष्टाध्यायी 1.2.46
[27]वा. ब्र. हरिवृषभटीका श्लोकः 120
[28]मनुस्मृतिः 1.21
[29]ब्रह्मसूत्रम् 1.3.28

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उपनिषद्युगिनी शिक्षाव्यवस्था

आशीष शर्मा
शोधच्छात्र
शिक्षा–विभाग
ज.रा.रा.सं.वि.वि, जयपुर

उदीयमानभारतेऽस्मिन् प्रायशः मानवः शिक्षयैव स्वबुद्धिं व्यनक्ति। अल्पीयसि काले अधिकाधिकं फलं प्राप्त्यर्थं सर्वदैव जनाः शिक्षया तत्पराः प्रयतामानाश्च भवन्ति। प्राचीनकालादारभ्यः जनाः सामाजिक–परिस्थित्यनुसारं स्वस्य व्यवहारं समायोजनं कुर्वन्ति। शिक्षायाः मुख्योद्देश्यमासीत्–

"सा विद्या या विमुक्तये"

अर्थात् सूक्ष्मदृष्ट्या विचारयामश्चेत् अपवर्गप्राप्त्यर्थं शिक्षा सर्वश्रेष्ठ निधिरस्ति। आचार्यः पूर्वःपम्। अन्तेवास्युत्तरःपम्। विद्यासन्धिः। प्रवचनं सन्धानम्। इत्यधिविधम्।

गुरुशिष्ययोः मध्ये विद्यार्जनाय प्रवचनद्वारा या प्रक्रिया प्रचलति सा शिक्षा। शिक्षयति इत्यनेन कः ?, कं ?, किं ?, शिक्षयति ? इति जिज्ञासायां गुरुः शिष्यं शिक्षयति इत्युत्तरं लभ्यते। समाजे व्यक्तीनां व्यवहारेषु सत्वसम्पादनाय प्रशिक्षणम् अपेक्षितम्। प्रशिक्षितो मानवः विवेकी सन्दुर्व्यवहारेभ्यो निवर्तते सद व्यवहारेषु च प्रवर्तते। तादृश परिष्कार–सम्पादक–संस्कारः शिक्षया सेत्स्यति। तथा च व्यक्तेः व्यवहार परिष्कारेण परिवर्तन सम्पादिका नैतिकमूल्यपोषिक प्रक्रिया शिक्षा इत्युच्यते।

वेदविद्यावता आद्यां स्मृति परम्परामुदभावयता मनुना भूतेषु प्राणिनां, प्राणिषु बुद्धिजीविनां, बुद्धिमत्सु नराणां, नरेषु ब्राह्मणानां, ब्राह्मणेषुविदुषां,विद्वत्सु कृतबुद्धिषु कर्तृणां, कर्तृषु, ब्रह्मविदां श्रेष्ठता समाख्याता। तथाहि–

भूतानां प्राणिनः श्रेष्ठा प्राणिनां बुद्धिजीविनः ।
बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणाः स्मृताः ॥
ब्रह्मणेषु च विद्वांसो विद्वत्सु कृतबुद्धयः ।
कृतबुद्धिषु कर्तारः कर्त्तृषु ब्रह्मवेदिनः ॥

'अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते' इति खलु वेदघोषः। सा विद्या एव प्रकृष्टाया विद्या मुक्तिं प्रददाति। वेद–शास्त्र–विज्ञानादीनां साध्वनुशीलने तत्त्वार्थ ज्ञानं च विद्येति स्वीक्रियते।

उपनिषदाम् अनुसारेण द्वे विद्ये परा अपरा च। यया विद्यया लौकिकं ज्ञानं जायते, सा अपरा विद्या। यया च अक्षर–ब्रह्मविषयकं ज्ञानं जायते, सा परा विद्या। लोकेऽस्मिन्विद्या एव तज्ज्योतिः यद्मान वेज्ञानज्योतिं ज्वालयति, अविद्यान्धतमसं व्यपोहति, दुर्गुणगणं वारयति, सद्गुणततिं संचारयति, कीर्तिं प्रथयति, गौरवं विकासयति, यशो वितनोति, भूभृतत्सु च आदरम् आवहति। एषा मातृवत्संरक्षिका, पितृवत्सत्पथ प्रदर्शिका, कान्तावत्सुखदा मनोरञ्जिका च, कीर्तिप्रदा, वैभवदायिनी, दुर्गुणगणनाशेन मनसः पावयित्री च। सर्वमनोरथपूरणात्सेयं कल्पलतेति परिज्ञायते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नारी सशक्तीकरणस्य आवश्यकता वर्तमान सन्दर्भे

उषा मिश्रा
शोधच्छात्रा
साहित्यम्
ज०रा०रा०सं०वि०वि० जयपुरम्

सारांशः—

संसाररुपी रथस्य द्वि चक्रे स्तः। नरः च नारी च। उभयोरपि समानं महत्वं वर्तते। उक्तं च **"एकेन चक्रेण रथस्य गतिर्न भवति।"** अस्माकं आदिग्रन्थेषु नारीणां महत्वं वर्णितं वर्तते यत्

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता"।

प्राचीनकाले स्त्रीणां स्थानं गौरवपूर्णनम् आसीत् तथा ताः अधिक शिक्षिता आसन्। गार्गी,मैत्रयी,घोषा,लोपामुद्रा आद्या विदुष्यः वेदशास्त्रार्थ निपुणा आसन्। गार्गी याज्ञवल्क्येन सह शास्त्रार्थं कृतवती। तदा याज्ञवल्क्य गार्ग्याः बहुप्रश्नेन क्रोधितो अभवत् तथा गार्ग्यैः अकथयत् "गार्गी माति प्राक्षी र्मा ते मूर्धा व्याप्त" तथापि गार्गी क्रोधं न कृतवती। गार्ग्याः प्रश्नानां आधारेण "बृहदारण्यक उपनिषद" ऋचानां निर्माणम् अभवत्। नारी शक्त्याः अन्यम् अद्‌भुतम् उदाहरणं रामायणे पतिव्रता सीता वर्तते। सा त्यागस्य मूर्तिः गहनविपत्तौ अपि विचलिता न भवति। विश्पला वैदिक युगीन नारी आसीत्। युद्धे तस्याः द्वौ अपि पादौ छिन्नौ अभवतामं तथापि सा विचलिता न भवति तथा शत्रुयि विहितं धनं जितवती। महाभारते द्रौपदी अपि सशक्तः नार्यः उदाहरणं वर्तते। सा युधिष्ठरं युद्धं प्रति प्रेरितवती। अद्य एकम् अपि क्षेत्रं नास्ति,यत्र नार्याः प्रभावो नास्ति। अनेका नार्यः संसदसदस्याः सन्ति। अस्यामेव श्रंखलायाम् अम्तरिक्ष वैज्ञानिकाः विशिष्टा गवेषिका कल्पना चावला प्रमुखं स्थानं लभते। सा प्रथमा महिला अन्तरिक्ष यात्री आसीत्। यदा वयं अन्यत्र पश्यामः तदा समाजे अद्य स्त्रीणां जना स्त्रियोचित सम्मानं न कुर्वन्ति। अस्मात् कारणात् बहुनि घटनानि अभवत्। यथा—२०१२ तमे वर्षे दिसम्बरमासस्य षोडश दिनाङ्के देहल्यां घटितं निर्भयाकाण्डं तथा त हैदराबादस्य दिशा रेड्डी घटनाक्रमं—२०१९ नार्यः दुर्दशायाः प्रमाणानि अद्य समाजे प्रतिदिनं दृश्यन्ते। अद्य नार्यः जीवनं सुरक्षितं न वर्तते। आधुनिक काले स्त्रियः सशक्तिकरणम् अनिवार्यम्। सर्वैः नारीणाम् आदरः करणीयः। नारी एव समर्थ पुरुषस्य जननी अस्ति। अतः अद्य आधुनिक युगे नारी सशक्तीकरणस्य महती आवश्यकता वर्तते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भारतीयसाहित्ये मूल्यतत्त्वविमर्शः

रुनिस्मिता प्रीतिपुष्पा
शोधच्छात्रा
साहित्य-विभाग
ज.रा.रा.सं.वि.वि, जयपुर

मूल्यमिति शब्दं श्रुत्वा अस्माकं मनसि एकैव विचारोत्पद्यते यत् अस्य वस्तुनः इदं मानम्। इत्थं वयं कथयितुं शक्नुमः यत् यानि तत्त्वानि अस्माकं संस्कृतेः मानं निर्धारयन्ति तानि एव अस्माकं मूल्यानि। भारतीय संस्कृतेः यदा नाम आयाति तदा सर्वप्रथमं वेदवेदाङ्गानां चिन्तनं भवति। वैदिकमूल्यानि अद्यापि प्रासंगिकानि सन्ति। वेदवेदाङ्गेषु भौतिकी पारमार्थिकी च सत्तायाः विषयः जीवनमूल्यानि (संस्काराः) योगोक्षेमोपयोगिता इहलौकिकपारलौकिकयोः सूक्ष्मप्रौढचुन्तनम् इत्यादीनि प्रतिपादितानि सन्ति **श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्**[30] इति सिद्धान्तवत् वेदाः भारतीयानां मूल्यतत्त्वानि प्रतिपादयन्ति वेदाङ्गानि च तेषामनुशीलनं, रक्षणञ्च कुर्वन्ति।

कस्यापि संस्कृतेः आधारः तस्य मूल्यानि भवन्ति। मूल्यानि एव कर्तव्यार्क्तयोः , आचारव्यवहारयोः, अर्हानर्हयोः च निर्धारणं कुर्वन्ति। अस्माकं मूल्यानि धर्मरक्षणाय निर्धारितानि सन्ति। अस्माकं धर्मव्यवस्था **मनुर्भव**[31] इति सिद्धान्तमनुसरति। तत्र नैतिकमूल्यानि प्रतिपादितानि सन्ति। नैतिकमूल्यानि मनुष्यत्वं द्योतयन्ति। धर्मविषये कथितमस्ति यत्-

धारणाद्धर्ममित्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः।
यः स्याद् धारणसंयुक्तं सः धर्म इति निश्चयः।।[32]

ईशोपनिषदः मन्त्रादेव महात्मागान्धिना **ट्रस्टशिप** सिद्धान्तः प्रतिपादितः। ट्रस्टशिपसिद्धान्ते प्रतिपादितं यत् अस्मिन् विश्वे ये वस्तुनः पदार्थाः च सन्ति ते परमात्मना व्याप्तमस्ति। पदार्थेषु कस्यापि सत्तात्मिका स्थितिः न विद्यते। परमात्मन सार्वभौमिकी सत्ता विद्यते। ईशोपनिषदि लिखितमस्ति-

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जिथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥[33]

अनया भावनया प्राप्ताप्राप्तयोः, सिद्ध्यासिद्ध्योः च विषये शोक-वियोग-हर्षादिकञ्च न भवति। अनेन मनुष्याणां मनसि सहृदयता सहानभूतिः औदार्यादिकञ्चोत्पद्यन्ते।

सदाचारस्य पालनमपि अस्माकं सांस्कृतिकमूल्यं वर्तते **आचारः परमो धर्मः**[34] इति वचनं मनुस्मृतौ मनुमहाराजः प्रतिपादितम्। सदाचारपलनेनैव श्रेष्ठत्वं गुणोत्कृष्टत्वं च मानवाः भजन्ते।

---

[30]रघुवंश.२/१

[31]ऋग्वेद.५

[32]धर्मकर्मसमुच्चय

[33]ईशावास्योपनिषद.१

[34]मनुस्मृति.२/१०

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आश्रमव्यवस्थाऽपि अस्माकं सामाजिकमूल्येषु समाहिताः भवन्ति । आश्रमव्यवस्थायां तु वयः क्रमेण मनुष्यस्य जीवनचर्या निर्धारिता अस्ति । चत्वारः आश्रमाः वर्तन्ते तत्र प्रथमः ब्रह्मचर्याश्रमः। अस्मिन् काले बालकस्य शिक्षादीक्षयोः कर्माणि भवन्ति । द्वितीयो गृहस्थाश्रमः आश्रमेषु श्रेष्ठः कथ्यते । आश्रमे ऽस्मिन् मनुष्याः सपत्निकाः भूत्वा स्वकर्तव्यं कुर्वन्ति । अस्मिन्नेव भौतिकी, मानसिकी च समुन्नतिमवाप्नुवन्ति । पञ्चमहायज्ञाः अपि अस्मिन् आश्रमे एव अनुष्ठीयन्ते । तृतीयो आश्रमः वानप्रस्थाश्रमः। आश्रमे ऽस्मिन् मनुष्याः ईश्वराराधनाय वने गच्छन्ति तस्मात् त्यागस्य भावना उपजायते । चतुर्थो आश्रमः सन्यासाश्रमः। आश्रमेऽस्मिन् मनुष्यः मोक्षप्राप्तये ईश्वराराधने सर्वं त्यक्त्वा पूर्णरुपेण नियोजितो भवति । अत्र मनुष्याणां मनसि राग, भय, हर्ष, क्रोधादिकञ्च न भवति ।

अस्माकं संस्कृतिः मनुष्याणां कृते षोडशसंस्काराणां निर्धारणं करोति । तेषां परिगणनं गर्भाधानाद् अन्त्येष्ठि पर्यन्तं भवति । ते मनुष्याणां जीवनकाले ये ये संस्कारकतत्त्वानि सन्ति तेषां निर्वाहः कथं कथं भवेदिति अस्य निर्धारणं कुर्वन्ति । अस्माकं संस्काराः जन्मनात् प्राक् प्रारब्धाः भूत्वा जीवनपर्यन्तं कर्तव्यनिर्धारणं कुर्वन्ति ।

भारतीयसाहित्ये राष्ट्रीयभावनाऽपि मूल्येषु परिगण्यते । ऋग्वेदे राष्ट्रस्य ध्रुवात्मिका स्थितिः भवेदिति स्तुतिः कृताऽस्ति- **राष्ट्रं धारयतां ध्रुवम्**[35] । रामायणे राष्ट्रस्य महत्त्वं दर्शयितुं रामः लक्ष्मणं प्रति कथयति यत्-

अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते ।
जननि जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसि ।[36]

अर्थात् लंका स्वर्णमयी अस्ति तथापि रामाय न रोचते यतोहि जननि जन्मभूमिश्च महत्त्वपूर्णं स्थानं भजति स्वर्गादपि ।

मानवीयमूल्यानि सजिवानि भवेत् । समेषां चेतसि शुद्धा भावना भवेत् । तैत्तिरीयोपनिषदि वर्णितमस्ति यत्- **सत्यं वद, धर्मं चर, स्वाध्यायान्माप्रमदः**[37]। वयं समेषां कृते आकांक्षामहे देवाः भद्रं वितरन्तु । आदर्शसमाजस्य संस्थापना भवेत् । सच्चरित्रस्य निर्माणं भवेत् । सर्वे समाहित मनसाः भवेयुः।

भद्रं वद दक्षिणतो, भद्रमुत्तरतो वद ।

भद्रं पुरस्तान्नो वद, भद्रं पश्चात् कपिञ्जलः॥

॥ इति शम् ॥

---

[35]ऋग्वेद.८/८/२३

[36]रामायण काण्ड.७

[37]तैत्तरियोपनिषद.बल्ली.२

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नाट्यशास्त्रीयपरम्परायां महापुरुषशंकरदेवस्य अङ्कीयानाटकानिकृएका समीक्षा

डॉ. कमल लोचन आत्रेयः
सह–अध्यापकः
संस्कृतसाहित्यविभागः
कुमारभास्करवर्मसंस्कृतपुरातनाध्ययनविश्वविद्यालयः,नलबारी,असमः

भारतीयनाट्यपरम्पराया आधारग्रन्थोस्ति भरतमुनिविरचितं नाट्यशास्त्रम्। अतो भारतवर्षस्य विविधप्रान्तीयसाहित्ये यानि नाटकानि संरचितान्यभवन् तेषु नाट्यशास्त्रस्य संस्कृतनाट्यपरम्पराया वा प्रभाव अस्ति न वेति, अस्ति चेत् कियानस्तीति विषयौ नूनं सम्यगध्ययनमपेक्षेते।असमप्रदेशे ईशवीये पञ्चदशशताब्दे लब्धजन्मा महापुरुषशङ्करदेवः नववैष्णवधर्मप्रचाररूपं महदुद्देश्यं पुरस्कृत्य बहूनि नाटकानि विरचयामास।महापुरुषस्यास्य नाटकान्येव असमीयासाहित्ये उपलब्धेषु नाटकेषु आदिमतमानि सन्ति।शङ्करदेवस्य नाटकानि असमीयासाहित्ये 'अङ्कीयानाट'नाम्ना प्रसिद्धिं लभन्ते।सम्प्रत्युपलब्धानि शंकरदेवस्य षण्नाटकानि सन्ति दृ पत्नीप्रसादं, पारिजातहरणं, कालियादमनं, रुक्मिणीहरणं, केलिगोपालं, श्रीरामविजयं, चेति।यद्यपि नाटकेष्वेषु मुख्यतया मैथिलीमिश्रिता व्रजावलीनामिका प्राचीना असमीयाभाषा प्रयुक्ता, तथापि मध्ये– मध्ये संस्कृतगद्यांशः संस्कृतश्लोकाश्चापि दरीदृश्यन्ते।तेषु भरतमुनिकृतस्य नाट्यशास्त्रस्य प्रभावोपि भूयो भूयः परिलक्ष्यते। उदाहरणतया दृ नाट्यारम्भे नान्दीपाठः, सूत्रधारस्य प्रयोगः,मध्ये मध्ये प्रयुक्ताः संस्कृतश्लोकाः, अन्ते भरतवाक्यं मङ्गलभटिमा वा इत्येतानि बहूनि सादृश्यान्यत्र दृश्यन्ते।यद्यपि शंकरदेवस्य नाटकानि संस्कृतनाट्यपरम्परया भृशं प्रभावान्वितानि सन्ति तथाप्येषु बहुत्र नाट्यशास्त्रोक्तनियमानाम् उल्लङ्घनं शैथिल्यं चापि दृष्टिपथि आयाति, येन एतेषामङ्कीयानाटकानां स्वकीयत्वं शंकरदेवस्य मौलिकत्वं चापि विस्पष्टमनुमीयते।अतः शोधपत्रेस्मिन् शंकरदेवस्य अङ्कीयानाटकेषु कुत्र कुत्र नाट्यशास्त्रीयपरम्परायाः प्रभावो दृश्यते कुत्र चौतानि स्वकीयत्वं भजन्ते इति उन्मेषणस्य विनम्रप्रयासो विधीयते।शोधकर्मण्यस्मिन् तुलनात्मकं विश्लेषणात्मकं च शोधविधी प्रयुज्येते ।।इति दिक्।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विद्ययाऽमृतमश्नुते

डॉ.कृष्णा शर्मा
सह–आचार्या,विभागाध्यक्षा
धर्मशास्त्रविभागः ,
राष्ट्रिय– संस्कृत– संस्थानम् ,
एकलव्यपरिसरः, अगरतला , त्रिपुरा ।

अस्मिन् संसारे यस्य जन्म भवति तस्य मृत्युरपि निश्चितः।मानवजीवने गमनागमनस्य चक्रमेवमेव प्रचलति ।भगवद्गीतायां भगवद्कृष्णेनोक्तं यत् –८ जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्ममृतस्य च । मानवजन्मस्योद्देश्यं किमस्ति ? जन्मतःमृत्युपर्यन्तं एषा यात्रा केन प्रकारेण यातव्या ? स्वस्य कानि कानि कर्त्तव्यानि सन्ति ? एतादृशानां प्रश्नानां समाधानविषये अस्माकम् ऋषिभिःनैकाःग्रन्थाः प्रणीताः। श्रुतिस्मृतिपुराणादिषु ग्रन्थेषु आचारव्यवहारप्रायश्चित्तादीनि विषयानि प्रतिपादितानि ।एतेषां विषयाणाम् उत्कृष्टबुद्धिः श्रद्धयावबोधनमर्हति । उत्कृष्टप्रज्ञाप्राप्त्यर्थं , शास्त्रसिद्धिर्प्रयोजनार्थं विद्यार्जनमावश्यकम् । यतोहि विद्यामाध्यमेनैवेह संसारं पारयति जनः। इशोपनिषदि उक्तञ्च–

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोमयं सह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ।। (11)

अर्थात् यः विद्याम् अविद्यां च ज्ञात्वा मृत्युं तीर्त्वा विद्यया अमृततत्वं प्राप्नोति । अत्र विद्याशब्दःविशिष्टार्थे प्रयुक्तः।सामान्यरूपेण तु यस्य कस्याऽपि विषये ज्ञानार्जनं विद्या उच्यते किन्तु यत् ज्ञानं ज्ञानार्जनयोग्यं न भवति तत् अविद्यानाम्ना प्रतिथम् यथा – द्यूतविद्या ,चौरविद्या इत्यादयः ।एताः विद्याः तु सन्ति किन्तु ज्ञानार्जनधारणयोग्याः च न सन्ति।अतः द्यूतविद्या इत्यासाम् धारणयोग्यज्ञानं नावश्यकम् । विद्याविद्ययोर्भेदस्य ज्ञानमावश्यकम् ।यतोहि अविद्यायाः ज्ञानेनैव विद्यायाः ज्ञानं संभवम्। अनयोः विद्ययोः परस्परभेदविषये ज्ञात्वैव स्वात्मज्ञानं बोधयितुं शक्यते ।विद्या द्विविधा परा अपरा च ।वैदिकयुगे पराविद्या विकसिताऽसीत् यया अक्षरं ब्रह्म मन्यते स्म ।पराविद्या उपनिषद्विद्यास्ति यया अपराविद्या प्रतिष्ठाता ।परब्रह्मापरब्रह्मेति उभे उपनिषद्विद्यया वेदविद्यया च विजिज्ञासितव्ये।

द्वितीया अपराविद्या वेद –वेदांगेतिहास –पुराण –न्यायशास्त्रान्वीक्षिकीत्यादयः विद्यायाः चतुर्दशस्थानानां विषये याज्ञवल्क्येनोक्तम् –

पुराणन्यायमीमांसा धर्मशास्त्राङ्गमिश्रिताः।
वेदस्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दशः ।। या. स्मृ. / आचाराध्यायः /०४

वैदिकशिक्षायाःस्वरूपं द्विविधं वर्तते । प्रथमं वैदिकसूक्तानि ,मन्त्रास्तेषां ब्रह्मणानि। द्वितीयं सूक्तादीनां यज्ञकर्मणि विनियोगः।वैदिकसाहित्यस्य रचनायां वेदाङ्गानां– शिक्षा–कल्प–निरुक्त छन्द–ज्योतिष –व्याकरणानां ज्ञानमपेक्षते ।वेदाङ्गानां ज्ञानं न केवलं मन्त्राणां रचनायै अपितु तेषामर्थबोधाय तदनु विनियोगायाप्यपरिहार्यमस्ति ,मनुनापि उक्तम्–

वेदशास्त्रार्थतत्वज्ञो यत्र तत्राश्रमे वसन्।
इहैव लोके तिष्ठन् स ब्रह्मभूयाय कल्पते ।।
सर्वेषामपि चौतेषामात्मज्ञानं परं स्मृतम्।
तदध्यग्रयं सर्वविद्यानां प्राप्यते ह्यमृतं ततः । मनुस्मृतिः १२/१०२

यःवेदशास्त्रस्यार्थतत्वं जानाति यत्र तत्राश्रमे स्थित्वा नित्यनैमित्तिककर्मानुगृहीतब्रह्मज्ञानेन अस्मिन्नेव लोके तिष्ठन् बह्मतत्वाय कल्पते । आत्मज्ञानं परं तत्त्वमस्ति इत्यर्थं प्रतिपादनाय मनुना विषयाणां विभाजनं

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वर्गत्रयेण कृतम्, यथा – लौकिकं वैदिकं वाऽपि तथाध्यात्मिकमेव च । मनुस्मृतिः २/११ तत्र लौकिकस्तु शिल्पकला ,वाणिज्यौद्योगिकी शिक्षा,वेदवेदाङ्गानां साङ्गोपाङ्गाध्ययनं वैदिकशिक्षा तथा च आन्वीक्षिकी, आध्यात्मिकीशिक्षारूपेण गण्यते ।

एवमेव महाभारते श्रेष्ठयोपपन्नानां जनानां महत्त्वपूर्णोपलब्धिःसंसर्गविद्या प्रतिभाति । तत्र बहूनां पदानां समाहारः संसर्गे लक्ष्यत इति ष्संसर्गविद्यासुष इति पदेन स्पष्टम् । कौरवाः संसर्गविद्यानिष्णाता आसन् ।तद्यथा सोमसूरिणा व्यवहृतं संसर्गविद्या–नाट्य–नृत्य–संगीतादि–मनोरञ्जनात्मिकी प्रतिभाति ।

कौटिल्यस्तु अर्थशास्त्रस्यविनयाधिकरणे विद्यानां परिधिं परिभाषते स्म । तदनुसारेण तत्त्वार्थदृष्ट्या विद्याचतस्रः– आन्वीक्षिकी , त्रयी, वार्ता दण्डनीतिश्च । आन्वीक्षिकी हेतुविद्या –आत्मविद्या अस्ति । ऋक्यजुसामवेदानां समावेशो त्रयीविद्यायां वर्तते ।कृषिपशुपालनव्यापारित्यादिनां निर्देशिका विद्या ,वार्ता । दण्डस्वरूपप्रतिपादिका विद्या दण्डनीतिः वर्तते ।

अतः साररूपेण वक्तुं शक्यते यत् चतस्रविद्यारूपी अमृततत्वं प्राप्त्यर्थं वैदिकशिक्षापद्धतौ वैदिककालानन्तरं सदैव धर्मशास्त्राणामध्ययनाध्यापनं सारभूतं दृश्यते ।तत्र श्रौतसूत्रधर्मसूत्र गृह्यसूत्राणां स्मृतीनां पुराणेतिहासानां चान्यतमं स्थानं वर्तते ।एतैर्विषयैर्वर्णाश्रमसंस्थायाः संरचना विकासश्च समारब्धः ।मनुनापि उक्तम्–

प्रत्यक्षम् चानुमानं च शास्त्रं च विविधागमनम् ।
त्रयं सुविदितं कार्यं धर्मशुद्धिमभीप्सिता ।।
तपो विद्या च विप्रस्य निःश्रेयस्करं परम्।
तपसा किल्विषं हन्ति विद्ययाऽमृतमश्नुते।। मनुस्मृतिः १२/१०५,१०४

,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतज्ञानविज्ञानस्य वैश्विकचिन्तनम्
मनोवैज्ञानिकाधारेण अभिप्रेरणया महत्त्वम्

सुरेन्द्र कुमार शर्मा
शोधच्छात्रः
जगद्गुरूरामानन्दाचार्य राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालय जयपुरम्

कश्चित् प्राणी व्यवहारं किमर्थं करोति ? प्रत्येकं व्यवहारस्य कारणमभिप्रेरणा सन्ति। अभिप्रेणा एका एतादृशी प्रक्रिया वर्तते। यस्यां मनुष्यस्य आन्तरिक शक्तयः वातावरणे मानवान विभिन्न लक्ष्याणां वस्तूनि प्रति निवेदिताः भवन्ति। प्रत्येकं व्यवहारस्याधारः प्रेरकवृत्तिः MOTIVE भवति।
वुडवर्थमहाभागानुसारम् – "प्रेरकवृत्तिः मनुष्यस्य सा मनोदशा वर्तते या निश्चित् उद्देश्यस्य पूर्त्यर्थं तं निश्चितव्यवहार सम्पादनार्थं बाहनाति।"

यत् प्रेरकवृत्तेः त्रीणी कार्याणि सन्ति क्रियायाः प्राररम्भणम् क्रियां लक्ष्यं प्रति निर्देशनम्, लक्ष्यपूर्ति यावत् क्रियायाः निरन्तरता च। यथा उदरे भोजनस्याभावस्यावस्थाम् आवश्यकता, बुभुक्षां प्रणोदनं तथा भोजनस्य सामग्री मुद्दीपनं वक्तुं शक्नुमः।
टामसन महोदयेन अभिप्रेरकाः द्वयोः वर्गयोः विभाजिता दृ

क. प्राकृतिक दृअभिप्रेरणा (NATURAL MOTIVES)

ख. कृत्रिम् दृ अभिप्रेरणा (ARTIFICIAL MOTIVES)

अभिप्रेरणप्रक्रियाया छात्रेषु रुच्युत्पादनं भवति। टामसन महोदयस्य अभिप्रेरणा रूच्युत्पादनस्य कला मन्यते। रूचिः अधिगमस्य कुञ्जिका वर्तते। उचिताभिप्रेरणेन छात्रेषु उच्चादर्शानां स्थायिभावानाञ्च स्थापना भवति। तेषां संकल्पशक्तिः दृढीभवति तथा बालकेषु नैतिकं चारित्रिकं च विकासो सम्भवति।
अस्मिन् शोधपत्रे अभिप्रेरणया सम्बद्धान विविधअंशान् निरुपयति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मानसिकस्वास्थ्य विज्ञानं च मानसिकस्वास्थ्यश्च

निशा पारासर
शोधच्छात्रा:

जगद्गुरूरामानन्दाचार्य राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालय जयपुरम्

येन विश्वविद्यालयस्य एकः स्नातकः क्लीफोर्ड बीयर्स महोदयः स्वगृहस्य चतुर्थतलात आत्महत्याकरणार्थम् अकूर्दत। येन केन कारणेन स जीवितः। विकृत दृ मानसिक दृ स्थितौ त्रीणि वर्षाणि यावत विभिन्नेषु मानसिक चिकित्सालयेषु तेन चिकित्सा प्राप्ता। स्वास्थ्यलाभसमये बहवः अनुभवाः प्राप्ताः। तेषां आधारेण तेन 1908 तमे वर्षे एकं पुस्तकं ए माइन्ड दैट फाउन्ड इटसैल्फ लिखितम्। अनेन पुस्तकेन चिकित्सका मनोवैज्ञानिका मनोचिकित्सकाश्च नवीनरीत्या चिन्तनस्य कृते बाध्याः जाताः। एवं चिन्तनेन मानसिक स्वास्थ्यविज्ञानस्य सूत्रपात सञ्जातः।

यस्य विज्ञानस्य उद्देश्यं सन्तुलितमानसिक विकास करणमस्ति तत् मानसिक स्वास्थ्यविज्ञानं कथ्यते। शाब्दिकार्थे यत् मानसिक स्वस्थं आरोग्यं वा करोति। तत् एव मानसिक स्वास्थ्य दृ विज्ञानमिति। येन प्रकारेण शारीरिकस्वास्थ्य विज्ञानस्य सम्बन्धः शरीरेण भवति। तथैव मानसिकस्वास्थ्य विज्ञानस्य सम्बन्धः मस्तिष्केण भवति। वयं वक्तुं शक्नुम् यत् यस्य उद्देश्यं मानसिकस्वास्थ्यस्य रक्षणं मस्तिष्कं रोगमुक्तकरणं मानसिकरोगाणामुपचारकरणश्च भवति तत् एव मानसिकस्वास्थ्य कथ्यते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

औपनिषदानि विद्याविधानानि

Dr STP KANAKAVALLI
Post Doctoral Research Fellowship
Rastriya Sanskrit Vidyapeetha]
tpty

वैदिककाले मनोवैज्ञानिकपद्धतेः प्राधान्यमासीत् । यतो हि तदानीं शिक्षाविधानं छात्रकेन्द्रितमासीत् । छात्रं कथमध्यापनीयं येन तस्य चिन्तनाशक्तिः, व्यवहारं च उत्तमं भवेत् तद्विषये सर्वदा गुरुः चिन्तयति । छात्रस्य स्तरानुगुणं तं विविधोदाहरणैः बोधयति । समयानुगुणं तं परीक्षत्यपि । तद्वारा छात्रस्य एकाग्रतायाः, बुद्धिकौशलस्य, समयस्पूर्तेश्च परीक्षमपि करोति स्म गुरुः । तदानीं विविधपद्धत्याः पाठनं , पठितांशस्य पर्यवेक्षणं , पुनः मूल्याङ्कनकरणं च इति प्रक्रिया आसीत् ।यदि छात्रः विषयावगहने किञ्चिदमान्द्यं प्रदर्शयति चेत् तदा गुरु तस्य स्तरानुगुणेन अध्यापयति । अत्र गुरुः सर्वदा मित्रवत् आचरति । अत्र

ॐ सह नाववतु ।
सह नौ भुनक्तु ।
सहवीर्यं करवावहै ।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

अनेन मन्त्रेण गुरुशिष्ययोः मध्ये स्नेहवात्सल्यादिभावना दरिदृश्यते ।

शिक्षायाः विधानम् –

अत्र विद्यायाः मुख्योद्देश्यमासीत् व्यक्तित्वविकासः, आत्मसंयमनं, पराविद्यायाः ज्ञानम्, अन्तस्थिताज्ञानस्य दूरीकरणम् इत्यादयः ।

मनोवैज्ञानिकपद्धत्या एवं छात्रकेन्द्रिता आसीत् । अत्र व्याख्यान, प्रत्यक्ष, अनुमान, उदाहरणादिविविधपद्धत्याः अध्यापयन्ति स्म ।

अत्र शिक्षणसूत्राणि सूक्ष्मात् कठिनं प्रति, अनुमानादुपमानं प्रति , अज्ञानात् ज्ञानं प्रति इत्यादि विविधसूत्राणामुपयोगः अकृतम् ।

छात्रस्य सम्पूर्णविकासाय बलमधिकं ददति स्म । तत्र विषयस्य अर्थावगहनेन सह विषयप्रस्तुतीकरणे अपि महत्त्वमधिकमासीत् ।

मूल्याङ्कनं विविधरूपेण स्वीकुर्वन्ति स्म । यथा दृ कुत्रचित् स्थलेषु कण्ठस्थीकरणद्वारा, कुत्रचित् शलाकया, कुत्रचित् सूत्रविधया, कुत्रचित् व्याख्यानेन , कुत्रचित् तर्कविधया च परीक्षां स्वीकुर्वन्ति । समयानुगुणं परीक्षणं कुर्वन्ति स्म । छात्रस्य प्रगतिं दृष्ट्वा पाठनस्य पुरोगतिर्वा पाठनपद्धतिर्वा परिवर्तनं कुर्वन्ति स्म ।

शोधपत्रेऽस्मिन् प्रस्तावितांशाः–

प्रस्तावना

दशोपनिषदः ज्ञानम्

विद्यायाः अध्ययनाऽध्यापनस्य विधानम्

उपसंहारः

इत्येकैकमपि अंशः विस्तरेण निरुप्यते ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दर्शनभेदाः

अभिनव शर्मा
शोधच्छात्र:
दर्शनविभागः
जगद्गुरुरामानंदाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय जयपुर

अस्य वस्तुतः तत्वसाक्षात्काराय भारतीयाभूमिरेव गरियसी । अतः अत्रैव दर्शनानाम् अनादिकालात् प्रचारःप्रसारो वा मन्तव्यः। तथा च अत्रत्यमनीषिणां विचारानेव पुरस्कृत्य दर्शनस्य प्रकाराः किं वा क्रियन्ति दर्शनानि इत्यस्य प्रश्र्नस्य उत्तरमपि भारतीयानुसारमेव भवेदिति निश्र्चन्वन्ति विद्वान्सः।

भारतेऽपि विविधानि दर्शनानि सन्ति प्रचलितानि तथाऽपि मुख्यतया आस्तिकदर्शनं नास्तिकदर्शनमितिकृत्वा दर्शनस्य द्वैविध्यं भणन्ति चिन्तकाः। प्रसङ्गे चात्र यानि वेदानुसारीणि तानि आस्तिकदर्शनानि यानि च वेदविरुद्धानि तानि नास्तिकदर्शनानि इति विज्ञातव्यम् ।

आस्तिकदर्शनेषु षड्दर्शनानि सन्ति प्रसिद्धानि

तथा हि ---- सांख्ययोगन्यायवैशेषिकपूर्वमीमांसा–उत्तरमीमांसा इति ।

यद्यपि वैयाकरणाः स्वकीयं पृथगेव व्याकरणदर्शनं मन्वते अतः सर्वं संकलय्य सप्त दर्शनानि भवन्ति। इमानि सर्वाण्येव तत्वसाक्षात्काराय उपयोगितां वहन्ति यस्य विस्तृतःविचारः शोधप्रबन्धलेखने एव ।

नास्तिकदर्शनानि च पुनः यानि वेदविरुद्धानि तानि सन्ति त्रीणि जैनबौद्धचार्वाकदर्शनानीतिकृत्वा एतेषां त्रैविध्यं प्रसिद्धम्। यद्यपि आधुनिके काले एकम् अन्यदपि नास्तिकदर्शनम् उत्पन्नं यस्य नाम वर्तते मार्क्सवादः यस्य महतासमारोहेन खण्डनमकारि श्रीमत्स्वामिकरपात्रपादैः।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

महाभारतेदाम्पत्यजीवनविमर्शः

मनीषाकुमारी

शोधच्छात्रा

ज.रा.रा.सं.वि.वि

महाभारतमहाकाव्यं एकं एतादृशंमहाकाव्यं यस्मिन् भारतस्य समस्तसांस्कृतिकपक्षाणांसामाजिकपक्षाणां, आध्यात्मिकपक्षाणां, धार्मिकपक्षाणाञ्च वर्णनं वर्तते । महाभारतमहाकाव्ये एकलक्षश्लोकानांसमावेशः वर्तते । वस्तुतः महाभारतंअष्टादशपर्वणस्य एकं अद्भुतंअद्वितीयञ्च महाकाव्यंइतिआधुनिकसंस्कृतज्ञैः कथ्यन्ते । अतः चिन्तनस्य विषयः वर्तते यत् महाभारतमहाकाव्येदाम्पत्यजीवनविषयेकिमपिवर्णनंवर्तते न वा । तर्हिउत्तरमागच्छति यत् महाभारतमहाकाव्येदाम्पत्यजीवनसन्दर्भेबहुनि उद्धरणानिसन्ति । यस्मिन् पाञ्चालनरेशस्य पुत्री द्रौपद्याः दाम्पत्यजीवनं एकं विचित्रं अद्भुतञ्च वर्तते । कारणंतुद्रौपद्याः पञ्च पतयः आसनितिमहाभारतेउल्लिखितंवर्तते । यद्यपि एकस्याः स्त्रीयाः पञ्चपतयः न भवन्तिइतिद्रुपदः अपिकथयति यथा–

नैकस्याबहवः पुंसः श्रूयन्तेपतयः क्वचित् ।

लोकवेदविरुद्धं त्वंनाधर्म धर्मविच्छुचिः।

कर्तुमर्हसिकौन्तेय कस्मात्तेबुद्धिरीदृशी॥

अनेन श्लोकेनस्पष्टंभवति यत् पञ्चपतयः न भवन्तीति शास्त्रोक्तवचनंवर्तते।कारणंतुद्रुपदः शास्त्रज्ञाताआसीत् अत एव उक्तवान् । इतोऽपिमहाभारतस्य एकाकथाविराटनरेशस्य पुत्री चित्रायाः वर्तते । यस्याः पाणिग्रहणंअभिमन्वाः सहअभवत् । चित्रायाः विवाहमपिअद्भुतंअलौकिकञ्च अभवदितिवर्णनंवर्तते । तथापि यासांमहाभारतकालीन स्त्रीणांजीवनमुत्तमं धर्मयुक्तञ्च व्यतीतम् ।

अस्मिन् शोधपत्रे इतोऽपिमहाभारतेवर्णितदाम्पत्यजीवनस्य सन्दर्भितकथायाः वर्णनं कृतोवर्तते । यः वर्तमानसमाजस्य कृतेदर्पणरूपेणमार्गदर्शनं स्व दर्शनञ्च कारयिष्यतिइत्याशयः।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतवाङ्मये मानवीय मूल्यानि

रवि कुमार वर्मा
ज.रा.रा.सं.वि.वि

अस्मिन् भौतिक युगे वर्तमान काले च मानवीय मूल्यानां महती आवश्यकता वर्तते। मानवीयमूल्यानि सन्ति – दया, दाक्षिण्यं , क्षमा, परोपकारः, परस्परं सहयोगभावना, मैत्री, करुणा, प्रेमपूरितप्रेमभावना, परिवारे समाजे च सामञ्जस्यभावना, सच्चरित्रं धैर्यं व त्यागः मनोबलं च इत्यादयः।

संस्कृत साहित्ये वाङ्मये च मानवीय मूल्यानाम् अनेकानि उदाहरणानि सन्ति येभ्यः मानवाः स्वजीवनं सफलं सुन्दरं च कर्तुं शक्नुवन्ति। वर्तमानकाले मानवीयमूल्येषु ह्रासो जायते। मानवो मानवीय मूल्यानि विस्मृत्य स्वविवेक शक्त्या सामर्थ्यम् उचितावसरे न प्रयुज्यते। स्वदैव शक्तिं व्यक्त्वा पाशविकार्येषु संलग्नः जायते यस्य दिग्दर्शनं समाजे दृश्यते।

मानवीय मूल्यानां अभावे मानवः सदाचारं त्यक्तवा दुराचारं प्रति संलग्नो जायते। सूक्ति वर्तते – "शीलं परं भूषणम्"।

पावनभारतभूम्योपरि यत्र प्रत्येकः बालः रामस्वरूपः बालाः च देवीस्वरुपा सन्ति, तत्रैव स्वस्वरुपं निजमानवीय मूल्यान् ज्ञात्वा स्वगृहं स्वपरिवारं स्वसमाजं स्वराष्ट्रं च उन्नतिं प्रति नीत्वा स्वयोगदानं दातुं शक्नुवन्ति।

दया मानवीय मूल्यस्य विषये प्रत्येकस्मिन् मनसि दयापूरितस्य ह्रदयस्य आवश्यकता वर्तते। अस्मिन् विषये श्रीतुलसीदासस्य वक्तव्यं दृ

दया धर्म का मूल है पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छोडिए जब तक घट में प्राण।।

सहयोगस्य दानस्य वा विषये अभावग्रस्तजनान रुप्यकाणाम् वस्त्राणाम् अपि दानं दत्वा नरे एव नारायण स्वरूपमं मत्वा सहयोगः कर्त्तव्यः।

सत्यवादिता विषये श्री कबीरदासस्य वक्तव्यम्

साँच बराबर तप नही झूठ बराबर पाप।
जांके हिरदे सांच है तांके हिरदे आपे।।

"सत्यमेव जयते नानृतम्" मुण्डकोपनिषदि सूक्ति वर्तते। सादृश्यता विषये प्रत्येकं मनुजं सर्वं जनं स्वसमानं मत्वा समाजे विषमतायाः निवारणोः कर्त्तव्यम् विभेदता मानवसमाजं खण्डितं करोति एकरूपतया सभ्यसमाजस्य निर्माणं भवति। जातिगतक्षेत्रगत् भाषागतभेदानां निवारणं कर्त्तव्यं यतोहि अस्माकं उत्पत्तेः कारणं एकमेव ईश्वरः अस्ति श्री गुरूनानक महोदयस्य कथनं अस्ति दृ

अव्वल अल्ला नूर उपाया कुदरत के सब बन्दे।
एक नूर से सब जग उपज्या कौन भले कौन मन्दे।।

रविदास महोदयानुसारं मनः पवित्रमस्ति तर्हि "पात्रे मध्ये एव गंगा वर्तते।

रघुवंश महाकाव्ये रघुकौत्स संवादे दक्षिणा विषये रोचक प्रसंगो वर्तते। शास्त्रेषु दानवीरकर्णस्य नृपबलिः इत्यादीनां दानवीरतायाः उल्लेखो वर्तते। गुरुं प्रति शिष्यस्य दक्षिणायां एकलव्यस्य उदाहरणं अस्ति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आधुनिकसंस्कृतशिक्षायां राजस्थानप्रान्तस्य संस्कृतविदुषामवदानम्

राधेश्याम खाती
शोधछात्रः
जगद्गुरूरामानन्दाचार्य राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः, जयपुरम्

संस्कृतजगति राजस्थानप्रान्तस्य महत्वपूर्णं स्थानं वर्तते। अस्य प्रान्तस्य पावनधरायां अस्याः साहित्यस्य गौरवं अतीव समृद्धं अस्ति। अत्र समये दृसमये अनेके विद्वासः जनिं लब्ध्वा अस्य सम्माने वृद्धिम् अकुर्वन्। सम्पूर्णभारते यदा अविच्छिन्नरुपेण प्रवाहमाना गंगाधारावत् संस्कृतधारा आसीत् तादृशीः स्थितिः संस्कृतस्य राजस्थानेऽपि आसीत्। अत्रापि संस्कारसमन्वित– जीवनशैल्यां प्रवाहमाना आसीत्।

राजस्थानस्य गौरवभूतकुमुदकोकिलसंस्कृतमर्मज्ञ उपमागौरवपदलालित्यं विशारदा "शिशुपालवधम्" महाकाव्यस्य प्रणेता महाकविमाघः जन्मः लब्ध्वा अत्र संस्कृत परम्परायाः श्रीगणेशः कृतवान्। साम्प्रतं शिक्षाक्षेत्रे राजस्थानप्रदेशः उन्नतिपथमारुढो वर्तते। राजस्थाननीयाः जनाः संस्कृतं प्रति विशेषमनुरागं प्रदर्शयन्ति।

राजस्थानस्य विभिन्नाञ्चलेषु विद्वद्भिः संस्कृतभाषायाः प्राच्यविद्यापरम्परां अक्षुण्णां विधातुं यदनुष्ठानं कृतं तद् देशस्येतिहासे सम्मुल्लेखनीयम् वर्तते। अधुना अपि अस्याः भाषायाः गौरववर्धनार्थं राजस्थानप्रान्ते संस्कृतविदुषानां अभ्यासः सततं प्रवर्तमानम्। अस्यां भाषायां विभिन्नविश्वविद्यालयेषु नवीनतमं शोधकार्यं प्रचलितम्। संस्कृतमाध्यमेन लेखनस्य तथा नूतनसाहित्यस्य रचनार्थेभ्यः राजस्थानस्य अग्रणी भूमिका वर्तते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सर्वशक्तीश्वरी सीता

महेशशर्मा (शास्त्री कोसलेन्द्रदास)
सहायकाचार्यो दर्शनविभाग
जगद्गुरुरामानन्दाचार्य–राजस्थान–संस्कृत–विश्वविद्यालय
जयपुरम् – 302026

सकलकुशलदात्रीं भक्तिमुक्तिप्रदात्रीं
त्रिभुवनजनयित्रीं दुष्टधीनाशयित्रीम्।
जनकधरणिपुत्रीं दर्पिदर्पप्रहर्त्रीं
हरिहरविधिकर्त्रीं नौमि सद्भक्तभर्त्रीम्॥

वेदेतिहास–पुराणादिषु सर्वत्र भगवती जगज्जननी जनकनन्दिनी श्रीमद्राघवेणानन्या सीता एव ब्रह्मरूपेण गीयते। तस्या एव भगवत्यारू जानक्याश्चरितं सर्वेषु निगमागमशास्त्रेषु प्रविस्तृतम्। तच्चरितस्य एकैकमप्यक्षरं सर्वपातकनाशकमिति प्राचीनानामाचार्याणां निर्णयरू। सीता शरणागतप्रतिपालनव्रतिनो भगवतः श्रीरामचन्द्रस्य प्राणप्रिया–आद्याशक्तिश्च। भगवत्यारू श्रीरामवल्लभायारू भ्रूकुटिविलासमात्रेण जगतः जन्म–स्थेम–भङ्गादिकार्याणि जायन्ते। श्रूयत एव–

उत्पत्ति–स्थिति–संहारकारिणीं सर्वदेहिनाम्।
सा सीता भगवती ज्ञेया मूलप्रकृतिसंज्ञिता॥1

मूलप्रकृतिसंज्ञका भगवती सीता–

समेषां देहधारिणामुत्पत्ति–स्थिति–संहारकर्त्री मूलप्रकृतिसंज्ञका भगवती सीता एव निमेषोन्मेषसृष्टि–स्थिति–संहारतिरोधानानुग्रहादिसर्वशक्तिसामर्थ्यात्साक्षाच्छक्तिरिति गीयते।2 यस्याश्चक्षुषोः निमेषोन्मेषमात्रेण चिद्–अचित्तत्त्वानां सृष्टि–स्थिति–संहाराश्च सम्भवन्ति, तत्तत्त्वं श्रीसीता एव। सा सर्वशक्तिसामर्थ्यात् साक्षाच्छक्तिरिति श्रीमद्रामायणादिषु वर्णिता। तिरोधान–अनुग्रहगुणावपि तस्यामेव सम्भवतरू। भूर्भूवरू स्वरू सप्तद्वीपा वसुमती त्रयो लोका अन्तरिक्षं सर्वे त्वयि निवसन्ति। आमोदरू प्रमोदः विमोदरू सम्मोदरू सर्वांस्त्वां सन्धत्से। आञ्जनेयाय ब्रह्मविद्याप्रदात्रि धात्रि त्वां सर्वे वयं प्रणमामहे प्रणमामहे।3 हे विदेहराजबालिके! पृथिवी–पाताल–त्रिविष्टपानीति त्रीणि भुवनानि, सप्तद्वीपवती काश्यपी त्रयो लोका आकाशश्च त्वयि (सीतायाम्) एव सुप्रतिष्ठिता। गुरूणां गुरुं वायुपुत्रमाञ्जनेयं त्वमेव ब्रह्मविद्यामध्यापयरू। अत एव लङ्कादहनवानरोऽयं 'सीताशिष्य' कथ्यते। ऋग्वेदेऽपि–

अर्वाची सुभगे भव सीते! वन्दामहे त्वा।
यथा नरू सुभगासिस यथा नरू सुफलाससि॥4

हे असुरनाशकारिणि सीते! वयं तव चरणेषु प्रणमामरू। पदप्रपन्नपालिके देवि! देहि कल्याणं सौभाग्यं परमं सुखञ्च। आथर्वणेऽपि–जनकस्य राज्ञरू सद्मनि सीतोत्पन्ना सा सर्वपरानन्दमूर्तिर्गायन्ति मुनयोऽपि देवाश्च, कार्यकारणाभ्यामेव परा तथैव कार्यकारणार्थे शक्तिर्यस्यारू, विधात्रीश्रीगौरीणां सैव कर्त्री रामानन्दस्वरूपिणी सैव जनकस्य योगफलमिव भाति।5 महात्मनरू जनकस्य गृहे भूम्यामुत्पन्ना कन्या भूमिजा सर्वपरा आनन्दमूर्तिश्च। मुनयरू देवाश्च तस्या एव जानक्यारू गीतकानि गायन्ति। कार्य–कारणाभ्यां परा सा कार्य–कारणशक्तिसम्पन्नास्ति। सा ब्रह्म–विष्णु–रुद्रेन्द्रसेविता सीता ब्रह्माणी–सिन्धुजा–शैलजा–श इत्यासामपि उत्पादिका। इत्थं श्रुतयरू तामेव भगवतीं सीतां परत्वेन वर्णयन्ति।

श्रुतिमाता सीता–

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वाल्मीकिसंहितायां सीता श्रुतिमातृत्वेन वर्णिता। एकदा श्रुतयरू स्वमातापितृविषये जिज्ञासां चक्रुर्यत् अस्माकं पितरौ कौ? ब्रह्माणं निकषा तारू स्वप्रश्नमुपस्थाप्य निवेदयामासुः–

कास्माकं जननी देव करू पितेति निबोधय।

तासां श्रुतीनां जिज्ञासाशमनार्थं चतुर्मुखो ब्रह्मोवाच–

तामेव जानकीं वित्त जननीमात्मनरू पराम्।
श्रीरामं पितरं वित्त सत्यमेतद्वचो मम॥
नित्यां निरञ्जनां शुद्धां रामाभिन्नां महेश्वरीम्।
मातरं मैथिलीं वन्दे गुणग्रामां रमारमाम्॥
आद्यां शक्तिं महादेवीं श्रीसीतां जनकात्मजाम्।
सीतायाश्च परादेव्या लीलामात्रमिदं जगत्॥

सदाशिवसंहितायामपि श्रीसाकेतधाम्नो वर्णनं प्राप्यते–

तन्मध्ये जानकी देवी सर्वशक्तिनमस्कृता।

श्रीबृहद्विष्णुपुराणेऽपि श्रीमन्मैथिलीमाहात्म्ये–

जगद्धात्रीं महामायां महारूपां सनातनीम्।
दृष्ट्वा प्रमुदितारू सर्वे देवताप्सरकिन्नरारू॥
जानक्यंशादिसम्भूताऽनेकब्रह्माण्डकारिणी।
सा मूलप्रकृतिर्ज्ञेया महामायास्वरूपिणी॥

श्रीमहाशम्भुसंहितायां महर्षिरगस्त्यरू स्वप्रियशिष्यं सुतीक्ष्णमेवं प्रबोधयामास–

सीताकलांशाद्बह्व्यश्च शक्तयरू सम्भवन्ति हि।

श्रीसम्प्रदायाचार्या सीता–

सीतानाथप्रवर्तितवैदिकश्रीसम्प्रदायस्य मध्यमाचार्यरू 'सर्वे प्रपत्तेरधिकारिणो मतारू' इति उद्घोषयन् रामभक्त्या अनुपमप्रचारको वैष्णवाचार्यरू श्रीमद्रामानन्दाचार्यो 'वैष्णवमताब्जभास्कराख्ये' सिद्धान्तग्रन्थे अपरिमितशक्तिसम्पन्नां भगवतीं सीतां स्तौति–

ऐश्वर्यं यदपाङ्गसंश्रयमिदं भोग्यं दिगीशैर्जग–

च्चित्रं चाखिलमद्भुतं शुभगुणा वात्सल्यसीमा च या।
विद्युत्पुञ्जसमानकान्तिरमितक्षान्तिरू सुपद्मेक्षणा
दत्तां नोऽखिलसम्पदो जनकजा रामप्रिया सानिशम्॥6

अस्यायमर्थो यद्दिगीशैरू (इन्द्रादिभिरू) भोग्यम् (भोक्तुं योग्यम्) ऐश्वर्यं (स्वर्गादिराज्यम्) यदपाङ्गसंश्रयं (यस्यारू श्रीसीतायारू नेत्रकटाक्षाश्रितम्) चित्रम् (चतुरशीतिलक्षयोनिभेदाद्दुर्ज्ञेयम्) अद्भुतम् (आश्चर्यजनकम्) इदमखिलं जगच्च यदपाङ्गसंश्रयम्, या च जनकजा शुभगुणा, (शरणागतरक्षणादिरूपकल्याणगुणवती) वात्सल्यसीमा, विद्युत्पुञ्जसमानकान्तिरू, अमितक्षान्तिरू, सुपद्मेक्षणा (अस्ति) सा रामप्रिया जनकजा नरू (अस्मभ्यम्) अखिलसम्पदरू (सर्वारू सम्पत्तीरू) अनिशम् (निरन्तरम्) दत्तात् (ददातु)। विशिष्टाद्वैतराद्धान्तप्रतिपालको भगवत्पाद आचार्यरामानन्दरू देवीं जानकीं संप्रार्थयति–श्रीरामस्य प्रिया वल्लभा सीता अस्मभ्यम् अखिलसम्पदरू सर्वारू सम्पत्तीरू सर्वविधैश्वर्याणि निरन्तरं ददातु। सा का दिगीशैर्दिशां प्राच्यादीनामीशैस्तत्र–तत्राधिकृताधिपतिभिर्भोग्यमैश्वर्यं स्वर्गादिराज्यं यदपाङ्गसंश्रयं यस्या रामप्रियाया अपाङ्गरू नेत्रकटाक्ष एव संश्रयरू सम्यगवलम्बो यस्य तत्। किञ्च इदमद्भुतं जगच्च यदपाङ्गसंश्रयम्। कीदृशं जगद् अखिलं स्थावरजङ्गमात्मकम्। पुनरू चित्रं जात्यादिभिरनन्तदुर्बोधभेदम्। या

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

च रामप्रिया वात्सल्यस्य सीमा अवधिभूता। खलरावणविषयेऽपि निरूसीमकृपायास्तस्या 'तेन मैत्री भवतु ते यदि जीवितुमिच्छसि' इत्युक्तेरू। शुभगुणारू पातिव्रत्याश्रितरक्षणादयो यस्या सा। विद्युतां तडिल्लतानां पुञ्ज समूहो राशिरिति यावत् समाना तुल्या कान्तिरू शरीरप्रमेयसौन्दर्यातिरमणीयता यस्यारू सा। अतिमनोहरे पद्मसदृशे ईक्ष्यते दृश्यते रूपमाभ्यामितीक्षणे नेत्रे यस्यारू सा। पुनरू न मितं मानं यस्यारू साऽमिता प्रमातुमशक्या क्षान्तिरू क्षमा यस्यारू साऽमितक्षान्तिरू। तथा च दुष्टरावणवधवृत्तान्तकथनाय स्वसमीपमागतं स्वानवधिपीडाकारिराक्षसीगणहननाय प्रार्थयन्तमुद्यतं वीरवरं श्रीहनुमन्तं प्रति तयोक्तम्–

राजसंश्रयवश्यानां कुर्वन्तीनां पराज्ञया।
विधेयानां च दासीनां करू कुप्येद्वानरोत्तम॥
भाग्यवैषम्ययोगेन पुरा दुश्चरितेन च।
मयैतत्प्राप्यते सर्वं स्वकृतं ह्युपभुज्यते॥
प्राप्तव्यं तु दशायोगान् मयैतदिति निश्चितम्।
दासीनां रावणस्याहं मर्षयामीह दुर्बला॥
आज्ञप्ता रावणेनैता राक्षस्यो मामतर्जयन्।
हते तस्मिन्न कुर्वन्ति तर्जनं वानरोत्तम॥
अयं व्याघ्रसमीपे तु पुराणे धर्मसंहितरू।
ऋक्षेण गीतरू श्लोकोऽस्ति तं निबोध प्लवंगम॥
न पररू पापमादत्ते परेषां पापकर्मणाम्।
समयो रक्षितव्यस्तु सन्तश्चारित्रभूषणारू॥
पापानां वा शुभानां वा वधार्हाणां प्लवंगम।
कार्यं करुणमार्येण न कश्चिन्नापराध्यति॥
लोकहिंसाविहाराणां रक्षसां कामरूपिणाम्।
कुर्वतामपि पापानि नैव कार्यमशोभनम्॥

क्लेशहारिणी सीता–

गोस्वामिश्रीतुलसीदासोऽपि 'श्रीरामचरितमानसे' स्वग्रन्थनिर्विघ्नसमाप्तिपर्यन्तकार्यजातस्य सुतरामेव सिद्ध्यर्थं मङ्गलाचरणे एव भगवत्यारू जानक्यारू श्रीचरणकञ्जयोर्वन्दनं विदधाति–

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्॥

तेन महात्मना तुलसीदासेन नैकशास्त्राणामाशयोऽपि 'श्रीरामचरितमानसे' उपस्थापितारू, यत्र भगवती जानकी एव मूलतत्त्वम्–

जासु अंस उपजहिं गुनखानि। अगनित लच्छी उमा ब्रह्मानी॥
भृकुटि बिलास जासु लय होई। राम बाम दिसि सीता सोई॥
लखा न मरम राम बिन काहू। माया सब सिय माया माहू॥

'विनयपत्रिकायाम्' अपि–

जयति श्रीस्वामिनी सीय सुभ नामिनी
दामिनी कोटि निज देह दरसै।
इंदिरा आदि लै मत्त–गज–गामिनी
देव–भामिनि सबै पाँव परसै॥

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

एकस्य भक्त –कवेरू स्तुतिरियम्–

सुरारू सर्वे खर्वास्तव चरणमूले सुरतरो–
स्त्वमासीना मूलेऽनुचितमिति मत्वा सुरतरुरू।
भवन्मञ्चाधस्तादभुवि विविधरत्नेषु बहुधा
विशन् प्रायश्चित्तं चरति बहुरूपैरू परतमे॥7

रामानन्दसम्प्रदायेश्वरी सीता–

निर्गुण–सगुण–सीतारामभक्तिपरम्परायः मुख्यालयः काश्यामस्ति। तत्रास्ति पञ्चगङ्गाघट्टरू। तस्मिन्नेव घट्टे 'श्रीमठ' इतिं नामधेयं श्रीरामभक्तिसम्प्रदायस्य (श्रीरामानन्दसम्प्रदायस्य) मूलाचार्यपीठम्। अस्य सम्प्रदायाचार्याणां क्रमे द्वितीयस्थाने भगवती सीता एव वर्तते। सम्प्रदायस्य आद्याचार्यरू भगवान् श्रीरामचन्द्ररू। अतरू सम्प्रदायस्य गुरुपरम्परामन्त्रेऽपि आद्याचार्यत्वेन सीतानाथरू श्रीरामचन्द्रो मध्यमाचार्यत्वेन च श्रीरामानन्दाचार्यरू स्मर्यते।

सीतानाथसमारम्भां रामानन्दार्यमध्यमाम्।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम्॥

श्रीरामतारकमन्त्रराजस्य परम्परा जगन्मात्रा सीतया एव प्रारब्धा। सैव श्रीरामदूताय हनुमते षडक्षरश्रीराममन्त्रं सर्वप्रथममुपदिदेश। सम्प्रति आचार्यपीठोपरि विराजमानारू स्वामिश्रीरामनरेशाचार्यमहाराजारू एकदा स्वप्रवचने उद्‌घोषितवन्तो यत्सनातनधर्मपरम्परायां शास्त्राणां योऽयं क्रमरू अस्माकं पूर्वजैरुपकल्पितरू तत्र श्रुतेरू प्रथमं स्थानम्। तदनु लौकिकसंस्कृतसाहित्ये सर्वप्रथमं स्थानं भजते श्रीमद्‌भगवद्वाल्मीकिविरचितं श्रीमद्रामायणम्। अस्मिन् हि रामायणे भगवतो वाल्मीकिमहर्षेरयं डिण्डिमो घोषरू – इदं रामायणं कृत्स्नं सीतायाश्चरितं महत्। अनेन स्पष्टमेव यत् भारतपरम्परा मातरं सीतामेवानुगच्छति।

1. श्रीरामतापनीयोपनिषद्–उत्तरार्द्धरू
2. श्रीसीतोपनिषद्
3. श्रीमैथिलीमहोपनिषद्
4. ऋग्वेदरू 3/8/9
5. आथर्वणे–उत्तरार्द्धे
6. श्रीवैष्णवमताब्जभास्कररू 3
7. श्रीजानकीचरणचामरस्तोत्रम्

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वर्त्तमानपरिप्रेक्षे मानवाधिकारशिक्षासन्दर्भे शुक्लयजुर्वेदस्यानुशीलनम्

मौसुमीपाल (गबेषिका)
राष्ट्रियसस्कृतसंस्थानम्
श्रीसदाशिवपरिसरः , पुरी

शोधनवनीतम्–सर्वज्ञानमयो हि सः इति मनुस्मृतौ वेदस्यैव सर्वविधज्ञाननिधानत्वमुद्घोषितम्। वेदः शाश्वतस्थायिनः मानवहितप्रापकाः , मनुजकर्त्तव्यबोधकाः , शुभाशुभनिर्देशकाः , जीवनस्योन्नायकाः , विश्वहितसम्पादकाः , आचारसञ्चारकाः , सुखशान्तिसाधकाः , ज्ञानालोकप्रसारकाः सत्यतायाः सरण्यः , आशायाः आश्रयाः , नैराश्यविनाशकाः , धर्मार्थकाममोक्षादि चतुर्वर्गफलप्राप्तिसोपानस्वरूपाः भारतीयसंस्कृतेः परिपोषकाः सन्ति ।

चतुर्षु वेदेषु यजुर्वेदस्य स्थानमतीव महत्वपूर्णमस्ति । यजुर्वेदस्वीकृतः सम्प्रदायः द्विधा विभज्यते । यथा - आदित्यसम्प्रदायः , ब्रह्मसम्प्रदायश्चेति । शतपथब्राह्मणानुसारेण आदित्ययजुः शुक्लयजुर्वेदनाम्ना विख्यातोऽस्ति , तथा याज्ञवल्क्येनाख्यातोऽस्ति यत् **- आदित्यानीमानि शुक्लानि यजूंषि वाजसनेयेन याज्ञवल्क्येनाख्यायन्ते।** ब्रह्मसंम्प्रदायस्य प्रतिनिधिः कृष्णयजुर्वेदश्चास्ति ।

अस्मिन् यजुर्वेदे मुख्यतः विविधानां यज्ञानां सविस्तृतं वर्णनं वर्त्तते । अस्मिन् वेदे मानवजीवनस्य नैतिकमूल्यबोधविषये आदर्शचरणसम्बन्धे विभिन्नानि तथ्यानि वर्त्तन्ते । यजुर्वेदस्य मन्त्रद्रष्टा ऋषिः विश्वस्य कल्याणसाधनाय स्तौति ।

भारतीयवाङ्मये मानवाधिकारशिक्षा सृष्टे आरम्भकालादेव अस्ति । शिक्षाप्रणाली शिक्षापद्धतिः इदानीं भिन्ना । अधुना प्रत्यक्षरूपेण भारतीयवाङ्मयेन मानवाधिकारशिक्षायाः प्रभावः पूर्णतः परिलक्ष्यते । शुक्लयजुर्वेदे मानवाधिकाररक्षणे सर्वेषां हितं चिन्तितं यथा -

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्ट्वा संस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ।
विश्वानि देवं सवितर्दुरितानि परासुवः यद् भद्रं तन्न आसुव ।। (शु.य. २५.२१)

ईदानीं शिक्षाक्षेत्रे मानवाधिकारविषयः अतीव गुरुत्वपूर्णः भवति । एषा मानवाधिकारशिक्षा वैदिककालादेव आसीत् । वेदेषु स्पष्टरूपेण मानवाधिकारशिक्षासंबन्धिविषयाः वर्णिताः दृश्यन्ते । शुक्लयजुर्वेदे मानवाधिकारशिक्षायाः स्वरूपविषये यः परिचयं प्राप्यते अधुनातनसमाजे भिन्नदृष्ट्या तत् द्रष्टुं शक्यते । तथापि शुक्लयजुर्वेदे या मानवाधिकारशिक्षा लभ्यते सा इदानीम् आधुनिकयुगे उपयोगिनी कथं भवेत् तथा तस्याः शिक्षायाः कथं संरक्षणं भवेत् इति हेतोः वर्त्तमानपरिप्रेक्षे मानवाधिकारशिक्षासन्दर्भे शुक्लयजुर्वेदस्यानुशीलनम् इति प्रस्तूयमानस्य शोधबन्धस्यास्य मुख्यालोचितो विषयत्वेन स्थापितोऽस्ति ।

कूटशब्दाः- शुक्लयजुर्वेदः , मानवाधिकारः , मानवाधिकारशिक्षा ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पाणिनीयसूत्राणां वर्तमानसन्दर्भे भाषातः इतरोपयोगिता प्रतीकात्मकगूढार्थस्थापनञ्च

वेदान्ती सिंहः
शोधच्छात्रा (व्याकरणशास्त्रम्)
जगद्गुरूरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः

नैकस्मिन् शोधे पाणिनिरचितव्याकरणस्य मनोवैज्ञानिकतायाः तार्किकतायाश्च भाषिकदृष्ट्या विश्लेषणं समुपलभ्यते। भाषातः इतरोपयोगितायाः क्षेत्रेऽपि अन्य वैज्ञानिकतत्त्वानां तत्र प्रतीकात्मकरुपेण समावेशः। प्रतीकात्मकरुपेण पाणिनीयसूत्रेषु गूढार्थः कथम् ? इत्यस्मिन् विषये तुलनात्मकाध्ययनेन ज्ञातं यत् सम्पूर्णाष्टाध्याय्यामेव प्रबन्धनशास्त्रं विद्यते सर्वत्र। एवमेव "आदिरन्त्येन सहेता" इति सूत्रं समूहकार्यस्योत्तमोदाहरणम्। तथा च "अन्तादिवच्च" इत्यनेन जीवनविज्ञानावस्थाध्ययनविषये प्रतीकात्मकरुपेण "बाल्यावस्थावृद्धावस्थयोः साम्यमिति तथ्यमुद्घाटितम्। अन्यच्च "तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्" इति सूत्रेण आन्तरिकबाह्यगुणयोः साम्यं तत्रावश्यकं मैत्र्यां (सावर्ण्ये) इति मैत्रीविज्ञानस्य तथ्यं स्पष्टम्। इतोऽपि नैतिकविज्ञाने उच्चौरूदात्तः", नीचौरनुदात्तः समाहारः स्वरितः इत्येतैः सूत्रैः मानवव्यवहारे सन्तुलनं कथं भवित्तव्यमिति दृश्यते। निष्कर्षोऽस्ति। भाषायाः व्याकरणिकप्रक्रियायां सूत्रेषु जीवनस्य व्यावहारिकप्रक्रिया प्रतीकात्मकरुपेण विद्यमानाऽस्ति" इति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शोधोपकरणानि तेषां प्रयोगश्च

डॉ.कुलदीप सिंहः
सहायकाचार्यः (शिक्षा)
ज.रा.रा.रा.सं.वि.वि, जयपुरम्

साधकतमं करणम् इति पाणिनेः सूत्रानुसारं क्रियासिद्धौ प्रकृष्टोपकारकं करणसंज्ञं स्यादिति स्पष्टमेव अर्थात् क्रियायाः सिद्धयर्थं यस्य कस्यापि साधनत्वेनोपयोगः तदेव उपकरणं भवति। इदमुपकरणम् अनुसन्धानेषु समस्यायाः समाधानायोपकरोति। शोधसमस्यायाः चयनात्परं समस्याया सम्बन्धितस्य साहित्यस्याध्ययनं भवति तेन उचितस्य विधेः उपकरणस्य च ज्ञानं जायते।

शैक्षिकशोधेषु विशेषतया व्यवहृतानुसन्धाने शोधोपकरणस्य महद्योगदानं भवति। शोधपकरणानि बहूनि भवन्ति। समस्यायाः प्रकृतेरनुगुणमुपकरणस्य चयनं भवति। प्रतिदर्शसस्य माध्यमेन यैः साधनैः आधारसामग्र्याः एकत्रीकरणं क्रियते तानि साधनानि शोधोपकरणत्वेन (Research Tools) ज्ञायन्ते।

एते विधयः एतानि साधनानि वा पूर्वनिर्धारितानि भवितुमर्हन्ति अथवा शोधकर्त्रा आवश्यकतानुगुणं निर्मितान्यपि शक्यन्ते।

शोधोपकरणानां सामान्यतया तिस्रः विशेषताः भवन्ति । यथा–

1. प्रासंगिकता (Relevance) 2. विश्वसनीयता (Reliability) 3. वैधता (Validity)

1. **प्रासंगिकता (Relevance)–** अत्र शोधोपकरणस्य उपयुक्तता उपयुज्यता च अन्तर्भवतः। अर्थात् आधारसामग्र्यास्संग्रहणाय इदमुपकरणं उपयुक्ततमं वर्तते इति निश्चेतुं शक्नुयात्। यदि आधारसामग्र्याः संग्रहणं सम्यग्तया भवति तर्हि शोधसमस्यायाः निष्कर्षावधारणे क्लेशः न भवति।

2. **विश्वसनीयता (Reliability)–** अत्र शोधोपकरणस्य समय–स्थान–परिस्थित्यादीनां समरूपता स्यात्। अर्थात् एकस्मिन् राज्ये केनापि विशिष्टोपकरणेन प्राप्ताधारसामग्री राज्यान्तरे अपि समरूपा स्यात्। यदि तत्र न्यूनाधिक्यं भवति तर्हि तदुपकरणमविश्वसनीयं भवति ।

3. वैधता (टंसपकपजल)– शोधोपकरणे प्राप्ताधारसामग्र्याः वास्तविकता सोद्देश्यता च अत्रान्तर्भवतः। इदमप्यवधेयं यत् उपकरणस्य विश्वसनीयता, वैधतायाः परिसूचका स्यादिति नावश्यकी इति परं यदि शोधोपकरणस्य वैधता वर्तते तर्हि तद् अवश्यमेव विश्वसनीयं भवेत्, अतः शोधकर्ता पूर्वमुपकरणस्य वैधतां निश्चिनुयात् ।

शोधोपकरणैः परिमाणात्मकाः (Quantitative) गुणात्मकाश्च (Qualitative) परिणामाः प्राप्यन्ते। परिमाणात्मकान् परिणामान् विश्लेषयितुं तालिकानां, वर्गीकरणानां, बिन्दुरेखीयप्रदर्शनानाञ्च प्रयोगो भवति एवमेव गुणात्मकान् परिणामान् विश्लेषयितुं तार्किक–संक्रियाणां विशेषतया प्रयोगः दृश्यते।

इत्थं आदौ सामग्रीणां प्रकारतामभिलक्ष्य परिमाणात्मकं गुणात्मकञ्च शोधोपकरणं निश्चीयते तदनु यथेष्टं शोधोपकरणं स्वीक्रियते। वस्तुतः शोधोपकरणं आधारसामग्र्यास्साधनं भवति । इदमुपकरणं प्रायशः षडधा विभक्तमस्ति।

1. विशिष्टम् (Unique) 2. संरचितम् (Structured) 3. अर्द्धसंरचितम् (Semi Structured) 4. असंरचितम् (Unstructured) 5. प्रमापिकृतम् (Standardiged) 6. अर्द्धप्रमापिकृतम् (Semi Standardiged)।

शैक्षिकानुसन्धाने समस्यायाः अनुगुणमेव उपकरणस्य चयनं कृत्वा आधारसामग्र्यः संकलनं भवति शैक्षिकानुसन्धानेषु उपयुज्यमानानामुपकरणानां विवरणम् इत्थं वर्तते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

1. प्रेक्षणम् (Observation)।
2. निर्धारणमापिनी (Rating Scale)।
3. परीक्षाः (Tests)।
4. समाजमितिप्रविधयः (Sociometric Techniquè)।
5. मापिनी (Scale)।
6. साक्षात्कारः (Intervieع)।
7. प्रश्नावली (Questionnaire) ।
8. विषयवस्तुविश्लेषणम् (Content analysis)।

1. प्रेक्षणम् (Observation)– प्रेक्षणं स्वाभाविकघटनानां विषये चक्षुर्भ्यां क्रियमाणं विचारपूर्वकमध्ययनं वर्तते। प्रेक्षणस्योद्देश्यं सामाजिकघटनानां सम्बन्धिततत्त्वानां प्रकृतेः परिज्ञानमस्ति। प्रेक्षणं प्रकृतिगतं, अनियन्त्रितं, असंरचितञ्च भवति। वस्तुतः सामाजिकसम्बन्धानां विषये ज्ञानस्योदयः अनियन्त्रितप्रेक्षणेनैव जायते। प्रेक्षणकर्ता शोधाय प्रासंगिकव्यवहाराणामेव प्रेक्षणं करोति। प्रेक्षणाय टेपरिकार्डर, पल्सकाउण्टर, कैमरा प्रभृतीनि आधुनिकोपकरणानि मनोवैज्ञानिकोपकरणानि च उपयुज्यन्ते। एभिः उपकरणैः शोधप्रक्रियायाम् आत्मनिष्ठतायाः अपेक्षया वस्तुनिष्ठतायाः समावेशः सञ्जायते।

2. निर्धारणमापिनी (Rating Scale)– विषयवस्तुनः अंगानि प्रति ध्यानाकर्षतीयं कस्यापि चरस्य श्रेणीं गहनताञ्च निश्चिनोति। **जॉन डब्ल्यू बैस्ट** महोदयस्य नये निर्धारणमापनी व्यक्तेः गुणात्मकं विवरणं प्रस्तौति। वस्तुतः इयं कस्यापि परिस्थितेः वस्तुनः व्यक्तेश्च विषये विशिष्टयोग्यतायाः निर्धारणं कर्तुमुपकरोति। अत्र गुणात्मकतथ्यानि मात्रात्मकतथ्येषु परिवर्तितानि भवन्ति। निर्धारणमापिन्याः सप्तप्रकाराः उपलभ्यन्ते ते च इत्थं सन्ति।

क. वर्णनात्मकमापिनी **ख.** समूहप्रतिशतमापिनी **ग.** संख्यात्मकमापिनी **घ.** आरेख–मापिनी **ङ.** मानकमापिनी **च.** संचयीबिन्दुभिः मापनम् **छ.** विकल्पनिर्बन्धित–निर्धारणमापिनी।

3. परीक्षाः (Test)– मानकीकृताभिः परीक्षाभिः बुद्धि–अभिक्षमता–प्रवणतेत्यादीनां मापनं सम्पद्यते इमाः मानकीकृतास्स्वनिर्मिताश्च अनुप्रयुक्ताः भवन्ति। इमे व्यक्तेः अनुक्रियाः ज्ञात्वा संख्यात्मकानङ्कानाधृत्य परीक्षणं भवति। इमे अंकाः व्यक्तेः सम्पूर्णस्य व्यवहारस्य प्रतिबिम्बभूतास्सन्तः परिमाणात्मकमात्रां संसूचयन्ति। उत्तमायाः परीक्षायाः तिस्रः विशेषतास्सन्ति वस्तुनिष्ठता, विश्वसनीयता, वैधता च।

4. समाजमितिप्रविधयः– सामाजिकसमूहस्य गठनम्, सामाजिकसम्बन्धानां ज्ञानम्, समूहेभ्यः अत्यन्तं लोकप्रियस्य जनस्य च विशेषतानां परिज्ञानं समाजमितिप्रविधिभिर्जायते। अर्थात् कस्मिन्नपि समूहे कस्यापि विशिष्टस्य जनस्य संस्थितेः अन्तर्वैयक्तिकसम्बन्धानाञ्च परिज्ञानाय विधयः उपकुर्वन्ति।

5. मापिनी– शैक्षिकानुसन्धानेभ्यः व्यवहारवादानुसन्धानेभ्यश्चेयं मापिन्युपयुज्यते। शोधकर्ता अनुसन्धानस्योद्देश्यानि मनसि निधाय मापिन्याः निर्माणमपि कर्तुं शक्नोति। अथवा पूर्वनिर्मिता अपि भवितुमर्हति । मापिन्यः संख्यात्मकमानानां संग्रहभूतास्सन्ति यासु प्रयोज्यानां, वस्तूनाञ्च विशेषताः परिमाणात्मके स्वरूपे सन्निहिताः भवन्ति। अभिवृत्तीनां निर्णयानां विषये प्रत्यक्षीकरणाय अन्तराल–आधारसामग्री सम्प्राप्ता भवति मापिन्याम्। सामान्यतया इयं चतुर्धा उपयुज्यते।

क. लिकर्टमापिनी– इमां समेकितनिर्धारणमापिनी इत्यपि कथ्यते।
ख. थर्स्टनमापिनी– इमां समतुल्यभासी अन्तरालविधिरपि कथ्यते।
ग. गटमैनमापिनी– अस्याः संचयीमापिनी इति नामान्तरं वर्तते।
घ. आसगुड–सूसी–टैननबॉममहोदयैः संरचिताः शब्दार्थ–विभेदकमापिनी।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

6. साक्षात्कारः– मानसिकसर्वेक्षणमिति नामान्तरं वर्तते साक्षात्कारस्य। साक्षात्कारे प्रत्यक्षसम्पर्केण व्यक्तेः वाञ्छितक्षेत्रस्य विषये अभीष्टसूचनानां संग्रहः जायते। फ्रेंच भाषायाः एन्टरह्वाई इत्यस्मात् शब्दात् इन्टरव्यू इति शब्दः निष्पन्नः। व्यक्तिगतसम्बन्धैः सूचनानां संधारणं क्रियते फलतः सूचनासु विश्वसनीयता अधिका भवति। अयं साक्षात्कारः द्विविधः भवति संरचितः असंरचितश्च। संरचिताख्ये साक्षात्कारे प्रश्नानां सूची भवति तस्याः सूच्याः एव प्रश्नाः भवन्ति परं असंरचिते साक्षात्कारे पूर्वनिर्धारितानां प्रश्नानां सूची न भवति अत्र प्रश्नानां संख्या, भाषादि अनिर्धारिता भवति।

7. प्रश्नावली– दत्तांशानां संकलनाय सामान्यतया त्रयः विधयः उपकुर्वन्ति। प्रश्नविधिः, व्यवहारप्रेक्षणविधिः, अभिलेखविधिश्च। परं प्रश्नावली द्वारा दत्तांशानां संकलनं प्रचुरतया दृश्यते। अस्यां प्रश्नाः मौखिकाः, लिखिताश्च भवितुमर्हन्ति। प्रश्नानां निर्माणात्परं प्रश्नावल्याः विश्वसनीयतायाः वैधतायाश्च परिज्ञानमपि करणीयं भवति इयं प्रश्नावली स्वनिर्मिता पूर्वनिर्मिता वा भवितुमर्हति।

8. विषयवस्तुविश्लेषणम्– विशिष्टानां योग्यतानां निर्धारणाय, चराणां मापनाय तेषां परिमाणात्मकविश्लेषणाय चायं विधिः उपकरोति। अस्य विधेः दस्तावेजी विश्लेषणम् इति नामान्तरं वर्तते। अयं विधिः व्यक्ताव्यक्त विषयवस्तुनोः विश्लेषणं करोति। गुणात्मकपरिमाणात्मकविश्लेषणयोः उपयोगः अस्मिन्विधौ भवति।

इत्थमुपर्युक्तैः उपकरणैः शोधकर्ता स्वीकृतसमस्यायाः दत्तांशानां संकलनं कर्तुं शक्नोति सर्वेष्वपि उपकरणेषु विश्वसनीयतायाः वैधतायाश्च अवधानमवश्यमेव स्यात् तदभावे शोधस्य निष्कर्षाः अविश्वसनीयाः सन्दिग्धाश्च भवितुमर्हन्ति।

सन्दर्भाः–

1. कर्लिजर फ्रेड एनः फाउन्डेशन्स ऑफ बिहेवियरल रिसर्च, सुरजीत पब्लिकेशन्स, 7के, कोल्हापुर रोड, कमलानगर, दिल्ली, 1975।
2. औपनेहाइम ए.एनः क्वेश्चनेयर डिजाइन एण्ड एप्टिट्यूड मेजरमेन्ट, लन्दन, 1966।
3. पाण्डेय के.पी.– फण्डामेन्टल्स ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, अमिताश प्रकाशन, मेरठ।
4. ट्रैवर्स एम.डब्ल्यू– ऐन इन्ट्रोडक्शन टु एजुकेशनल रिसर्च, द मैक्मिलन कम्पनी 1961।
5. त्रिपाठी लालबचन– मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान पद्धति, हरप्रसाद भार्गव, 4/230, कचहरी घाट, 1988।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सांख्ययोगदर्शने तत्त्वनिरुपणम्

शोधच्छात्रा अर्चना
श्री लाल बहादुरशास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ,
कट्वारिया सराय

अस्ति भारतीयसंस्कृतेः मूले भारतीयदर्शनशास्त्रेतिहासस्य विकसितं स्वरुपं तु सर्वविदितमेव तत्रापि सांख्ययोगदर्शनस्य महत्त्वमत्यन्तमेवाद्वितीयं वर्तते।

संख्याबुद्धिर्ज्ञानम् 'इति कोशवाक्यानुसारेण सांख्यशब्दो ज्ञानपरः। संख्यामधिकृत्य प्रवृत्तं शास्त्रं सांख्यमित्यभिधीयते । अतएव सांख्यशास्त्रस्यापरो पर्यायः ज्ञानशास्त्रं वर्तते । व्यक्ताव्यक्तज्ञानां विवेकस्वरुपं भेदपूर्वकं ज्ञानमेव विवेकम् इत्यभिधीयते।

योगदर्शनस्य प्रथमोपदेष्टरुपेण हिरण्यगर्भो ब्रह्मा श्रूयते । परन्तु साम्प्रतं हिरण्यगर्भोपदिष्टः योगः नहि समुपलभ्यते। साम्प्रतम् अस्य योगदर्शन्सोपलब्धिः भवति । तद्योगदर्शनं महर्षिपतञ्जलि कृतमेव वर्तते। योगदर्शनं चतुर्षु पादेषु विभक्तो वर्तते । समाधि–साधन–विभूतिकैवल्याख्या इमे चत्वाराः पादाः सन्ति। योगस्यस्वरुपं निरुपयता महर्षिणा पतञ्जलिना सूत्रितम्– योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः इति सूत्रस्य व्यासभाष्ये अभिहितम्–

'योगः समाधिः। स च सार्वभौमश्चित्तस्य धर्मः। यस्य चित्तस्य वृत्तीनां निरोधः योगेन क्रियते, तस्य चित्तस्य पञ्चावस्थाः भवन्ति। इमावस्थाः एव चित्तभूमिशब्देनाभिधीयन्ते। चित्तभूमीनां नामानि सन्ति क्षिप्तर्मूढं विक्षिप्तमेकाग्रं निरुद्धमिति चित्तभूमयः । तत्र विक्षिप्ते चेतसि विक्षेपोपसर्जनीभूतः समधिर्न योगपक्षे वर्तते। यस्त्वेकाग्रे चेतसि सद्भूतमर्थं प्रद्योतयते । क्षिणोति च क्लेशान् कर्मबन्धनानि श्लथयति निरोधमभिमुखं करोति स सम्प्रज्ञातो योग इत्याख्यायते । स च वितर्कानुगतः विचारानुगतः आनन्दानुगतः अस्मितानुगतः। सर्ववृत्तिनिरोधे त्वसम्प्रज्ञातः समाधिः" इति ।

वृत्तीनां निरुपणं कुर्वन् योगसूत्रकारः आह वृत्तयः पञ्चतथ्यं निक्लष्टाक्लिष्टाच ।। 'प्रमाण–विपर्यय–विकल्प–निद्रा–स्मृतयः।' इति

अयमाशयो यत् पञ्चसंख्याताः चित्तवृत्तयः भवन्ति। ताः सर्वा एव वृत्तयः द्विविधा भवन्ति–क्लिष्टा अक्लिष्टाश्च। तत्र– क्लेशहेतुकाः कर्माशयप्रथमे क्षेत्रीभूताः क्लिष्टाः।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

रामायण के रामराज्य के संदर्भ में गाँधी का ग्राम स्वराज

डॉ. राखी चौहान
कालिंदी कालिज
दिल्ली विश्वविद्यालय

गाँधी जी को जितना प्रभावित पवित्र रामायण ने किया उतना किसी ने नहीं द्यगाँधी का स्वराज और वाल्मीकि रामायण के रामराज्य मे बहुत सी समानताएं है यो भी रामराज्य का प्रभाव गाँधी के स्वराज पर साफ़ देखा जा सकता है द्य वर्तमान अध्ययन रामायण के रामराज्य तथा गाँधी के स्वराज को जानने मे योगदान देगाद्य गाँधी जी ने 'स्वराज' शब्द को पवित्र माना। जिसका अर्थ है लोक–सम्मति के अनुसार होने वाला भारतवर्ष का शासन। महात्मा गाँधी के चिंतन का मुख्य केंद्र गाँव ही रहे हैं और सत्ता का आधार जनता। इसलिए गाँधी का ग्राम उत्त्थान का राजनीतिक कार्यक्रम भी आध्यात्मिक व धरम निरपेक्षता की झलक देता है द्यगाँधी जी के विचारों की दो आधारभूत विशेषताएँ हैं– अहिंसा व सत्य। जो रामायण मे भगवान राम की भी विशेषताएँ रही हैद्य ग्रामीण समाज की नींव को भी गाँधी जी अहिंसा के साथ जोड़ते है क्योंकि हिंसा का मतलब है शोषण जो व्यक्तिगत अखंडता को नकारता है। बिलकुल उसी प्रकार जैसे की रामायण के सन्दर्भ मे समझा जा सकता है द्य उन्होंने रोटी को श्रम के साथ जोड़कर सार्थकता का परिचय दिया है। विकेन्द्रीकरण पर गाँधी जी के विचार, आत्मनिर्भर ग्रामों की योजना, स्वायत्त पंचायतें, सम्पूर्ण भारत में पंचायतों का जाल, कुटीर उद्योग धंधों का विस्तार आदि गाँधी जी की भारत को अद्वितीय देन है हैं। इस अधययन मे गाँधी जी के विचारो को रामायण के रामराज्य के सन्दर्भ मे समझने मे मदद मिलेगीद्य

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

योग एवं ध्यान का मानसिक उन्नयन में योगदान
(आधुनिक परिप्रेक्ष्य में)

डा. पूजा बुन्देल
दिल्ली विश्वविद्यालय
मो.न.9711310135

मन का नियन्त्रण किये बिना व्यक्ति अथवा समाज के गुणात्मक विकास का बुनियादी काम कभी भी सुचारू रूप से सम्पन्न नहीं हो सकता। चाहे वह विकास अभ्युदयात्मक हो या फिर निरूश्रेयसात्मक, दोनों ही विकास प्रक्रियाओं में मन का विशेष एवं अपरिहार्य योगदान होता है। योगदर्शन का मुख्य उद्देश्य है दृ प्रकृति–पुरुष का भिन्न ज्ञान हो जाना और पुरुष का जड प्रकृति से निर्वृत्त होकर अपने स्वरूप में स्थित हो जाना। सांख्य–योग की भाषा में यही कैवल्य है। योगदर्शन के आरम्भ में ही दूसरा और तीसरा सूत्र है दृ "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधरू" तथा "तदा द्रष्टुरू स्वरूपेऽवस्थानम्" अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध योग है और चित्त के निरुद्ध हो जाने पर द्रष्टा की अपने स्वरूप में स्थिति हो जाती है।

योग के द्वारा शारीरिक स्वास्थ्य ही नहीं अपितु उत्तम मानसिक स्वास्थ्य को प्राप्त करने की पूरी–पूरी सहायता मिलती है, एकाग्रचित्त एवं ध्यान का स्थिर होना व्यक्ति में मानसिक स्तर को अर्थात् उसकी चिन्तन शक्ति के लिए भी उपयोगी है, इसके अतिरिक्त मानसिक शक्तियों के विकास में एक प्रवाह धारा को बढावा मिलता है, योग से व्यक्तियों को अत्यधिक लाभ है, व्यक्ति के व्यक्तित्व संवर्धन में योग ही एकमात्र नितान्त लाभकर क्रिया है। इस प्रकार प्रस्तुत शोधपत्र में मैं ये बतन चाहती हूं कि आज के इस भौतिक युग में मनुष्य योगासनों द्वारा, योगमुद्राओं द्वारा तथा ध्यान द्वारा किस प्रकार से मानसिक रोग और मानसिक तनाव को दूर करके अपनी उन्नति कर सकता है।

संकेतशब्द रू– योग, ध्यान, मन, चित्तवृत्तियां, निरोध, योगासन, योगमुद्रा ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वेदान्त विश्वदृवारिधि

आचार्य मनजीत

" वेदान्तदर्शनं में संसार रुपी समुद्र "

"वेदान्तो नाम उपनिषत्प्रमाणाम्" इति वेदान्तसार में श्री सदानन्द योगीन्द्र ने पारिभाषित किया है समुद्र मंथन एक प्रसिद्ध सनातन धर्म पौराणिक कथा है। अमृत का नाम लेते ही पौराणिक धारावाहिक में समुद्र मंथन की तस्वीर उभरकर आ जाती है। लेकिन क्या अमृत का सत्य कभी तलाशने की कोशिश है ? आइए जानते क्या है अमृत और क्या आज भी इसे पाना संभव है? सिद्धांतो को कथा के रुप में कहना हमारी विलक्षण परंपरा रही है।

"आसुरी सम्पद् असुर दैवी सम्पद् देव दुलारे।
विश्व वारिधि मनन मंथन कर काल व्याल पुकारे।।
मोह मुख प्रभु प्रेम पूँछ पकड ब्रह्मा बुद्धि विचारे।
'मनजीत' मन की धार मन्दार, सागर सार लिया रे।।

वस्तुतः वेदान्त विज्ञान में विश्व दृवारिधि अर्थात् संसार रुपी समुद्र का मनन करके ही उस अमृत रुपी परमात्मा को प्राप्त किया जाता है। दैवी सम्पदा ही देवता है और आसुरी सम्पदा ही असुर है। काल रुपी वासुकि नाग (सब में वास करने वाला) की रस्सी बनायी और इस सर्प का मोह रुपी मुख जिसको आसुरी प्रवृत्तियों ने पकडा हुआ है, दूसरी तरफ प्रभु प्रेम रुपी पूँछ (प्रतिष्ठा) जो सजातीय प्रवृत्तियों के पास है। "श्री मद्भागवत् माहात्म्य में भी आया है – "काल–व्याल–मुख–ग्रास–त्रास–निर्नाश–हेतवे" मन रुपी मन्दराचल है। आसुरी प्रवृत्तियों ने मोह रुपी रस्सी से बाँधा और दैवी सम्पदा ने इसी मन को प्रभु प्रेम में लपेटा। तत्पश्चात इन दोनों प्रवत्तियों के बीच संघर्ष का सूत्रपात होता है। समुद्र मंथन क्रमशः अमूल्य रत्नों की प्राप्ति होती है। प्रत्येक रत्न साधना का पथ दृप्रदर्शक करता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कालनिर्धारकग्रन्थेषु कालस्यानेकत्वम्

डॉ.कैलाशचन्द्र शर्मा
पूर्व विभागाध्यक्ष ज्योतिष विभाग
ज.रा.राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय जयपुर

कल संख्याने प्रेरणे वा धातो पचाद्यच इससे जिस काल शब्द का निर्वचन मीमांसक या शब्दशास्त्रियों ने स्वीकार किया है अथवा वह काल जिसका कि उपयोग गणना और आयुबोध के लिये भी किया जाता है वह सर्व नियामक तथा ज्योतिषशास्त्र का प्रमुख प्रतिपाद्य ही है । इसका वर्गीकरण करते हुये सूर्यसिद्धान्त नामक ग्रन्थ मे लिखा गया है कि

लोकानामन्तकृत कालः कालोऽन्य कलनात्मकः ।
स द्विधा स्थूल सूक्ष्मत्वात् मूर्त्तश्चामूर्त्त उच्यते ।।

इसी काल को लोक व्यवहार मे त्रिविध (अतीत, वर्त्तमान तथा आगत यानि भविष्य) काल के रुप मे भी व्यवह्रित काया जाता है । इस काल के अन्य अपर पर्याय भी शास्त्रो मे वर्णित किये गये है यथा (अमरकोषादि ग्रन्थों मे)

जन्यानां जनको कालः जगतामाश्रयो मतः ।
परापरत्वधीहेतुः क्षणादिःस्यादुपाधितः ।। और भी
कालोदिष्टोऽनेहापि समयोप्यथ पक्षतिः ।।

संस्कृत वाङ्मय के तन्त्रसाहित्य मे परिगणित आगम शास्त्रो मे संसार मे छत्तीस प्रकार के तत्त्व माने गये है । आगम को विस्तारित करते हुये लिखा गया है किकृ

सृष्टिश्चप्रलयश्चौव देवतानां तथार्चनम् ।
साधनञ्चौव सर्वेषां पुरश्चरणमेव च ।।
षट्कर्मसाधनञ्चौव ध्यानयोश्चतुर्विधम् ।
सप्तभिर्लक्षणैर्युक्त त्वागमं तद्विदुर्बुधाः ।।

इस प्रकार आगम शास्त्र मे माने गये छत्तीस तत्त्वो के मान भी लिखे गये है वे है

शिव, शक्ति, सदाशिव, ईश्वर, विद्या, माया, अविद्या, कला, राग, काल, नियति, जीव, प्रकृति, मन, बुद्धि, अहङ्कार, श्रोत्र, त्वक, चक्षु, जिह्वा, घ्राण, वाक, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ, शब्द, रुप, रस, गन्ध, स्पर्श, आकाश, वायु, तेज, जल, और पृथ्वी आदि को स्वीकृत किया गया है ।

ज्योतिष शास्त्र मे अनादि तथा अनन्त की संज्ञा से परिचाययित इस काल को ही महाकाल के पद पर प्रतिष्ठापित किया गया है , तथा इसकी दो अवस्थाए मानी गयी है प्रवृत्ति तथा प्रलय और इसे परिभाषित करते हुये आचार्य भास्कर ने लिखा है किकृ

लंकानगर्यामुदयाच्चभानो
तस्यैववारे प्रथमं बभूव ।
मधोः सितादेर्दिनमासवर्ष–
युगादिकानां युगपत्प्रवृत्तिः ।।

प्रवृत्ति के विषय मे अन्यत्र यथा विष्णुधर्मोत्तरपुराण ब्राह्मसिद्धान्त आदि ब्रह्ममतानुयायियो ने भी अपने ग्रन्थों मे लिखा और उनके द्वारा वर्णित किया गया है कि

लंकामर्कोदये चौत्र शुक्ल प्रतिपदारम्भेऽर्कदिनादावश्विन्यादौ किंस्तुघ्नदौ रौद्रादौ प्रवृत्तिकालः ।।

सौर मतानुयायी आचार्यो ने भी लंकानगर मे तथा अर्द्धरात्रि काल मे व रविवार से ही काल की प्रवृत्ति स्वीकार की है । इसको इष्ट दिन के लिये अहर्गणानयन करते हुये स्पष्ट रुप मे लिखा हैकृ

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अत उर्ध्वममीयुक्ता,गत कालाब्दसंख्यया ।
मासीकृता युता मासैर्मधुशुक्लादिभिर्गतैः ।।
पृथक् स्थास्तेऽधिमासघ्नाः सूर्यमासविभाजिताः।
लब्धाधिमासकैर्युक्ता दिनीकृत्य दिनान्विताः ।।
द्विष्ठास्तिथिक्षयाभ्यस्ताश्चान्द्रमाससभाजिताः ।
लब्धोनरात्रिरहिता लङ्कायामर्धरात्रिकाः ।।

ज्योतिर्विज्ञान के सिद्धान्त खण्ड मे काल अथवा महाकलनात्मक काल को सृष्टि के प्रारम्भ से सृष्टि के अन्त तक भी परिगणित किया गया है साथ ही इस परिगणनात्मक काल का नवधा विभाजन भी कल्पित किया गया है । जैसा कि सूर्य सिद्धान्त मे प्राप्त है

ब्राह्मं दिव्यं तथा पित्र्यं प्राजापत्यं गुरोस्तथा ।
सौरं च सावनं चान्द्रमार्क्ष मानानि वै नव ।।

सिद्धान्त शिरोमणि मे आचार्य भास्कर भी इसी प्रकार लिखते है कि

एवं पृथङ् मानव दैवजैवपैत्रार्क्षसौरेन्दवसावनानि ।
ब्राह्मं च काले नवमं प्रमाणं ग्रहास्तु साध्या मनुजैः स्वमानात् ।।

इनमे से केवल चार मान ही व्यवहार रुप से प्रयुक्त किये जाते है जो कि आज भी प्रयोग मे है उनके नाम इस प्रकार है

सौर मान
सावन मान
नाक्षत्र मान
चान्द्र मान
पॉचवा बृहस्पति मान ।

यह मान मात्र संवत्सर के ज्ञान के लिये होता है । एक कल्प का ब्रह्मा का एक दिन तथा एक कल्प की ही रात्रि मानी गई है ।

इत्थं युगसहस्त्रेण भूतसंहारकारक ।
कल्पो ब्राह्ममतः प्रोक्तं शर्वरी तस्य तावती ।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भारतीय योग परम्परा में सात्विक आहार की उपादेयता (आधुनिक सन्दर्भ में)

ज्योत्स्ना (शोधच्छात्रा) साङ्ख्ययोगविभाग,
श्री ला.ब.शा.रा.सं. विद्यापीठ, नई देहली

भारतीय परम्परा में मनुष्य के शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक और आध्यात्मिक उन्नयन में सात्विक भोजन को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। "अन्नं वै प्राणरू" अन्न ही प्राण है। अन्न से मन और तन की संकल्पना की गयी है। कलयुग में सात्विक भोजन की परिभाषा ही बदल गयी है। आज के युग में सात्विक भोजन में अण्डे को भी सम्मिलित कर दिया गया है जो गलत है। जबकि लहसुन–प्याज को सात्विक भोजन में वर्जित माना गया है। प्रायरू देखने में सात्विक भोजन की चार श्रंखलायें सामने आती है। पहली श्रंखला में अण्डे, लहसुन–प्याज को भी सात्विक माना गया है क्योंकि इनमें औषधीय गुण विद्यमान होते हैं। दूसरी श्रंखला में अण्डे को छोडकर लहसुन–प्याज को सात्विक माना गया है। तीसरी श्रंखला के सात्विक भोजन के सेवन में अन्न को छोडकर अन्य सभी वस्तुएं आती है। जैसे दृ दूध, दही, सब्जी आदि।

शास्त्रानुसार भोजन तीन प्रकार का माना गया है दृ सात्विक, राजसिक एवं तामसिक। भारतीय उपनिषदों में अन्नमय कोष पर बहुत प्रकाश डाला गया है। यदि प्रतिज्ञापूर्ण और उचित ढंग से पालन किया जाए तो कोई भी व्यक्ति नीरोग होकर आनन्दमय जीवन यापन कर सकता है। भारतीय योग का आदेश है कि धरती, सूर्य, जल और ताजी हवा के सम्पर्क में हमें ऋतु के अनुसार सदैव रहना चाहिए।

भारतीय होने के नाते भारतीय योग परम्परा में सात्विक भोजन् की उपादेयता को अंगीकार कर अपने जीवन में उतारें तथा आनन्दमय, सरल, शान्तिमय जीवन की ओर अग्रसर होने का प्रयास करें, इसके लिए शाकाहारी और सात्विक बनना होगा। आइए योगमय जीवन में सात्विक बनने का संकल्प लें।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

त्रिवर्गसाधनं नाट्यम्

श्रीमती नेहा कँव
विद्यावारिधि शोधछात्रा (साहित्यशास्त्र
ज.रा.रा.सं.वि.वि.जयपु

सर्वशास्त्रार्थसम्पन्नं सर्वशिल्पप्रवर्तकम् ।
नाट्यरूपं पञ्चमं वेदं सेतिहासं करोम्यहम् ॥

संस्कृत नाटक का जन्म भारत भूमि पर स्वतंत्र रूप से हुआ है। इनकी परंपरा अत्यंत प्राचीन है तथा इनका आदि अव्यक्त है। नाट्य को पंचम वेद कहा गया है क्योंकि जिस प्रकार वेद समस्त विद्याओं के भंडार हैं व स्वयं ईश्वर प्रसूत है उसी प्रकार नाट्यवेद भी स्वयं ब्रह्मा के द्वारा सभी वेदों का सार ग्रहण करके बनाया गया है।

जग्राह पाठ्यमृग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि॥

ऋग्वेद के पुरुरवा–उर्वशी, यम–यमी, इंद्र–इंद्राणी, वृषाकपी आदि के संवाद सूक्तों में नाटकी कथनोपकथन उपलब्ध होते हैं जो नाट्यकला की प्राचीनता को दर्शाते हैं। उत्तरवर्ती साहित्य में नाट्यकला की शिल्पविधियों का पूरा इतिहास दिखाई देता है। संस्कृत साहित्य में नाटकों की निर्माण परंपरा बहुत पुरानी है तथा आदिकाल से ही जनजीवन के मनोरंजन हेतु नाटकों को सर्वश्रेष्ठ साधन एवं माध्यम के रूप में स्वीकार किया जाता था। भरतमुनि के मतानुसार नाट्य तीनों लोकों के भावों का अनुकरण है उनके सिद्धांतानुसार नाटक में सभी प्रकार का ज्ञान, शिल्प, विद्याएं और शास्त्र संबंधित रहते हैं।

नाट्य में वेदविद्या, इतिहास, योग, सदाचार तथा समाज के मनोरंजन के सभी साधन विद्यमान है। दृश्यमयता नाट्य का मूलतत्व है और वह सद्य हृदयस्पर्शी होता है। नेत्र एवं श्रोत्र के माध्यम से मानसपटल पर अंकित उसका प्रभाव अक्षुण्ण रहता है। संस्कृत नाटककारों ने रामायण, महाभारत तथा लोककथाओं पर आधारित नाटकों की रचना की।

संस्कृत नाटकों का प्रादुर्भाव भास कवि के स्वप्नवासवदत्तम् तथा प्रतिज्ञायौगन्धरायण नामक नाटक से माना जाता है। उनके नाटकों में विविधता तथा बहुमुखता विशेष रूप से दृष्टिगोचर होती है। मानव हृदय के सूक्ष्म भावों का निरीक्षण तथा उनका यथावत् भावपूर्ण चित्रांकन जैसा कालिदास ने किया है वैसा अन्य कवियों ने नहीं किया। ये मानव हृदय की विभिन्न परिस्थितियों में उदीयमान वृत्तियों का चित्रण लोक व्यवहार के साथ पूर्ण सामंजस्य से करते हैं। नाटक जनसाधारण के मनोरंजन तथा रसानुभव का माध्यम होने के अतिरिक्त लोक के लिए समस्त शिक्षाओं की निधि भी है। शास्त्रीय उपदेशों से समन्वित होने के कारण नाटक लोक के उद्धारक के रूप में भी देखे जाते हैं। धर्म, अर्थ तथा यश के प्रदाता नाटक सभी कर्मों के पथ प्रदर्शक होने के कारण संस्कृत साहित्य में विशिष्ट स्थान रखते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शास्त्र संरक्षण में व्याकरण का योगदान

इन्द्र कुमार मीना
सहायकाचार्य (व्याकरण)
रा.सं.सं. श्रीरणवीर परिसर जम्मू

संस्कृत वाङ्मय में निहित ज्ञान तथा विज्ञान जीवन के प्रत्येक कठिन मार्ग पर समस्याओं से निपटने का सहज मार्ग प्रदर्शित करता है । इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर विश्व भर में बड़े स्तर पर अन्ताराष्ट्रीय संस्कृतसम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है । इसी क्रम में जगद्गुरुरामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय व राजस्थान संस्कृत अकादमी जयपुर द्वारा 3 से 5 मार्च 2020 को एक विश्वस्तरीय संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है । जिसमें संस्कृत ज्ञान–विज्ञान का वैश्विक चिन्तन के परिप्रेक्ष्य में तथा उपविषयों द्वारा शोधचर्चाओं के रूप में प्रस्तुत् किया जा रहा है । जिस पर विभिन्न शोधपत्र प्रस्तुत् करने का अवसर दिया है । इसी क्रम में मैं इन्द्र कुमार मीना , सहायकाचार्य व्याकरणविभाग, रा.सं.सं. श्रीरणवीरपरिसर जम्मू– शास्त्र संरक्षण में व्याकरण का योगदान विषय पर अपना शोधपत्र प्रस्तुत् करना चाहता हूँ । मुझे आशा है कि आप मेरे शोधपत्र को स्वीकार करेंगे ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आधुनिक युग में गाँधी दर्शन की प्रासंगिकता

अनिल कुमार शर्मा
शोधच्छात्र
ज.रा.रा.सं.वि.वि

महात्मा गाँधी भारतीय परम्परा एवं संस्कृति के प्रमुख उपसाक, कर्मशीलता के अवतार एवं तपस्या की एक ऐसी प्रतिमूर्ति थे जिन्हे प्राचीन काल के ऋषि, मध्यकाल के संत और आधुनिक युगे के महात्मा के रुप में जन दृजन का सम्मान प्राप्त है। वे एक विश्व आख्यान है जिनके नाम से विश्व की तीन पीढियाँ सुपरिचित है। कुछ विभूतियों का महत्त्व तत्कालीन होता है, परन्तु कुछ विभूत्तियाँ जो विशेषतः निसर्गात्मक होती है, उन्हे चिरन्तन कहा जाता है, महात्मा गाँधी भी ऐसी ही विभूति थे।

मानव एकाकी जन्म लेता है किन्तु वह स्वभाविक रुप से एक सामाजिक प्राणी है। आज से लगभग अढाई हजार वर्ष पूर्व राजनीति विज्ञान के जनक अरस्तु ने मानव को एक सामाजिक प्राणी कहा था अरस्तु के मतानुसार सुसंस्कृत मनुष्य सब प्राणियों में श्रेष्ठतम होता है परन्तु जब यह बिना कानून तथा न्याय के जीवन व्यतीत करता है तब सबसे भयंकर हो जाता है। यदि कोई मनुष्य ऐसा हो जो समाज में न रह सकता हो अथवा जो यह कहता हो कि मुझे केवल अपने साधनो की आवश्यकता है, तो उसे मानवसमाज का सदस्य मत समझो , वह या तो जगंली जानवर है या देवता।

आदर्श मानव की अवधारणा

गांधीजी द्वारा समय समय पर अभिव्यक्त किए, गए विचारों एवं लिखित ग्रंथो तथा पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित उनके विचारों से मानव की प्रकृति एवं उसके लक्ष्यों के बारे में गांधीय दृष्टिकोण की जानकारी प्राप्त होती है। मानव की प्रकृति एवं उसके लक्ष्यो को जानने के पश्चात गांधीजी के आदर्श मानव की अवधारणा का निरुपण करना यहां पर समीचीन होता है।

नैतिकसिद्धान्त

गांधीजी के समाज दर्शन के स्पष्ट करते हुए रोम्याँ रोलाँ ने लिखा है " गाँधीजी के क्रियाकलाप को समझने के लिए यह ह्रदयंगम कर लेना चाहिए कि उनका सिद्धान्त एक वृहत् भव के सदृश है जिसमें दो भिन्न भिन्न मंजिले है। नीचे ठोस आधार है धर्म की मूल भित्ति का इस दिशा एवं अडिग भित्ति पर आधारित है।

गाँधी का आर्थिकदर्शन

मानव इतिसाह के किसी अन्य युगे की अपेक्षा वर्तमान युग में मानव की सम्पूर्ण क्रियाएँ उसकी आर्थिक गतिविधियों से प्रभावित होती है। आर्थिक शक्तियाँ इतिहास की धारा के मार्ग को प्रभावति करने वाली है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वृक्षायुर्वेद

राजतिलक शर्मा
शोधछात्र
ज्यातिष विभाग
ज.रा.रा.सं.वि.वि.
जयपुर

'वृक्षायुर्वेद' वृक्षों द्वारा मानव जीवन को दीर्घकाल तक स्वस्थ रखने का माध्यम है। इसीलिए वृक्षों का महत्त्व भी मानव जीवन के लिए अत्यावश्यक हैं। मानव की हर प्रत्येक आवश्यकता पूर्ति का माध्यम वृक्ष है और उनके समुचित संवर्धन व संरक्षण हेतु वराहमिहिर कृत बृहत्संहिता में क्रमबद्ध विकास को ध्यान में रखकर इनको लगाने की विधि प्रविधि का विस्तार व प्रमाणित वर्णन किया गया है। इन पद्धतियों तरीकों के माध्यम से अच्छे परिष्कृत व गुणवत्तायुक्त बीजों के निरोगी वृक्ष तैयार कर सकते हैं।

विजातीय वृक्षों पर कलम रोपण की तकनीक बृहत्संहिता ग्रन्थ में पूर्व में ही विकसित हो चुकी थी। वास्तु अनुरूप वृक्षों की दिशा व क्रम का ध्यान रखा गया है। गृह में कौन-कौन से वृक्ष शुभ व कौनसे अशुभ हैं, इसका विस्तारपूर्वक वर्णन भी बृहत्संहिता से प्राप्त होता है। वृक्षारोपण हेतु कौनसी ऋतु में कौन-कौन से वृक्ष किस दिशा में कितनी दूरी पर लगाने चाहिए। यह जानकारी हमें वृक्षायुर्वेद से प्राप्त होती है। इसके अलावा वृक्षों की उपयोगिता हमारे जीवन में किन-किन क्षेत्रों में है जैसे जलाशय राजमार्ग मन्दिर, गृह व ऐसी दैनिक क्रिया में सम्मिलित क्षेत्र जहां हमारा आगमन होता रहता है। मुख्य रूप से हम कह सकते हैं कि सभी जगह वृक्षारोपण अत्यावश्यक है। वृक्षों पर फल नही लगने की स्थिति में में उन वृक्षों में कौन से तत्वों की भावना देनी चाहिए यह हमे वृक्षायुर्वेद के प्राप्त होती है। अलग-अलग वृक्षों के लिए व बीजों को उगाने के लिए हमें उन वृक्षों में अलग-अलग तत्वों की भावना देनी होती है, तथा अलग-अलग प्रकार की खाद देनी होती है। वृक्षारोपण से पूर्व भूमि को वृक्ष के लिए उपयुक्त बनाने हेतु उसमें आग जलाना, दूध, शहद व अन्य पदार्थों से भूमि को संशोधित करने की तकनीक वृक्षायुर्वेद से प्राप्त होती है। वृक्षारोपण से पूर्व इनकी पूजा का भी विधान हमें प्राप्त होता है।

सारांशरूप से सिद्ध होता है कि मानव जीवन के लिए वृक्षों का योगदान अत्यावश्यक है। वृक्षों से ही हमें आरोग्य की प्राप्ति हो सकती है। इनके अलावा दूसरा कोई समुचित विकल्प प्राप्त हो ही नहीं सकता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विश्व शान्ति

(डॉ. राधिका पंचौली)
हिन्दी व्याख्याता,
चिल्ड्रन टी.टी. कॉलेज, कोटा

विश्व शान्ति सभी देशों के बीच और उनके अन्दर स्वतन्त्रता शांति और खुशी का एक आदर्श है। विश्व शान्ति सम्पूर्ण पृथ्वी पर अहिंसा स्थापित करने का एक माध्यम है। विश्व शांति तभी स्थापित की जा सकती है जब सभी राष्ट्र तथा वहां की जनता आंतरिक तथा बाह्य रूप से एक–दुसरे राष्ट्र को पूर्ण सहयोग प्रदान करें।

वैसे तो सभी धर्मों के पवित्र ग्रंन्थ विश्व शान्ति की मंगल कामना करते है, परन्तु हिन्दू धर्म ने पुरातन काल से चली आ रही यह उक्ति **"वसुधैव कुटुम्बकम्"** विश्व शान्ति की परिकल्पना को पूर्ण रूप से सार्थक करती है।

वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व में शान्ति स्थापित करने की महती आवश्यकता है क्योंकि शक्तिशाली राष्ट्र अपने से कमजोर राष्ट्र पर आंतकवादी हमले तथा अपने बल से उनको प्रताड़ित करते है। जिसकी वजह से वहां निवास करने वाली बेकसूर जनता को अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता हैं।

सर्वप्रथम 1914–18 तक चले प्रथम विश्व युद्ध तथा उसके बाद द्वितीय विश्व युद्ध से उत्पन्न हुए वातावरण तथा उसके परिणामों को देखकर ही सभी राष्ट्रों को विश्व शांति बनाए रखने की आवश्यकता महसूस हुई और इसी के परिणाम स्वरूप "संयुक्त राष्ट्र संघ" की स्थापना हुई।
आधुनिक युग में प्रत्येक राष्ट्र अपनी शक्ति को बढ़ाने के उद्देश्य से निरन्तर प्रयासरत हैं, फिर चाहे वह विकसित राष्ट्र (जैस–अमेरिका, रूस, चीन) हो या फिर विकासशील राष्ट्र (जिनमें भारत सबसे प्रमुख हैं।)

आज विश्व के तन में अशांति है और मन में भी। तन में बन्दूक, बम अणुजन और युद्ध ने आतंक मचा रखा है और मन में साम्यवाद, समाजवाद और पूंजीवाद ने उथल–पुथल मचा रखी है। इस कारण ही वर्तमान में इस धरा का कण–कण अशांत हैं।

विश्व शांति के लिए सबसे ज्यादा जरूरी है, भाईचारे की भावना। अगर सभी लोगों में परस्पर भाईचारे की भावना और सहयोग की भावना होगी तभी विश्व शांति की दिशा में महान और सार्थक कार्य होगा। विश्व शांति के लिए सभी लोगों का आचरण समान होना चाहिए और उनके विचार प्रभावशाली तथा ठोस होने चाहिए।

अगर किसी भी मानव के अन्दर सद्भावना और श्रेष्ठ विचार रहेंगे तो विश्व शांति में अशांति और अव्यवस्था की भावना नहीं दिखाई देगी।

विश्व शांति की स्थापना करने के लिए सभी राष्ट्रों तथा वहां निवास करने वाले लोगों को मिल जुलकर कार्य करना चाहिए तभी कोई भी देश उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो सकेगा।

सभी देशों को अपने आपसी वाद–विवाद को भुलाकर एक–दुसरे राष्ट्र का सहयोग करना चाहिए। जिस भी देश का विकास नहीं हो पा रहा है, उस देश की अन्य समृद्ध राष्ट्रों के द्वारा मदद की जानी चाहिए तभी विश्व शांति को स्थापित किया जा सकता है।

वर्तमान में शिक्षा के माध्यम से सभी को अपने कर्त्तव्य के प्रति जागरूक किया जाना चाहिए ताकि वे सभी विश्व शांति में अपना अमूल्य योगदान दे सके।

विश्व शांति तभी स्थापित की जा सकती है, जब हम सभी के मन में यह भावना उत्पन्न हो जाए–

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भागभवेत्।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नीतिशतक में मानवीय मूल्यों की वर्तमान प्रासंगिकता

योगेन्द्र सिंह सहायक आचार्य (संस्कृत)
राजकीय महाविद्यालय नदबई भरतपुर (राज.)

जिन मान्यताओं के आधार पर हम अपने को अपने समाज को न केवल धारण और व्यवस्थित कर पाते हैं बल्कि लोक मांगलिक संभावनाओं को चरितार्थ भी करते है मानव मूल्य कहलाते हैं। मानव और मानवीय मूल्य सर्वोपरि है। मानव मूल्य मानवता को गरिमा प्रदान करते हैं। मानव मूल्यों का संबंध नैतिक विचारों से है। धर्म और दर्शन भी नीति के अन्तर्गत समाहित है।

नीति काव्य परम्परा में महाकवि भर्तृहरिकृत नीति ातक श्रेश्ठ स्थान रखता है। नीति ातक के सम्यक अनु ीलन से ज्ञात होता है कि महाकवि भर्तृहरि ने दुनिया को बडी गहराई तथा सूक्ष्म दृश्टि से देखा था। वस्तुतः कवि ने इस भातक में मानव चरित्र एवं मानव मूल्यों से युक्त लोकव्यवहार तथा सांसरिक जीवन के सभी महत्वपूर्ण पक्षों का हृदयग्राही विवेचन किया है। भर्तृहरि मनुश्य के व्यक्तित्व में निहित समस्त उदात्त संभावनाओं के चरमोत्कर्श को अपना अन्तिम आदर्श मानते हैं लेकिन सांसारिक जीवन की विसंगतियों, विकृतियों क्षुद्रताओं को भी बेझिझक अनावृत किया है। भर्तृहरि के नीति ातक का प्रतिपाद्य लोक व्यवहार की ऐसी ि ाक्षा देना है, जिससे मानव जीवनोपयोगी उत्कृष्ट नैतिक सिद्धान्तों एवं सद्गुणों का अनु ीलन कर तथा उन्हें अपनाकर सत्पुरूश बनने की प्रेरणा ले सकता है। इसमें उदात्त गुणों का वैि ाश्ट्य बतलाकर मानव जीवन के लिए कल्याणकारी उपदेश दिया है। नीतिशतक के प्रतिपाद्य मानवीय मूल्यों में सद्गुणों की महिमा, नीचजनों की दुष्टता, मूर्खों की जडता, विद्या की महिमा, आत्मगौरव एवं परोकार परायणता का निर्देश, सत्पुरूशों का असिधाराव्रत मानव कल्याण के सर्वमान्य मार्ग आदि विविध विशयों का प्रभावोत्पादक चित्रण किया गया है। नीति ातक में दैनिक जीवन के मानवीय मूल्यों के प्रत्यक्ष सत्य का मर्मस्पर्शी वर्णन है और एक समाज सुधारक की तरह मानव कल्याण का उद्घोष है। नीतिशतक के मानवीय मूल्य किसी भी व्यक्ति को समाज के कल्याण के विपरीत कार्य करने से रोकते है।

इन मानवीय मूल्यों से प्रेरित व्यक्ति स्वहित के साथ–2 समाजहित और अन्ततः परम भाुभ प्राप्ति के लिए कार्य करने को प्रेरित होता है। वर्तमान में अनेक समस्याओं जैसे– आतंकवाद, नागरिक युद्ध, महिला व बाल उत्पीडन, जातिवाद, धार्मिक उन्माद, नैतिक पतन, चारित्रिक पतन, आदि इन्हीं मूल्यों से विमुख होने का परिणाम है। अतः एक उच्च नैतिक मूल्यों से युक्त समाज के निर्माण के लिए नीति ातक में वर्णित मानवीय मूल्यों को पुनः स्थापित किये जाने की आव यकता है। आज के बदलते सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सन्दर्भ में नीतिशास्त्र अत्यधिक प्रासंगिक हो गया है। महापुरूषों द्वारा बताये गये नीति युक्त वचनों का अवलम्बन करके मनुष्य सदैव पथ प्रदर्शक एवं उचित पथ का गामी होगा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण की महत्ता

डॉ प्रीति विजय
संस्कृत विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।"

अर्थात् माता और जन्मभूमि (दोनों ही) स्वर्ग से भी श्रेष्ठ हैं। इस पावन धरा पर पाए जाने वाले वृक्ष, नदी, तालाब, सरोवर, पशु, पक्षी, पवन, मेघ आदि चर–अचर, जड़–चेतन सभी प्रकृति के ऐसे अंग व उपांग हैं जो माँ के समान हमारे पोषक एवं रक्षक हैं। इस तरह के परोपकार व निस्वार्थ की भावना हमें पर्यावरण में सृष्टि के आरम्भ से ही देखने को मिलती है। कहा भी गया है –

वृक्ष कबहुँ नहिं फल भखै, नदी न संचे नीर।

परमार्थ के कराने, साधुन धरा शरीर।।

आज पर्यावरण की सुरक्षा पर प्रश्न चिन्ह लग गया है, क्योंकि प्रकृति में विद्यमान पंच तत्वों में एक दूसरे को शुद्ध करने की अत्यधिक क्षमता है। जब हम स्वार्थ के वशीभूत हो प्राकृतिक संसाधनों का विध्वंस लगते हैं तब स्थिति प्रकृति की स्वाभाविक क्रियाओं की क्षमता से बाहर हो जाती है और उसका प्रतिकूल प्रभाव हमारे स्वास्थ्य व आर्थिक व्यवस्थाओं पर पड़ता है।

पर्यावरण का सीधा अर्थ **'प्राकृतिक वातावरण'** है, इसके मुख्य रूप से तीन अंग हैं – भूमि, हवा व जल। इनका सन्तुलन भंग होने की अवस्था का नाम ही प्रदूषण है। प्रदूषण के कारण पर्यावरण असंतुलित होता है।

मानव जीवन से संयम बिल्कुल समाप्त हो गया है यदि मानव आज भी अपनी भौतिक सुख सुविधाओं के साधनों को जुटाने में सयंम अपना सके तब शायद हम पर्यावरण के असन्तुलन को रोक सकेंगे।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वेदों में आयुर्विज्ञान और ओषधिविज्ञान

डॉ. शशि कुमार शर्मा,
सहायक आचार्य, व्याकरण विभाग,
जरारासंविवि, जयपुर

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् महाकवि कालिदास ने शरीर को ही धर्म का प्रमुख साधन कहा है। आयुर्विज्ञान के नाम से ही स्पष्ट है कि यह आयु सम्बद्ध विज्ञान है। जीवन में स्वस्थ रहते हुए दीर्घ आयु प्राप्त करने के उपाय एवं विधि आयुर्वेद में वर्णित है। स्वस्थ शरीर एवं स्वस्थ मन से युक्त शतायु होकर ही मनुष्य धर्म–अर्थ–काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों की सिद्धि कर सकता है। भारत के चिरन्तन ऋषियों और आचार्यों ने वेदमन्त्रों में निहित मूलतत्त्वों के आधार पर आयुर्वेद एवं चिकित्सा विज्ञान का आविष्कार किया।

रक्तप्रवाह प्रक्रिया आधुनिक युग में 17 वीं शताब्दी में ब्रिटेन के डॉ. हार्वे ने सर्वप्रथम रक्तप्रवाह क्रम का आविष्कार किया। किन्तु इससे सहस्राब्दी पूर्व आविर्भूत अथर्ववेद के एक मन्त्र में शरीर में विद्यमान रक्तप्रवाहचक्र का स्पष्ट संकेत मिलता है

को अस्मिन्नापो व्यदधाद्विषूवृतः पुरुवतः
सिन्दुरुत्सृत्याय जाताः।
तीव्रा अरूणा लोहिनीस्ताम्रधूम्रा ऊर्ध्वा अवाचीः
पुरुषे तिरश्चीः।। अथर्व. 10.2.11

यहाँ यह प्रश्न किया गया है कि इस शरीर में किसने उन जलों को बनाकर रख दिया है जो सब तरफ फैलाने वाले हैं और सब ओर से सिन्धु में (हृदय में) आकर और वहाँ से फिर बाहर जाते हैं। जो तीव्र वेगवाले, चमकदार व लाल रंग के हैं, जो धूम्रयुक्त ताँबे जैसे लगते हैं, और जो पुरुष शरीर में ऊपर की ओर, नीचे की ओर तथा तिरछे अर्थात् दाएँ दृ बाँए भी बहते हैं।

इस मन्त्र में प्रयुक्त आपः पद सामान्यतः जल का वाचक है। किन्तु यहाँ दिये गये आपः के विशेषणों से यह स्पष्ट रूप से प्रतिभासित होता है कि मन्त्रद्रष्टा ऋषि को इस मन्त्र में आपः रक्त ही अभिप्रेत है। आप्लृ व्याप्तौ धातु व्युत्पन्न आपः शब्द का यौगिक अर्थ है दृ जो व्याप्त है अथवा फैला हुआ है।

आचार्य यास्क के आपः आप्नोतेः तथा शतपथ ब्राह्मण के यदाप्नोत्तस्मादापः इन निर्वचनों के अनुसार भी उक्त अर्थ का समर्थन होता है। मन्त्र में आपः के अरूणाः, लोहिनीः और ताम्र धूम्राः विशेषण भी आप को लाल रंग वाले चमकीले रक्त का वाचक ही सिद्ध करते हैं। आपः का शरीर में ऊपर–नीचे, दाएँ–बाएँ सब ओर गति करना भी उसकी रक्तवाचकता का द्योतक है जो रक्त शरीर की धमनियों में सर्वत्र प्रवाहित रहता है। इसके अतिरिक्त आपः(रक्त) का शरीर में सब ओर से सिन्धु (हृदय) में आना और फिर वहाँ से बाहर चले जाना भी उस वैज्ञानिक तथ्य को प्रमाणित करता है जिसके अनुसार शरीर का दूषित रक्त सब अंगो में बहकर पहले हृदय में आता है और शुद्ध होकर फिर हृदय से बाहर आकर शरीर के अंग प्रत्यंग में रक्तवाहिनियों के माध्यम से फैल जाता है। मन्त्र में हृदय के लिए प्रयुक्त सिन्धु शब्द भी रक्तप्रवाहचक्र के सन्दर्भ में नितान्त सार्थक है।

स्यन्दू प्रस्रवणे धातु से निष्पन्न सिन्धु शब्द का यौगिक अर्थ है दृ जहाँ सब ओर से रक्त बहकर आवें और जिसमें से बहकर फिर से बाहर जावें। वेद में प्रयुक्त हृदयम् शब्द भी आयुर्वेद के शरीररचना विज्ञान की दृष्टि से सर्वथा सार्थक व युक्तियुक्त है। संस्कृत के हृदयम् शब्द में विद्यमान हृ–द–य ये तीनों अक्षर शतपथब्राह्मण के अनुसार क्रमशः लेना, देना और प्रसारित करना इन तीनो अर्थों के बोधक है। तीन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अक्षर वाले हृदयम् के उपर्युक्त तीन ही काम है। वह समस्त शरीर के रक्त को लेता है (हृ) उसे शुद्ध करके फिर देता है (द) तथा समस्त शरीर में उसे प्रसारित व प्रवाहित करता है (यम्)। उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट प्रतिपादित होता है कि वेदमन्त्रों के दृष्टा ऋषिगण एवं वेदों के अध्येता शरीर के अन्तर्गत विद्यमान रक्तप्रवाह की वैज्ञानिक व्यवस्था एवं उसमें हृदय की प्रमुख भूमिका व उसकी समस्त क्रियाओं से भलीभांति परिचित थे। उन्होनें उनके लिए मन्त्रों में आपः एवं हृदयम् जैसे शब्दों का प्रयोग किया।

पुत्रदा औषधि – ओषधि विज्ञान का मूल भी वेद में विद्यमान है। मन्त्रों में ओषधियों की विशेषताओं, उनके नाना भेदों तथा विविध रोगों में उनके प्रयोगों का वर्णन है।

अथर्ववेद 6.11.1 में वर्णन है दृ शमी नामक वृक्ष पर उगे हुए पीपल का सेवन यदि स्त्री को ओषधी के रूप में कराया जाता है तो उसे पुत्र की प्राप्ति होती है दृ

शमीमश्वत्थ आरूढस्तत्र पुंसवनं कृतम्।
तद्वै पुत्रस्य वेदनं तत्स्त्रीष्वाभरामसि।।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इस मन्त्र का विनियोग गर्भाधान के पश्चात् होने वाले पुंसवन संस्कार की विधि में किया है। इसी को पुत्रदा ओषधी भी कहा है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि वेदों मे वैज्ञानिकता है, आवश्यकता है तो अन्वेषण और परीक्षण की।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

महिला सशक्तीकरण की अवधारणा
(शिवलीलार्णव महाकाव्य के विशेष परिप्रेक्ष्य में)

हर्षा
शोधच्छात्रा
संस्कृत विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
E mailharshasharma583@gmail.com

शोध–सारांश :–

महिला सशक्तीकरण आज एक अवधारणा के रूप में ज्वलंत मुद्दा बना हुआ है। इसे एक आदर्श के रूप में माना जा रहा है। आदर्श वह होता है, जो प्राप्त करने योग्य हो। यह कोई नवीन अवधारणा नहीं है अपितु यह तो महिलाओं का जन्मसिद्ध अधिकार है कि उन्हें समाज में पुरूषों के बराबर महत्व मिले। यही विचार शिवलीलार्णव महाकाव्य के रचयिता नीलकण्ठ दीक्षित के मस्तिष्क में 17वीं शताब्दी में ही आ चुका था, तब दक्षिण भारत में मुसलमान शासकों के आगमन के पश्चात वहाँ के धार्मिक, सामाजिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों में उथल–पुथल मची हुई थी। पर्दाप्रथा, बहुविवाह इत्यादि का प्रचलन बढ़ने के साथ ही स्त्रियों की दशा अत्यंत दयनीय, शोचनीय हो गई थी। तब कवि ने ऐसे काल्पनिक अलौकिक स्त्री पात्र को मूर्त रूप प्रदान किया, जिसम के स्त्रीत्व के गुण तो निहित थे ही साथ ही पौरूषत्व के गुण भी निहित थे, जो अपने साम्राज्य विस्तार हेतु उस समय की तमाम स्त्री अस्तित्व विरोधी कुरीतियाँ– पर्दाप्रथा को छोड़कर विश्वविजय रूपी अश्व पर सवार हो दिग्विजय प्रयाण हेतु अग्रसर होती है।

इतिहास में विशेष रूप से वीरांगना महिलाओं की नायक के रूप में भूमिका की चर्चा करने वाले साहित्यिक स्रोत बहुत कम है तथा इन अत्यल्प स्रेतो में से एक शिवलीलार्णव महाकाव्य है। यह महाकाव्य दार्शनीकता का पुट लिए हुए दर्शन और साहित्य का बेजोड संगम है। शैव सम्प्रदाय से सम्बन्धित यह महाकाव्य 22 सर्गों में विभक्त है।

इस शोध पत्र के माध्यम से यह स्पष्ट किया जाएगा कि कवि को उस समय के सामाजिक वातावरण को देख स्पष्ट हो गया था कि भविष्य में महिलाओं को प्रत्येक क्षेत्र में सशक्त होने की आवश्यता होगी जो आगे चलकर अन्य स्त्रियों के लिए प्रेरणा स्रोत बनेगी। इस महाकाव्य में तटातका को दिव्य गुणों से युक्त बताने के अतिरिक्त उसे एक नायक के रूप में एक योद्धा के रूप में, एक पत्नी के रूप में स्वीकृत किया है तथा मानवीय गुणों सहित सकल विद्याओं में निपुण राजव्यवस्था, सामाजिकता नेतृत्व क्षमता से युक्त भी माना है। तटातका के विविध वर्णन में सर्वत्र कवि का उद्देश्य द्युलोक और भूलोक के राजाओं में भगवती गौरी की श्रेष्ठता को प्रदर्शित करना है। यहाँ तक कि देवों के देव महादेव को भी वह अपने पराक्रम से विजित कर लेती है। इस प्रकार कवि के क्रान्तद्रष्टा मस्तिष्क ने महिला सशक्तीकरण जैसे विषय को 17वीं शताब्दी में ही रूप प्रदान कर दिया था । दिग्विजय करने वाली अलौकिक शक्तियों से युक्त सशक्त महिला के रूप में तटातका को प्रदर्शित करना महिला सशक्तीकरण का ही उदाहरण है।

इससे यह कहा जा सकता है कि महिला सशक्तीकरण कोई दुर्लभ अवधारणा नहीं है, जिसको प्राप्त करने की जरूरत हो, यह तो नारी जाति को स्वतः प्राप्त है। केवल उसके प्रत्यभिज्ञा करने की आवश्यकता है।

इस शोध पत्र का उद्देश्य दक्षिण भारत विशेषकर शिवलीलार्णव महाकाव्य में महिला सशक्तीकरण की अवधारणा का विश्लेषण करना है। इस शोध पत्र के लेखन में ऐतिहासिक, विश्लेषणात्मक और विवेचनात्मक शोध प्रविधियों का उपयोग किया जाएगा।

मुख्य शब्द :–**शिवलीलार्णव, नारी सशक्तीकरण, प्रयाण, प्रत्याभिज्ञा, दिग्विजय, तटातका**

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पर्यावरणः एक दृष्टि

डॉकैलाश चन्दमीणा
सहायकाचार्य, शिक्षाशास्त्राविभाग
श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविद्यापीठ
नई दिल्ली–110016

पर्यावरण मूलतः एक बहुशास्त्रीय दृष्टिकोण है, जो हमारे प्राकृतिक जगत और मानव पर उसके प्रभाव को समग्रता में समझना सिखाता है। यह एक व्यावहारिक विज्ञान है, क्योंकि इसका उद्देश्य अध्किाध्कि महत्वपूर्ण होते जा रहे इस प्रश्न का उत्तर देना है कि पृथ्वी के सीमित संसाध्नों के बल पर मानवसभ्यता को कैसे बनाए रखा जाए। पर्यावरण अध्ययन अनेक विषयों का मेल है जिनमें विज्ञान और सामाजिक अध्ययन दोनों शामिल हैं। पर्यावरण अध्ययन लगभग हर प्रमुख शास्त्रा के कुछ पहलुओं को समेटता है।

वने{स्मिन् मामके नित्य पुत्रावत परिरक्षिते।
पत्राांकुर विनाशाय पफलपूफलाभावाय च।।[i]

अर्थात् वनों को पुत्रावत् मानकर उनकी रक्षा के लिए सदैव तत्पर वाल्मीकि चेतावनी देते हैं कि जो भी मेरे वन के पत्रा एवं अंकुर का विनाश और पफल पूफल का अभाव करेंगे वे निश्चित रूप से शाप के भागी होंगे।

प्राचीनकाल में प्रातः उठते ही सब लोग सूर्य नमस्कार से लेकर जल अर्घ तक विविध् रीतियों से सूर्य देवता के प्रति सम्मान और कृतज्ञता व्यक्त करते थे ट्टग्वेद में कहा गया है– सूर्य मनुष्यों के सभी कृत्यों को देखते हैं–

"पश्यन् जन्मानि सूर्य।"[ii]

वे संसार को स्थिर रखने वाले एवं जगत के रक्षक हैं–

"विश्वस्य स्थातुर्जुगतश्च गोपा।"[iii]

विज्ञान ने माना है कि पृथ्वी पर सबसे पहले पेड़ पौधें की उत्पत्ति हुई थी। हम मानव प्रकृति की सबसे छोटी संतान है, वृक्ष हमारे पुरखे हैं तभी तो हमारे पूर्वजों ने वृक्षों को इतना सम्मान दिया और नाना प्रकार की लताओं के उत्पन्न होने की कामना की–

"प्रथम जायन्ता वीरुधे विश्वरूपा।"[iv]

महाकवि कालिदास विरचित अभिज्ञानशाकुन्तलम् नामक नाटक के चतुर्थ अंक में हमें प्रकृति का मानवीय रूप स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है–

शकुन्तला की विदाई के समय उसकी सखी प्रियंवदा शकुन्तला को समझाती है कि केवल तुम्ही तपोवन के वियोग से दुःखी नहीं हो अपितु तपोवन की भी यही अवस्था दिखाई पड़ रही है–

"उद्गलितदर्भकवलामृग्यः परित्यक्तनर्तना मयूराः।
अपसृतपाण्डुपत्राा मु चन्त्यश्रूणीव लताः।।[v]

पर्यावरण–संघटक तत्वः–

अथर्ववेद में पर्यावरण संघटक तीन तत्व प्रमुख हैं वे हैं जल, वायु और वनस्पति यथाः–

त्रीणि छन्दांसि कवियो वि येतिरे,
पुरुरूपं दर्शतं विश्व चक्षणम्।
आपो वाता ओषध्यः,
तान्येकस्मिन् भुवन् आर्पितानि।।[vi]

पारिवारिकपर्यावरणविषयः–भाई का भाई के प्रति द्वेष न होः–

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मा भ्राता भ्रातरं दृिक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यं च सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।[vii]

सामाजिक पर्यावरण विषयः–हम सब संकल्पहृदय मन से समान होवें:–

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे स जनानामुपासते।।[viii]

पर्यावरण संरक्षणः–

जलसंरक्षणम्

वायुसंरक्षणम्

ओजोनस्तर

द्युभू संरक्षण

संदर्भः–

[i]वाल्मीकि
[ii]ट्टग्वेद 1/60/2
[iii]ट्टग्वेद 7/60/2
[iv]अथर्ववेद 4/15/3
[v]अभिज्ञानशाकुंतलम् 4/12
[vi]अथर्ववेद 18.1.17
[vii]अथर्ववेद 3/30/6
[viii]ट्टग्वेद 10/191/1

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वैश्विक चुनौतियाँ और गाँधीवाद

डॉ. विनी शर्मा
सहायकाचार्या (राजनीति विज्ञान)
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, जयपुर परिसर

शोध सारांश

गांधी को वाद जैसे भ्रामक और गौरव प्रदान करने वाले शब्दों पर न तो कोई विश्वास था न इसमें रूचि। लेकिन गांधीवाद का विकास पूरी दुनिया के लिए शांति, सफलता, स्वतंत्रता, एकता और मानव जाति के विकास के लिए आवश्यक हो गया। गांधीवाद एक नई आशा, एक नई शक्ति और इससे भी अधिक एक नई प्रकार की सुव्यवस्थित योजना है जो आधुनिक दुनिया की समस्याओं, समाधान करने के लिए आगे आता है। उनकी विलक्षण राजनीतिक दूरदृष्टि और सात्विक विचारों में आज 21वीं शताब्दी के राजनीतिक, सामाजिक एवं वैयक्तिक सभी द्वन्द्वों का समाधान निहित है। महात्मा गांधी के विचार सामाजिक एवं धार्मिक समन्वय, सहयोग, समभाव, सत्य, अहिंसा एवं व्यक्ति का आत्मसम्मान यह सब आज विश्वस्तरीय मान्यता प्राप्त सिद्धान्त है। आज के तेजी से परिवर्तित हो रहे विश्व परिदृश्य में जहाँ आपसी तनाव एवं मतभेद बढ़ते ही जा रहे हैं, तब उनकी अहिंसा की दी हुई शिक्षा अधिक प्रासंगिक और प्रभावशाली हो जाती है। आज मानव जिन कठिनाइयों से गुजर रहा है, गांधी का मार्ग ही उसका पथ अवलोकित कर सकता है तभी शक्ति, सुरक्षा, उन्नति एवं समृद्धि के पथ पर बढ़ता हुआ मानव एक घृणाविहीन, युद्धविहीन एवं प्रेमपूर्ण विश्व की रचना कर सकता है। महात्मा गांधी का अहिंसा का विचार पूरी दुनिया द्वारा स्वीकार किया जा रहा है। 15 जून, 2007 को संयुक्त राष्ट्र ने घोषित किया कि गांधी के जन्मदिन को अन्तर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस के रूप में मनाया जाये। यह प्रस्ताव सबसे पहले ईरानी नॉबल पुरस्कार विजेता शिरीन इबाडी ने 2004 में दिया जो आगे चलकर भारत के लिए एक मजबूत वैश्विक पहचान बना। विश्व जिस विनाश के ज्वालामुखी पर खड़ा है उससे केवल गांधी जी ही बचा सकते हैं। उनकी क्षमता से प्रभावित होकर लार्ड माउण्टबेटन ने कहा था कि ''जो काम 50 हजार हथियार बंद सेना नहीं कर सकी थी वह गांधी जी ने कर दिया। वे अकेले ही एक पूरी सेना हैं।'' आज गांधी न सरल है और न जटिल है, आस्थाओं का यह युग पुरुष अपने ही देश में तलाशा जा रहा है। आतंक के साये में जी रहे सभी लोग न सत्य, न प्रेम और न अहिंसा से सरोकार रखते हैं, यही हमारी कमजोरी है, यही हमारी विवशता है। श्री मन्नारायण के शब्दों में, ''आज के मानव के सभी दुःखों को दूर करने की एकमात्र रामबाण औषधि गांधीवाद है।''

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शिक्षको में सृजनशीलता

डॉ. चन्द्र भान सैनी
जयपुर

आधुनिक कला एवं साहित्य,दर्शन एवं धर्म, विज्ञान एवं तकनीकी, उद्योग एवं वाणिज्य, यातायात एवं संचार, कृषि एवं सामाजिक संस्थाओं में हुई चकाचौंध पैदा कर देने वाली उन्नति एवं प्रगति का श्रेय मानवीय प्रतिभा एवं सुजनशीलता से सम्पन्न है। उन्हें उच्च आदर की दृष्टि से देखा जाता है तथा वे उच्च पद एवं प्रतिष्ठा को प्राप्त करते है। शिक्षा का एक महत्वपूर्ण कार्य सृजनात्मकता की योग्यता और प्रतिभा का विकास करना है। इसलिये अध्यापक के लिये यह आवश्यक है कि वह सृजनात्मकता के स्वरूप सृजनात्मकता से संबंधित स्तरों एवं सृजनात्मकता के विकास की विधियों को समझें।

मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सृजनात्मक अभिव्यक्ति हो सकती है वास्तव में संसार के समस्त प्राणियों में सृजनात्मकता पायी पाती है। द्वितीया विश्वयुद्ध के उपरान्त सृजनात्मकता के प्रत्यय पर मनोवैज्ञानिकों व शिक्षाशास्त्रियों ने विशेष ध्यान दिया। वैज्ञानिक तथा तकनीकी उपलब्धियों को अधिकाधिक अर्जित करने के लिये विभिन्न क्षेत्रों में सृजनात्मक व्यक्तियों को खोजना एक राष्ट्रीय आवश्यकता बन गई है।

भारतीय दर्शन के अनुसार हम सर्वशक्तिमान परमात्मा के अंश है इसलिये हम सबमें सृजनात्मक योग्यता विद्यमान है। किन्हीं व्यक्तियों में सृजनशीलता का गुण प्राकृतिक रूप से पाया जाता है। जो अमूल्य निधि है। जिस पर प्रगति, उन्नति तथा उत्थान निर्भर करता है सृजनशील व्यक्ति प्रत्येक युग एवं प्रत्येक काल में पाये जाते है सृजनशीलता वैसे तो प्रत्येक प्राणी में पायी जाती है प्रत्येक व्यक्ति में सृजनशीलता समान रूप से नहीं पायी जाती है। यहाँ तक कि समान बुद्धिलब्धि वाले व्यक्तियों में भी सृजनशीलता समान नहीं होती है ।

आज हमारी शिक्षा का उद्‌देश्य छात्र में सृजनात्मकता का विकास करना है । छात्रों में सृजनशील व्यक्तित्व विकसित करने के लिये पहले शिक्षकों का सृजनशील होना आवश्यक है। शिक्षक में जब सृजनशीलता का गुण पाया जायेगा तभी वह छात्रो में इस गुण को विकसित कर सकेगा।

सृजनशील शिक्षक अपने समाज और देश की अमूल्य धरोहर होते है समाज के उत्थान और विकास में इनका महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है अतः हमारा प्रयास होना चाहिये कि प्रत्येक शिक्षक में सृजनात्मक योग्यता का विकास करें जिससे वे शिक्षा के क्षेत्र में अपने नवीन विचारों एवं रचनात्मक कार्यों से राष्ट्रीय प्रगति में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकें । सृजनशील बालकों की पहचान स्कूल में ही की जानी चाहिए और उनकी रचनात्मक प्रतिभा को विकसित करने में सृजनशील शिक्षकों द्वारा उन्हें हर सम्भव सुविधायें दी जानी चाहिये।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वैदिक कालीन भारतीय कृषि

वेणुधर दाश
शोधच्छात्र
ज.रा.रा.संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर

भारतीयता विज्ञान एवं आध्यात्म का श्रेष्ठतम मार्ग है।हमारे मननशील पूर्वजों ने अहर्निश सत्य की गवेषणा करते हुये वेद भगवान् का साक्षात्कार किया तथा आदि काव्य महाभारत, रामायण, उपनिषद, गृह्यसूत्र, ब्राह्मण, आरण्यक और पुराणादि की रचना कर इहलोक एवं परलोक दोनों के सत्याधारित विवेचना का कार्य सम्पन्न किया।

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद दुःख भाग्भवेत्।।" अर्थात् सभी सुखी हो, सभी स्वस्थ हो, सभी सुन्दर हो तथा किसी को दुःख न हो, की श्रेष्ठ अवधारणा से देदीप्यमान भारतभूमि पृथ्वी ही नहीं त्रिलोकी के लिये आकर्षण का महान् केन्द्र बन गयी।

वेद रूपी ज्ञान की अविरल, सुपरिष्कृत एवं अद्‌भुत धारा को गायन के माध्यम से भावपूर्ण बनाकर सामवेद में ऋषियों के अनुभूतिजन्य ज्ञान को संवेदनाओं से परिपूर्ण कर अन्तः करण को आह्‌लादित करते हुये परमात्मा प्राप्ति के सहज साधन स्वर का प्रादुर्भाव कर दिया। वेद के इस भाग में समस्त स्थावर एवं जंगम जगत की आत्मा के रूप में, ऋतुचक्र ही नहीं वरन संसार चक्र के सार्वभौम नियन्ता के रूप में तथा अग्नि तत्त्व की दिव्य आकाशीय स्वरूप के रूप में भगवान् सूर्य की वन्दना की गई है। सामवेद में कृषि कर्म के आधार पृथ्वी, वायु, जल एवं नदीयों की वन्दना भी की गई है।

अथर्ववेद में नारायण की वन्दना के साथ साथ नारायण से प्रगट सृष्टि के परिचय एवं उसके क्रियाकलापों का सूत्र रूप में वर्णन है वहीं मानव द्वारा वाक् शक्ति को आधार कर पृथक् पृथक् ऋचाओं के समूह का उच्चारण कर प्रकृति में स्पन्दन उत्पन्न कर वांछित परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं, इसका विषद वर्णन है। ऋचाओं के इन समूहों को पृथक् पृथक् ऋषियों के द्वारा साक्षात किया गया है तथा विषयानुसार विविध सूक्तों के रूप में सुपरिभाषित किया गया है।

कृषि के क्षेत्र में ऐसे सूक्तों में कृषि सूक्त, पर्जन्य सूक्त, अन्न सूक्त, पृथ्वी सूक्त,वशा गौ सूक्त, अग्नि सूक्त, गौ सूक्त, गोष्ठ सूक्त, अनड्‌वान् सूक्त, पशु पोषण सूक्त, वनस्पति सूक्त, कृमिनाशन सूक्त, भूमि सूक्त आदि प्रमुख है।

वेदों में वर्णित कर्मों के सम्पादन हेतू कालान्तर ऋषियों द्वारा गृह्यसूत्र रचित किये गये। ऋग्वेद के गृह्यसूत्र आश्वालयन, शांखायन एवं शाम्बव्य गृह्यसूत्र है, यजुर्वेद के गृह्यसूत्र कात्यायन, बौधायन, आपस्तम्ब, सत्याषाढ, वैखानस, भारद्वाज, कण्ठ, बाधूल है, सामवेद के खादिर, गोभिल,गौतम, जैमिनीय गृह्यसूत्र है तथा अथर्ववेद के एकमात्र कौशिक गृह्यसूत्र है। कौशिकगृह्यसूत्र में विविध विषयों यथा गृहरचना, गोष्ठनिर्माण,विवाह संस्कार, विघ्न शमन, वृष्टिकर्म, भैषज निर्माण एवं कृषि कर्म आदि का विस्तार पूर्वक वर्णन है।

सार रूप में कृषि कर्म ईश्वरीय कर्म है स्वयं भगवान श्रीकृष्ण द्वारा गोपालन, गोचारण, धेनूकासुर वध एवं कालिया नाग दमन के द्वारा तथा भगवान बलराम द्वारा हल को आयुध के रूप में धारण कर इसका प्रमाण दिया है।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णाद् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विश्व शांति स्थापित करने में अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की भूमिका

लक्ष्मी छीपा
(शोधार्थी)
अपेक्स विश्वविद्यालय
शिक्षा विभाग, जयपुर

वर्तमान समय में विश्व के अधिकांश राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से जुड़कर स्वयं का तथा अन्य देशों का शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक एवं प्रजातांत्रिक विकास कर रहे हैं। परन्तु कुछ दशकों पूर्व स्थिति अलग थी, विश्व में हिंसा तथा द्वेष व्याप्त था जिसके कारण प्रथम विश्व युद्ध हुआ। इस युद्ध में लाखों करोड़ों लोगों की मृत्यु हुई। विश्व में शंति सुरक्षा स्थापित करने के उद्देश्य से राष्ट्र संघ की स्थापना हुई। परन्तु यह असफल रहा और पुनः सम्पूर्ण विश्व युद्ध कीआग में जल उठा। 1937 में द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ हुआ जो 1945 तक चला। सम्पूर्ण विश्व में शांति एवं सुरक्षा स्थापित करने तथा तृतीय विश्व युद्ध ना हो इस उद्देश्य से 24 अक्टूबर 1945 को संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापनाकी गई। संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना शांति, सुरक्षा, समानता, न्याय, प्रेम, सहयोग, भाईचारे की भावना, स्वतंत्रता, सहनशीलता, आपसी विश्वास, सभी लोगों के सामाजिक और आर्थिक उत्थान को बढ़ावा देने की भावना से ओत–प्रोत होकर की गई।

परन्तु वर्तमान समय में विश्व शांति एवं सुरक्षा के साये में नहीं है, क्योंकि आधुनिक युग में राष्ट्र परमाणु एवं आण्विक हथियारों से लैस हैं। हर राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से अधिक शक्तिशाली बनना चाहता है। दिन–प्रतिदिन आतंकवाद बढ़ता ही जा रहा है। विश्व में हिंसा तथा आतंकवाद को खत्म करने एवं शांति, भाईचारे की भावना को स्थापित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ तथा इसके परिवार के संगठन प्रयासरत हैं। जैसे न्छैम्ब्व्ए न्छप्ब्म्थ्ए प्स्व्ए ॅभ्व् आदि। इनमें सबसे प्रमुख संगठन है 'यूनेस्को'। यूनेस्को क पूरा नाम "संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन है। इस संगठन की स्थापना 4 नवम्बर 1946 को हुई। इसका उद्देश्य शान्ति एवं सुरक्षा के लिए योगदान करना है; जिसकी पूर्ति शिक्षा, विज्ञान तथा संस्कृति से संबंधित विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा होती है। अन्तर्राष्ट्रीय शांति तथा मानवजाति के कल्याण के लिए यूनेस्को का निर्माण हुआ है। यूनेस्को द्वारा प्राप्त की जाने वाली शांति सेनाओं एवं आर्थिक समझौतों की शांति नहीं है, बल्कि "वह मस्तिष्क व हृदय की शान्ति है।" युनेस्को ने शांति की पहल करते हुए "शांति की संस्कृति मेनिफेस्टो 2000" प्रकाशित किया, जिसमें विश्व में शांतिमय जीवन के पाँच मूल्य निर्धारित किए गए :–

(1) सभी के जीवन के सम्मान
(2) हिंसा को त्यागना
(3) दूसरों के साथ सहयोग
(4) पृथ्वी का संरक्षण
(5) घनिष्ठता की पुनर्प्राप्ति

भारतीय संस्कृति की तो यह विशेषता रही है "सर्वे भवन्तु सुखिनः" तथा "वसुधैव कुटुम्बकम्"। स्वरूप, आकृति एवं प्रयोजनों की दृष्टि से भिन्न होते हुए भी प्रायः सभी अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों का निर्माण इस भावना के फलस्वरूप होता है कि "मानव को एक होना है।"

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत साहित्य और विश्व शान्ति

वर्तमान मे सम्पूर्ण विश्व ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षैत्र में तो आशातीत वृद्धि कर भौतिक सम्पदाओं को प्राप्त कर लिया हैं। फिर भी मनुष्य सम्पूर्ण शान्ति प्राप्त नही कर पाया है उसे कुछ शुन्यता का अनुभव होता है। वर्तमान पीढ़ी विज्ञान के आकर्शक माया जाल में उलझी हुई हैं तथा मृगतृश्णा ने उसकी शान्ति को छीन लिया हैं। व्यक्ति को यदि मृगतृष्णा से मुक्त होकर सुखी होना है एवं परमानन्द का अनुभव करना है तो उसे उन आदर्शो को अपने जीवन मे सम्मिलित करना होगा, जिनसे उन्हे हर परिस्थिति मे सुख एवं शान्ति का अनुभव हो सके । उक्त आदर्शो की प्राप्ति संस्कृत ग्रन्थो यथा– वेद, आरण्यक, उपनिशद, अष्टादश पुराण, रामायण, महाभारत, स्मृतियों, नितिग्रन्थो व दर्शन ग्रन्थो आदि के अनुशीलन से सम्भव हैं। यजुर्वेद मे सम्पूर्ण विश्व में शान्ति की कामना इस प्रकार की गई हैं –

ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ शान्तिः
पृथ्वी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः
वनस्पतयः शान्तिः विश्वेदेवाः शान्तिः
ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः
सामा शान्तिरेधि।
ऊँ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

इस प्रकार भारतीय वेद ग्रन्थ सम्पूर्ण विश्व को अपना परिवार मानते हुए सम्पूर्ण विश्व *शान्ति* की कामना करते हैं। तीन बार *शान्ति*शब्द की पुनरावृत्ति द्वारा आध्यात्मिक आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक तीनो दुःखो से *शान्ति* की उस परब्रह्म परमेश्वर से प्रार्थना की गई है। इस प्रकार संस्कृत वाड्मय वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना सें विश्व को ज्ञान प्रदान करता है। कहा भी गया है –

" अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम
उदार चरितानांतु वसुधैव कुटुम्बकम् "

वैदिक वाड्मसय सम्पूर्ण विश्व को अपना घर मानते हुए समस्त जीवमात्र के कल्याण की कामना करता है व सम्पूर्ण विश्व में स्नेह, मित्रता, करूणा जाग्रत करते है। यथा –

"मित्रस्य चक्षुशा समीक्षामहे"
"यद्वदामि मधुरम् वदामि"
"अविद्वेशं कृणोमि"

ईशावास्योपनिशद् मे कहा गया है कि यह सम्पूर्ण विश्व उस एक ही ईश्वर (तत्व) द्वारा व्याप्त है अतः व्यक्ति को त्याग पूर्वक उपभोग करना चाहिए।

"इशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्
तेन त्यक्तेन भुंजीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्"

श्री मद्भगवद् गीता मे भी लिखा है कि हम सब उस एक ही चैतन्य से उत्पन्न हुए है अर्थात् हम सब बन्धु है इस प्रकार संस्कृत साहित्य में विश्व बन्धुत्व की कामना की गई है। केवल आवश्यकता इस बात की है कि सम्पूर्ण विश्व जिस अर्जुन रूपी विशाद से ग्रस्त है उस विशाद को भारतीय प्राचीन ज्ञान द्वारा दूर करना होगा। इस विशाद को दूर करने में भगवद्गीता के उपदेश समर्थ है। यह ग्रन्थ कोई धार्मिक ग्रन्थ नही है अपितु सार्वभौमिक सार्वकालिक व सार्वत्रिक है। गीता के ज्ञान को अपनाकर हम अपने जीवन मूल्यों को मजबूत बना सकते है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत वाड्.मय में महर्शि पतंजलि प्रतिपादित अश्टांग योग ऐसा पथ है जिस पर सभी इंसान पूर्ण स्वतन्त्रता के साथ निर्भय होकर चल सकते है। तथा सम्पूर्ण विश्व में ाान्ति हो सकती है। अश्टांग योग मनुष्य को सामान्य योग व्यवहार से लेकर आध्यात्म की उच्चतम स्थिति का बोध कराने में समर्थ है। शंकराचार्य द्वारा भजगोविन्दम् के तीसरे सूत्र में तत्वमसि की चर्चा की गई है जिसका अर्थ है –*"हर प्राणी में एक ही जीव है"*

उपनिशदों में ऋशियो ने अपने सम्पूर्ण जीवन का निचोड़ डाला है। उपनिशद् गन्थ सम्पूर्ण विश्व को ाान्ति का पाठ पढ़ाने मे समर्थ ग्रन्थ है। उपनिशदो के बारे में निम्न विद्वानो के विचार अवलोकनीय है।

स्वामी विवेकानन्द– *"उपनिशदों में ऐसी ाक्ति भरी पड़ी है जो सम्पूर्ण विश्व को बल ाौर्य एवं जीवन प्रदान कर सके।*

दारा शिकोह– *"उपनिशदो का ज्ञान ऐसा ज्ञान है जिससे आत्मा को ाश्वत ाान्ति तथा आनन्द की प्राप्ति होती है।*

डॉ एनीबेसेंट– "भारतीय उपनिशद् ज्ञान मानव चेतना की सर्वोच्च देन है।

वेबर– "भारतीय उपनिशद् ईश्वरीय ज्ञान के महानतम् ग्रन्थ है। इनसे सच्ची आत्मिक ाान्ति प्राप्त होती है।

ये विश्व साहित्य की अमूल्य धरोहर है। इस प्रकार संस्कृत वाड्.मय का प्रचार प्रसार सम्पूर्ण विश्व में हो एवं इनमे विद्यामान मूल्यों का विकास जनमानस मे किया जाये तो सम्पूर्ण विश्व में ाान्ति सम्भव है।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं,पूर्णात्पूर्णमुदच्यते,
पूर्णस्य पूर्णमादाय,पूर्णमेवावशिष्यते।
ॐ शान्ति शान्ति शान्तिः ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भस्त्रिका प्राणायाम का विद्यार्थीयों के तनाव पर प्रभाव

अंकित कुंडू
हेमराज चौधरी

पृष्ठभूमि :– योग एक प्राचीन भारतीय विज्ञान है तथा उन्नत जीवन की कला है। आदर्श समाज की रचना का विज्ञान भी है। भस्त्रिका प्राणायाम भी योग का अंग है और हमारा उद्धेश्य भस्त्रिका प्राणायाम द्वारा एक स्वस्थ व्यक्ति में उसकी तनाव को जानना था तथा उसका मूल्यांकन करना था।

परिचय :– 'भस्त्रिका' – यह संस्कृत का शब्द हैं।, जिसका अर्थ है– लौहार की धौंकनी, इसमें धौंकनी की तरह ही फेफड़ों में से बलपूर्वक वायु को (श्वास) अन्दर–बाहर किया जाता है।, जिस तरह धौंकनी में हवा भरने से वायु का प्रवाह होने से/बढ़ने से गर्मी (आग) उत्पन्न होती हैं।, उसी तरह भस्त्रिका से शरीर में वायु (श्वास) प्रवाह की वृद्धि होती हैं।, जिससे भौतिक और सूक्ष्म दोनों स्तर पर आंतरिक ताप उत्पन्न होता है।, जिससे शरीर व मन की आंतरिक अग्नि उद्धीप्त होती है।

भस्त्रिका, कपाल भाँति क्रिया में किए जाने वाले उदर श्वसन और उज्जायी प्राणयाम में किए जाने वाला वक्ष–श्वसन का सुन्दर मिश्रण हैं।, इन दोनों कपाल भाँति, उज्जायी की तकनीक व भस्त्रिका की तकनीक में मामूली सा अंतर है।, लेकिन भस्त्रिका से उदर श्वसन और वक्ष श्वसन दोनों में सुधार आता हैं। अतः दोनों की जगह (कपाल भाँति व उज्जायी) व अन्य योगाभ्यास के स्थान पर सिर्फ भस्त्रिका करके भी पूरा फायदा लिया जा सकता है।

भस्त्रिका प्राणायाम द्वारा विद्यार्थी मे तनाव पर सकारात्मक परिवर्तन आता है। तथा शैक्षिणिक प्रदर्शन में सुधार करता है व याददाशत में भी सुधार होता है। तथा मानसिक सन्तुलन प्राप्त होता है। तथा भविष्य में भस्त्रिका प्राणायाम द्वारा विद्यार्थी परीक्षाओं के तनाव में व योग चिकित्सा में सर्वथा नवीन आयाम का विकास होगा अतः इस शोध के पूर्णतयाः व मौखिक औचित्य पूर्ण बनने कि सम्भांवना बनती है।

शोध प्रणाली :–इस अध्ययन में एक सामान्य ग्रुप का प्री डेटा लेकर जिसमें प्दजमतअंदजपवद के रूप में भस्त्रिका प्राणायाम दिया तथा यह अध्ययन 15 दिवसीय अन्तराल के प्रभाव के रूप में जाना यह डाटा **प्रश्नोतरी,श्वसन दर, नाड़ी दाब, श्वास दर को रोकने की क्षमता** के द्वारा स्कूल में पढने वाले विद्यार्थीयों की तनाव को जानने के लिये लिया। जिनकी उम्र 14 से 18 वर्ष थी तथा सेम्पल साईज 31 थी, स्वेच्छा से करने वाले स्वस्थ छात्र और छात्राओ को सम्मिलित किया गया था।

परिणाम– भस्त्रिका प्राणायाम समुह में

Sr. No.	TEST	PR		RR		BHT		DSST	
		Pre Data	Post Data	Pre Data	Post Data	Pre Data	Post Data	Pre Data	Post Data
1	MEAN	86.742	85.677	15.613	19.129	13.710	17.057	53.774	67.226
2	ST DEV	14.971	9.928	3.499	3.922	4.100	3.252	14.186	16.570
3	% OF CHANGES	-1.227		22.521		24.416		25.015	
4	T-VALUE	0.436		-5.377		-12.791		-8.189	
5	P-VALUE	0.666		0.000		0.000		0.000	

निष्कर्श– भस्त्रिका प्राणायाम द्वारा विद्यार्थीयों की तनाव पर प्रभाव पड़ा है इस आधार पर हम यह कह सकते है कि भस्त्रिका प्राणायाम करने वाले विधार्थी विशेष रूप से प्रभावित हुए।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

'संस्कृत काव्य शास्त्रीय परम्परा में वर्णित अलंकार तत्त्व विमर्श

दुर्गा सैन
शोधार्थी
म.द.स.वि.वि.(अजमेर)

काव्य – समालोचना हेतु प्रसिद्ध शास्त्र है – काव्यशास्त्र। काव्यशास्त्र के प्रारम्भिक युग में काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों के लिए प्रयुक्त 'काव्यालंकार' नाम उस युग में अलंकारों के महत्त्व अथवा प्राधान्य को द्योतित करता है। वस्तुतः काव्यालंकार शब्द में प्रयुक्त अलंकार शब्द सौन्दर्य का वाचक है अर्थात् रीति, गुण, वृत्ति, रस, अलंकार विशेष इत्यादि के कार्य में अलंकार शब्द का प्रयोग हुआ है। जिस पदार्थ या तत्त्व के द्वारा कोई वस्तु शोभित की जावे उसके सौन्दर्य में वृद्धि हो, वह पदार्थ या तत्त्व अलंकार कहलाता है। अतः काव्य के सौन्दर्य तथा शोभाकर धर्मों को अलंकार कहा गया।

अलंकार तत्त्व का प्रथम दर्शन मूलतः वेदों में दृष्टिगत होता है। वेदों के पश्चात् प्राचीन आचार्य भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र में अलंकारों का दिग्दर्शन होता है। भरत मुनि के अनन्तर भामह ने 38 व दण्डी ने 37 अलंकारों को प्रस्तुत किया और दण्डी के परवर्ती आचार्यों द्वारा अलंकार – संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि की गयी। इनमें उद्‌भट्, वामन, रुद्रट, भोज, मम्मट, रुय्यक, विश्वनाथ, अप्पयदीक्षित और पण्डितराज मुख्य है, जिन्होंने अलंकारों की मौलिक रूप से उद्‌भावना तथा विवेचना की।

इस समय तक अलंकारों की संख्या 125 तक हो गयी तथा कुछ आचार्यों द्वारा अलंकरों के अनेक भेदोपभेद का वर्गीकरण प्रस्तुत किए गए जिसमें रुद्रट व रुय्यक का नाम विशेषतः स्मरण होता है। अलंकारों की सर्वाधिक संख्या अप्पयदीक्षित द्वारा कुवलयानन्द ग्रन्थ में 123 (अर्थालंकार) दी गयी। वर्तमान समय के आधुनिक आचार्य विद्याराम, वेणीदत्त, छज्जूरामशास्त्री, नरसिंह कवि, अच्युतराय, विश्वेश्वरदेव, श्रीकृष्ण शर्मन्, रामदेव चिरंजीव भट्टाचार्य इत्यादि ने भी अलंकार तत्व के विवेचन में प्रशंसनीय योगदान दिया है।

काव्यशास्त्र की समृद्ध परम्परा के अन्तर्गत प्राचीन व अर्वाचीन काव्यशास्त्रीय आचार्यों द्वारा किए गए काव्य के महत्त्वपूर्ण स्थूल तत्त्व अर्थात अलंकार तत्त्व के विशद् विवेचन से संस्कृत काव्यशास्त्रीय परम्परा में अलंकार तत्त्व का महत्त्व स्वतः उद्‌घाटित होता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वर्तमान संस्कृत शिक्षण की समस्याएं एवं समाधान

(शोधसार)

डॉ.अखिलेश कुमार त्रिपाठी
जयपुर

वस्तुतः शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से छात्र या बालक का सर्वांगीण विकास संभव है। परंतु वर्तमान शिक्षा प्रणाली सिर्फ व्यावसायिक विकास पर बल प्रदान कर रही है। जबकि समाज का उत्थान केवल व्यावसायिक विकास से ही संभव नहीं हो सकता, अपितु सर्वपक्षीय विकास आवश्यक है। अत एव सर्वपक्षीय विकास हेतु संस्कृत में निहित ज्ञान विज्ञान के तत्वों का अध्ययन आवश्यक है। परंतु सामाजिक उदासीनता के कारण संस्कृत के प्रति लोग अरुचि प्रकट करते हैं। वर्तमान संस्कृत शिक्षण की सबसे बड़ी समस्या संस्कृत के प्रति समाज और छात्रों के नकारात्मक भावना है, जो अरुचि प्रकट करती है। दूसरा हम यह भी कह सकते हैं कि संस्कृत को सिर्फ पारंपरिक विधि प्रविधियों के माध्यम से ही पढ़ाया जाना व संस्कृत को एक पारंपरिक पैतृक धरोहर के रूप में ही मानना एक समस्या है। संस्कृत शिक्षण की एक समस्या यह भी है कि विषय विशेषज्ञ व प्रशिक्षित अध्यापकों की न्यूनता है। एक पक्ष यह भी है कि संस्कृत के प्रति सरकारी उदासीनता जो संस्कृत विद्यालय व अध्यापकों की नियुक्ति में अरुचि और लापरवाही रखते हैं। संस्कृत शिक्षण को सुदृढ़ बनाने के लिए सर्वप्रथम संस्कृत विद्यालयों को आधुनिक संसाधनों से युक्त करना पड़ेगा और प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति को बढ़ावा देना पड़ेगा। संस्कृत को आधुनिक विधि व प्रविधियों के माध्यम से अध्ययन अध्यापन करना कराना पड़ेगा एवं संस्कृत के प्रति समाज व छात्रों तथा सर्वकारीय व्यवस्थाओं को जागृत करना पड़ेगा, तभी संस्कृत का विकास संभव है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

'भारतीय संस्कृति में यज्ञानुष्ठानों का महत्व"

अक्षय औदीच्य, शोधार्थी
वेद विभाग
जगदगुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय जयपुर

यज्ञ भारतीय संस्कृति का प्रतीक है। भारतीय संस्कृति में जितना महत्व यज्ञ को दिया गया है उतना महत्व किसी अन्य विधा को नहीं दिया गया है। हमारा कोई भी धर्म कार्य यज्ञ के बिना पूर्ण नहीं होता। आधानकाल से प्रयाणकाल तक के समस्त संस्कारों में यज्ञ की नितान्त आव यकता होती है।

"यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म"

यज्ञ ही श्रेष्ठ कर्म है। संसार की समस्त प्रक्रिया यज्ञमय है। पर्यावरण की सुरक्षा यज्ञ में और यज्ञ का संरक्षण उसके निरन्तर क्रियान्वयन में विद्यमान है। यज्ञ से सुगन्धित द्रव्यों का धूम अंतरिक्ष में व्याप्त होकर वहां स्थित प्रदषण को समाप्त करने में समर्थ है जिससे पूर्ण शुद्धता प्राप्त होती है। अतः सात्विकी चेतना हेतु यज्ञ करना चाहिए। वेदों में यज्ञ हेतु प्रार्थना की गई है।

अग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा सोमाय पितृमते स्वाहा।

अपहता सुरा रक्षांसि वेदिशदः।।

सभी पदार्थो को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने वाले अग्नि और सोम को विद्वानों के सहयोग से संयुक्त करके संसार में फैले दोशों को दूर करिये एवं प्रकृति–व्याप्त गुणों की रक्षा कीजिए। यह यज्ञ से ही संभव है, इसी से विश्व की सत्ता व सुरक्षा है,

यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव च।

यज्ञोदानं तप चैव पावनानि मनीषिणाम्।।

यज्ञदान और तपरुप त्याग करने योग्य नहीं है बल्कि वह तो अव य कर्तव्य कर्म है क्योंकि यज्ञ दान और तप ये तीनों कर्म पुरुशों को पवित्र करने वाले हैं, जो भी यह तीनों में से एक का भी विधिवत् अनुष्ठान करता है उसकी निश्चित ही बुद्धि सात्त्विकता को प्राप्त होकर समाज को नया रूप प्रदान करती है।

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम्।

मन्त्रोहमहमेवाज्य महमग्निरहं हुतम्।।

भगवान गीता में कहते हैं–श्रौतकर्म मैं हूँ, यज्ञ मैं हूँ, स्वधा मैं हूँ, औशधि मैं हूँ, आज्य (घृत) मैं हूँ, अग्नि मैं हूँ और अन्त में हवन भी मैं ही हूँ।

प्रस्तुत लेख में भारतीय संस्कृति में यज्ञानुष्ठान एवं यज्ञों के माध्यम से सम्पूर्ण प्रकृति को यज्ञमय बनाने तथा पर्यावरण सन्तुलन हेतु यागादि कार्य करने पर मंथन किया गया है।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विश्व शान्ति के सन्दर्भ में शिक्षा का स्वरूप

डॉ. हरिओम शर्मा
प्रवक्ता
एस0एन0 कॉलेज ऑफ एजूकेशन
मनियाँ, धौलपुर।

वर्तमान समय में जब मानव निरन्तर भौतिक उन्नति के सोपान चढ़ता जा रहा है दूसरे से अधिक पाने की चाह व ऊँचा बनने की प्रतिस्पर्द्धा ने उसके नैतिक मूल्यों का पतन कर दिया है जिसके कारण वह येन केन प्रकारेण विश्व विजित होने के लिए नित्य नैतिक, सामाजिक व मानवीय वर्जनाओं को भंग कर रहा है। मानव के इन कृत्यों ने उसे पुनः असभ्य और बर्बर की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया है। कहीं गुप्त कहीं खुलेआम एक दूसरे पर होते आक्रमण हमें चिन्तन के लिए विवश कर रहे हैं कि शिक्षा प्रसार के बाद भी विश्व में अशान्ति, आतंकवाद क्यों बढ़ता जा रहा है।

जिस शिक्षा पद्धति से सभ्य, सुसंस्कृत एवं मानवीय गुणों से सुशोभित नागरिकों का विकास होना चाहिए उसी के द्वारा असभ्य, अपराधी, स्वार्थी व अमानवीय दुर्गुणों से युक्त नागरिक तैयार हो रहे हैं। वर्तमान समय में निरन्तर परिवर्तित होती हमारी शिक्षा पद्धति इस बात पर बल देती है कि सामाजिक आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा पद्धति व पाठ्यक्रम में परिवर्तन आवश्यक है।

शान्ति शिक्षा की विशय–वस्तु एवं सहगामी क्रियाओं का क्रियान्वयन ही नागरिकों में मानवता के प्रति प्रेम, अहिंस, स्नेह, दया, करूणा, विश्वास सहयोग, भाईचारा सहनशीलता आदि गुणों का विकास कर सकता है।

वर्तमान में प्रचलित पंचशील का सिद्धान्त महात्मा बुद्ध का पंचशील का उपदेश है जो वह अपने शिश्यों को उपदेश देते थे। 1.अहिंसा 2.सत्य 3.चोरी ना करना 4.प्रमाद 5.ब्रह्मचर्य यही शिक्षा का मूलमंत्र था। जिसे वर्तमान शिक्षा पाठ्यक्रम में अनिवार्य रूप से सम्मिलित किया जाना चाहिए।

अशान्ति की समस्या न केवल भारतीय सीमाओं तक सीमित है अपितु इसका स्वभाव वैश्विक है। आज प्रत्येक राष्ट्र शान्ति शिक्षा की आवश्यकता महसूस कर रहा है तथा इस ओर प्रयासरत भी है।

विश्व स्तर पर विभिन्न देशों में शान्ति शिक्षा का पाठ्यक्रम– विभिन्न देशों में शान्ति शिक्षा का पाठ्यक्रम मुख्यतः तीन पक्षों पर केन्द्रित है।

1. संचार
2. सहयोग
3. समस्या समाधान

1. वरूडी (1994) क्रोशिया व लाइबेरिया (1993) ने इन पाठ्यक्रमों के क्रियान्वयन व शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के लिए निर्देशन पुस्तिकाओं को तैयार किया गया है।
2. श्रीलंका में भी इसी प्रकार की निर्देशन पुस्तिकाओं का उपयोग किया जा रहा है जो इस बात पर बल देता है कि विद्यालयों के मूल विशयों के साथ शान्ति शिक्षा को समन्वित करके शिक्षण कार्यक्रम हो।
3. सूडान में खेलकूद, कला व विज्ञान प्रोजेक्ट के माध्यम से विद्यार्थियों में सहयोग व सम्मान की भावना का विकास किया गया है।
4. खांडा, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, लेबनान, श्रीलंका व कई अन्य देशों में शान्ति के सन्दर्भ में द्वन्द्व वियोजन क्रियाओं व सामुदायिक सेवाओं आदि कार्यक्रमों को चलाया जा रहा है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भारत में शान्ति शिक्षा—यूनेस्को की World Directory of peace Research and TrainingInstitute (1994)की रिपोर्ट के अनुसार भारत में शान्ति शिक्षा के क्षेत्र में 25 ऐसे संस्थान है जो ाान्ति शिक्षा से सम्बन्धित शोधकार्य व शैक्षणिक कार्यक्रमों का क्रियान्वयन कर रहे हैं। गांधी शान्ति प्रतिस्ठान 1959 से मालवीय सेन्टर फॉर पीस रिसर्च 2009 की स्थापना बी.एच.यू वाराणसी में की गयी है। इसी क्रम में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिशद द्वारा राश्ट्रीय पाठ्चर्या की रूपरेखा 2005 के विकास की प्रक्रिया के दौरान शान्ति के लिए शिक्षा नामक राष्ट्रीय फोकस समूह की स्थापना की गई थी।

शान्ति की शिक्षा एक ऐसे सरोकार के रूप में विकसित हो जो समूचे स्कूली जीवन पर छा जाये।

संदर्भ सूची

1. पाण्डेय, डॉ रामशकलः शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि (2008), विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

2. चतुर्वेदी, खेमचन्दः शाश्वत जीवन की व्याख्या : गीता (2008), तुलसी मानस संस्थान, जयपुर।

3. केसरी, एच.: आधुनिक शिक्षा के सन्दर्भ में गीता सीखने की प्रक्रिया के रूप में (1986), ओस्मानिया विश्वविद्यालय।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पंचतंत्र में मानवीय मूल्यों की अवधारणा

भवानी शंकरः
शोधच्छात्रः
ज.रा.रा.सं.वि.,जयपुर

संस्कृत साहित्यान्तर्गत विविध प्रकार के क्षेत्रों का वर्णन समय–समय पर विद्वानों द्वारा किया गया है। चाहे वह सामाजिक क्षेत्र हो आर्थिक क्षेत्र हो राजनीतिक क्षेत्र हो अथवा मानवीय क्षेत्र हो। मानवीय क्षेत्र के अन्तर्गत एक आदर्श मानव का निर्माण किन–किन गुणों अथवा मूल्यों से हो सकता है। इसका भी सुन्दर वर्णन हमारे समृद्ध व विपुल साहित्य में पंचतन्त्रम् नीतिशतकम् – हितोपदेश कालिदास कृत ग्रन्थों रामायण गीता इत्यादि ग्रन्थों में किया गया है।

मानवीय स्वभाव है कि वह न चाहते हुए भी अपने आस–पास के लोगों से ईर्ष्या घृणा द्वेष आदि करने लगता है। स्वार्थवश वह अपने ही स्वजनों को हानि पहुंचाने लगता है। किन्तु मूल्यों को जानकर नीतिमार्ग को अपनाकर अपने स्वभाव को परिवर्तित कर सकता है। अपने मन को नियन्त्रित व इन्द्रियों को वश में कर सकता है इन मूल्यों को अपने जीवन में आत्मसात करने में हमारा संस्कृत साहित्य एक सहयोगी की भूमिका निभा सकता है। वैसे तो संस्कृत साहित्य में मानवीय मूल्यों पर अथाह सम्पदा है, जनसामान्य के लिए बहुत उपयोगी है। परन्तु मैं यहां मुख्य रूप से आचार्य विष्णु शर्मा द्वारा रचित पंचतंत्र ग्रन्थ में निहित मानवीय मूल्यों को जनसामान्य के प्रकाश में लाने का पूर्णतः प्रयास करूंगा।

पंचतंत्र में मुख्य रूप से पांच अध्याय हैं। मित्र भेद – काकोलूकीयम् – लब्धप्रणाश – मित्रसम्प्राप्ति – अपरीक्षितकारक इत्यादि। इन पांच अध्यायों में आचार्य ने पशुओं की कथा–उपकथा के माध्यम से जो नीति व मूल्यपरक जो सूत्र दिये है जिनमें से प्रत्येक कथा–उपकथा व श्लोकों में लिखित जो मानवीय मूल्य है – जैसे – अहिंसा शान्ति – धैर्य – न्याय – ईमानदारी – प्रेम – दया – सेवाभाव व राष्ट्रीय–भक्ति इत्यादि सम्मिलित हैं। इन मूल्यों को इस लेख में प्रकाश में लाया जाना मेरा उद्देश्य है।

इसके साथ पंचतंत्र में पर्यावरण चेतना व पशुओं के माध्यम से अन्य जो जनकल्याण के विषय इस पंचतंत्र ग्रन्थ में सूत्रीत हुए है – उनपे भी इस लेख में सामान्य प्रकाश डाला जायेगा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विश्वशान्ति का महत्व

दीपेश कुमार गुप्ता
जयपुर

आज प्रत्येक देश स्वार्थ की पूर्ति के लिए भयानक व कठिन से कठिन अस्त्र –शस्त्रों की होड में चला जा रहा है। प्रत्येक देश अणुबम ,परमाणु बम,जैविक बम बनाकर अपार शक्ति का परिचय दे रहा है वह यह भूल चुका है कि मानव जाति के लिए क्या उचित है व क्या अनुचित। आज सम्पूर्ण विश्व एक बहुत बडी अशान्ति के दौर में पहुँच चुका हैं। **विश्वशान्ति कैसे व किस प्रकार से हो यह विश्व के लिए एक विचारणीय व अति आवश्यक प्रश्नहै ?** विश्वशान्ति के लिए बंधुत्व की भावना सबसे पहले जरूरी है। भाईचारे,मेलमिलाप की भावना व परस्पर हित–चिंतन की भावना से ही विश्व शान्ति की स्थापना की जा सकती है । विश्व शान्ति के लिए **"वसुधैव कुटुम्बकम्"** की भावना का विकास करना आवश्यक है विश्व शान्ति के लिए मानव कल्याण की भावनाओं को अग्रसित करना होगा। मनुष्य को भौतिकतावादी दृष्टिकोण का परित्याग कर प्रकृतिवादी दृष्टिकोण की तरफ लोटना होगा।

प्रत्येक वर्ष **21 सितम्बर** को दुनिया भर में **अन्तर्राष्ट्रीय शान्तिदिवस** मनाया जाता है यह दिवस सभी देशों व लोगो के बीच स्वतन्त्रता ,शान्ति और खुशी का एक आदर्श माना जाता है । **महात्मा गाँधी** ने भी शान्ति के लिए लिखा है कि **" आँख के बदले आँख की भावना पूरे विश्व को अन्धा करदेगी।"** अतः हमे विश्वबन्धुत्व, विश्वशान्ति एवं सद्भाव की मिसाल कायम करके विश्व कल्याण के लिए प्रयत्न करना चाहिए। भारतीय ग्रन्थ **गीता** में भी कहा गया है कि " शान्ति अशान्तस्य कुतः सुखम् " अर्थात शान्ति से रहित व्यक्ति को सुख नहीं मिल सकता। इसलिए वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विश्व में शान्ति की महती आवश्यकता है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत साहित्य में पर्यावरण संवेदनशीलता

डॉवर्षाखण्डेलवाल
सहायक आचार्य
संस्कृत राजकीय कन्या महाविद्यालय राजसमंद

साहित्यिक परिदृश्य में संस्कृत दुनिया की प्राचीन भाषाओं में से एक है। संस्कृत लगभग सभी विषयों में यथा दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र, भूगर्भशास्त्र, इतिहास, साहित्य आदि में अपना योगदान रखती है। भारत की गरिमा की अभिवृद्धि में भी इसका योगदान अग्रगण्य है। आज दुनिया के सामने पर्यावरण प्रदूषण एक गंभीर समस्या है। पर्यावरण संवेदनशीलता में भी संस्कृत साहित्य का अमूल्य योगदान है। संसार पांच तत्वों पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश से गठित हुआ है। इनमें से पृथ्वी, जल और वायु प्रदूषण से ग्रस्त हैं। जो प्रदूषण प्राकृतिक संतुलन को विकृत करता है, वही पर्यावरण प्रदूषण है। प्राचीनकाल में मानव प्रकृति का अभिन्न अंग था। वह अग्नि देव, वरुण देव, वायु देव के रूप में प्रकृति की शक्तियों की पूजा करते थे। आधुनिक युग में मानव स्वार्थवश औद्योगीकरण करने लगा है। उसके द्वारा किए गए प्राकृतिक संसाधनों का शोषण, औद्योगिक प्रदूषण, वनों की कटाई और रसायनों का अत्यधिक उपयोग की वजह से ही पर्यावरण प्रदूषण में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। अतः मनुष्य को आने वाली पीढ़ी के विकास हेतु पर्यावरण संरक्षण में योगदान देना चाहिए। 'वेद ' जो मानव जाति की प्रथम पुस्तक है, वह पर्यावरण का सबसे बड़ा ग्रंथ माना जाता है। वेद ने मनुष्य व प्रकृति के बीच माँ व बच्चे जेसे स्वस्थ सम्बन्ध को सुरक्षित रखा है। हमारी संस्कृति किसी भी परिस्थिति में पेड़ का कोई नुकसान बर्दाश्त नहीं कर सकती है। महाकवि कालिदास का अभिज्ञानशाकुंतलम् इसका प्रखर उदाहरण है। हमारी संस्कृति प्रकृति के प्रत्येक तत्व को देवता के समान पूजती है। वृक्षारोपण और वायु दृ जल संरक्षण को प्रकृति का रूप मानकर इसकी अभिवृद्धि में संस्कृत का अमूल्य योगदान है। हमारा कर्तव्य है कि प्रकृति को जेसे का तेसा रहने दे इसमें हस्तक्षेप न करें, नहीं तो अराजकता व अस्थिरता की स्थिति बन सकती है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अध्यात्मविज्ञान

डॉ. हितेन्द्र
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, जैनदर्शन विभाग,
श्री दिगम्बर जैन आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, सांगानेर, जयपुर

भारत एव आध्यात्मिक प्रधान देश है। पूरे विश्व में इसकी पहचान आध्यात्मक से जानी जाती है।

"आत्मनि इति अध्यात्मम्" अर्थात् आत्मा में। विशिष्ट ज्ञानम् इति विज्ञानम्। अर्थात् आत्मा का विज्ञान या कहे आत्मा का विशिष्ट ज्ञान अध्यात्म विज्ञान है। जीवन का मूल रहस्य या सम्पूर्णसार अध्यात्मविज्ञान ही है।

इस जीव के अनादिकाल से जन्ममरण का दुःख चला आ रहा है परन्तु जिस जीव ने इस अध्यात्मविज्ञान के रहस्य को जाना, साक्षात्कार किया अपनी आत्मा में प्रकट किया वो इस दुःख से हमेशा के लिए बाहर निकल कर अनन्तकाल के सुख में निमग्न हो गया।

अध्यात्मविज्ञान है क्या ? तो समझे कि भोगों की वांछा एवं उसकी परिपूर्णता के तरफ भागते रहने से जीव स्वयं के आत्मकल्याण के रहस्य से सदा अनभिज्ञ रहा है।

जब जीव संसार के राग, द्वेष, मोह एवं भोगों के कीचड़ से हटकर मन एवं आत्मा को स्वात्मा की तरफ मोड़कर आत्मकल्याण की भावना पैदा करता है एवं जगतकल्याण की भी भावना उत्पन्न करता है। तब उसका तेज इस अध्यात्म के विशिष्ट ज्ञान से न सिर्फ आत्मा पर अपितु मुख पर भी झलकता है।

कहा भी गया है "इच्छानिरोधास्तपः" इच्छाओं का निरोध ही तप है। अर्थात् इच्छायें ही संसार परिभ्रमण का मूलकारण है और इन इच्छाओं को पूर्ण रूप से जीतना एक अध्यात्मविज्ञानी के द्वारा ही सम्भव है।

आज संसार में हर प्राणी किसी न किसी दुःख व परेशानी से पीड़ित है कोई स्वास्थ्य को लेकर, कोई धन को लेकर, कोई विवाह, कोई सन्तान, कोई सम्पत्ति। इत्यादि किसी ना किसी दुःख से हर प्राणी ग्रस्त है।

जब कोई प्राणी इस राग, द्वेष, मोह व भोगों को छोड़कर ईश्वर द्वारा बताये अध्यात्म मार्ग का अनुसरण करता है त बवह अपने आप ही इन सब दुःखों से मुक्तसा न सिर्फ महसूस करता है अपितु वो अपने आप को ईश्वर के समीप भी अनुभव करने लगता है।

जैनों के भगवान महावीर हो या द्वापरयुग के श्रीकृष्ण या बौद्धो के श्री गौतमबुद्ध इन्होंने स्वयं के अध्यात्म विज्ञान का रहस्य उद्घाटित कर जीवों को कल्याण मार्ग का रास्ता दिखाया। एवं पूर्णसुख क्या है। इसकी सही परिभाषा से प्राणीमात्र को अवगत कराया।

गीता मे श्रीकृष्ण के अध्यात्मविज्ञान का उपदेश न सिर्फ अर्जुन के लिए अपितु कई ऋषिमुनि एव सामान्य जन को भी आत्म रहस्य का भान हुआ।

वर्तमान में भी आज पूरे विश्व में जो अशान्ति, वैमनस्य, हिंसा एवं आपस में प्राणियों के मन की कटुता है। वो अध्यात्म के इस विशिष्ट ज्ञान से ही दूर हो सकती है।

अध्यात्म विज्ञान न सिर्फ लौकि जीवन अपितु ईश्वर को पाने या स्वयं को ईश्वर बनाने का एक सटीक मार्ग है।

हम भी इस मार्ग पर चलकर विश्वकल्याण एवं स्वकल्याण कर सकते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वाल्मिक रामायण में नारी सशक्तिकरण

डॉ.पंकज कुमार सिंह

आदिकवि वाल्मीकि प्रणीत रामायण आदिकाव्य ही नहीं भारतीय संस्कृति का महान् पोषक भी है। एक और तो यह भाषा की दृष्टि से वैदिक एवं लौकिक संस्कृत के बीच कड़ी का कार्य करता है तो दूसरी ओर वैदिक एवं वैदिकोत्तर सभ्यता संस्कृति में भी सामंजस्य स्थापित करता है। रामायण के अध्ययन से अतीतकालीन सभ्यता का ज्ञान तथा वर्तमान सभ्यता का प्रत्यक्ष दर्शन होता है। रामायण में भारतीय सभ्यता संस्कृति के समस्त अंग परिपुष्ट रूप में दिखलायी देते हैं। रामायण की मूलकथा के अन्तस् में नारी ही सन्निविष्ट है। अर्थात् रामायण की समस्त घटनाओं के मूल में नारी ही कारण रूप में दृष्टिगोचर होती है। राम के वनवास में कारण है कैकेयी, राम-रावण युद्ध में कारण है सीता एवं शूर्पणखा। यही नहीं प्रासंगिक इतिवृत्त, यथा वाली - सुग्रीव वृत्तान्त में भी नारी-सुग्रीव् की पत्नी ही कारण है। इस कारण रामकथा को गतिशीलता प्रदान करनेवाली नारी है। इसीलिए रामायण में नारी जीवन के विविध आरोह अवरोहों का सजीव चित्र दिखलायी देता है।

रामायण कथा के आलोक में वाल्मीकि की नारी विषयक धारणाओं का निर्धारण करना यद्यपि अत्यन्त दुरूह व्यापार है, तथापि इस शोधप्रबन्ध में इस विषय पर यथासाध्य विचार करने का प्रयास किया गया है। वाल्मीकि के नारी संबंधी विचारों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम सतीसाध्वी पतिव्रता के संबंध में तथा दूसरा असती एवं दुष्टा नारियों के सन्दर्भ में। आदिकवि सती नारियों के प्रशंसक हैं। इन्होंने आदर्श चरित्रवाली पतिव्रता नारियों की काफी प्रशंसा की है तथा उनके लिए एक भी निन्दापरक शब्द का व्यवहार नहीं किया है। वे नारी को आदर्श भारतीय मर्यादाओं से मण्डित देखना चाहते हैं। अनेक स्थलों पर इन्होंने पति को देवता रूप में मानने का उपदेश स्त्रियों को दिया है। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि आदिकवि की दृष्टि में नारी का पतिव्रता होना अत्यावश्यक है। पतिव्रता नारी ही तेजस्विनी हो सकती है तथा संसार में सम्मान प्राप्त कर सकती है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शिक्षा दर्शन में नैतिक मूल्य

घनश्याम सैन
शिक्षा आचार्य प्रथम वर्ष
जगद्गुरू रामानान्दाचार्य वि.वि. जयपुर

बुनियादी स्वयं सहायताकारी, प्रतिभाशाली एवं परोपकारी मानवकर्म के तथा बुनियादी स्वयं सेवाकारी, मर्यादाशाली एवं सत्यवादी मानवधर्म के आपसी सभ्य मानवीय रिश्तो के मैत्री कव एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों के अनुशासन को नैतिक मूल्य कहते है।

नैतिक मूल्यों का सर्जन कैसे किया जाये...............

हम अपने शब्दों में कह सकते है कि मताधिकार के सिस्टम के तहत देश की शिशु संताने अपनी माँ के गर्म से सिर कव बल उल्टी जन्म लेती है और जन्मजात ही सबसे पहली बार पशुओं का दुध पीती है इसीलिये इन संतानों को उल्टी बात ही आसानी से समझ आती है और इनकी इनष्की नजरों में नैतिक दर्शन एवं नैतिक गुण मूल्य हुआ ही नहीं करते।

देश के उत्तराधिकार सिस्टम के तहत देश की जनता की शिशु संताने अपनी माँ के गर्म से पैरों और जन्मजात ही सबसे पहली बार पशुओं का दूध पीता है इसीलियें इन संतानों को उल्टी बात ही आसानी से समझ आती है और इनकी नजरों में नैतिक गुणमुल्य हुआ ही नहीं करते है। देश कव उत्तराधिकार सिस्टम के तहत देश की जनता की शिशु संतानें अपनी माँ के गर्म पैरों के बल सीधी अवतरित होती है, जो सबसे पहली बार अपनी दर्शन एवं नैतिक गुणमुल्यावान एवं शिशुवान अपनी माँ समान अपने रिश्ते या मैत्री सांस्कृतिक सम्बन्धों की मौसी का मानुष दूध पीकर फिर तब तक अपनी माँ कव आचंल में दुग्ध बन जाने पर उस अमृततुल्य दुग्धपान करती है, ऐसी अनुशासित नैतिक संताने ही ईश्वरीय नेक इंसान व भगवान हुआ करती है जिन्हें सीधी बात आसानी से समझ आती है इनकी नजरों में लोक–कल्याणकारी नैतिक दर्शन एवं नैतिक गुणमुल्य हुआ करते है। इसके पास अपनी व अपने जीवन की प्रमाणित एवं सत्यापित पहचान हुआ करती है इस बात से आशय यह है कि जब इस प्रक्रिया के नैतिक सभ्ये संताने जब निष्कामभाव से अपनी संतति बढ़ाने हेतु अपनी संतानप्राप्ति हेतु परमशक्ति से लोककल्याण भावना से अवाह्न करती है तो जन्म नहीं फिर अवतरण ही होता है क्योंकि संतान लाने में ईश्वरीयगुण संतान पाने का पुकारभाव जो निहित होता है।

इन्हीं संतानों को नैतिक मुल्यों से परिपूर्ण वैज्ञानिक भाषा में उन्नत मानव नस्लें और धार्मिक भाषा में अवतिरत संताने कहते है, जिनका उद्देश्य लोक–कल्याण ही होता है। यह सब अच्छी उत्पति सबका अच्छा विकास एवं सबका अच्छा साथ से ही सम्भव है। हम कह सकते है कि आखिर! ईश्वर ने प्रत्येक मानव को अपने समान नेक इंसान व एक भगवान क्यों बनाया?क्योंकि ईश्वर यह भली–भाति जानता है कि उसका काम सिर्फ मानव ही कर सकता है, इसीलिये ईश्वर प्रत्येक मानव को भूखा तो जगाता है और खिलाकर ही सुलाता है। ईश्वर चाहता तो वह मानव को कुछ और बना सकता था ईश्वर यदि अपनी पूजा अर्चना ही करवाना चाहता तो उसके पास इसकी भी कोई कमी नहीं थी। देश का प्रत्येक व्यक्ति जब अपने ईश्वर की और उन्मुख होता है। तो वह विचार करता है। कि मैं कौन हूँ? मैं कैसे हूँ? मैं कहा हूँ? मैं कब से हूँ? मैं क्यों हूँ? मुझे ईश्वर ने कौन सा काम दिया है? क्या मैं ईश्वर प्रदत्त कार्य कर रहा हूँ यही से अनुशासित लोक–कल्याणकारी नैतिक दर्शन एवं नैतिक गुणमुल्यों के सृजन का अनुसंधान शुभारम्भ होता है।

आचार्य और विद्यार्थी के समबंधों में नैतिक मूल्य :–

आचार्य शब्द बहुत ही व्यापक, विराट और महान है। आचार्य शब्द से आशय है पूर्णमर्यादित समानभाव से सदाचार सिखाने वाला और विद्यार्थी शब्द का आशय है पूर्ण मर्यादित सेवाभाव से विद्या का अर्जन करने वाला इन्हीं महान नैतिक गुणों के होने के कारण ही आचार्य और विद्यार्थी कव सम्बंध सुमथुर हुआ करते थे। अफसोस! समय के साथ–साथ बहुत कुछ बदल गया है हम पश्चात संस्कृति की चकाचौंध में कुछ इस तरह भ्रमित हो चुके है कि हम संस्कार को छोड़ केवल धन कमाने और अपनी जल्दी धनवान बनने की महत्वाकांक्षा को हर कीमत पर पूर्ण करने की अँधी–दौड़ में रात–दिन भागे जा रहे है। इसी अँधीदौड़ ने आज नैतिकता को बहुत पीछे छोड़ दिया है। आज इस दूषित मानसिकता ने आचार्य और विद्यार्थी कव सम्बंधों पर भी ग्रहण लगा रखा है। आज इस आधुनिकाता की चकाचौंध का यह हाल है कि लड़कियों की चोटियाँ गायब हो चुकी है और लड़कव चोटी(पोनीटेल) बनाये हुये, आनंदित हो रहे है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आज कव प्रवक्ता घड़ी से देखकर पढ़ाने और नोटबुक रंगाने की औपचारिकता पूरी कर रहे है और विद्यार्थी नकल भरोसे केवल डिग्री चाहता है, योग्यता और ज्ञान नहीं।

आज आचार्य और विद्यार्थी कव बीच नैतिकमूल्य जैसे– अभिवादन, श्रद्धा, सम्मान, मर्यादित आचरण, उच्च चरित्र, वाणी का संयम, समानता, पारदर्शिता, दया, परोपकार, निस्वार्थ सात्विक आदर प्रेम, आशीर्वाद, उच्च शिक्षा से अदृश्य हो चुके है। आज जब तक शिक्षक अपनी निजि राजनीतिक विचारधारा छोड़ अपने विद्यार्थी को निष्पक्ष और पारदर्शी रूप से एक सम्मान आत्मिक भाव से निस्वार्थ रूप से मर्यादित आचरण से पूरे मन से बिना बार–बार घड़ी देखे, उदासीनता त्याग कर अपने सभी विद्यार्थियों को समभाव से शिक्षा का शांत माहौल तैयार नहीं करता तथा सहजता से सद्ज्ञान देकर उन्हें शोध की ओर प्रेरित नहीं करता तब तक वह सामने बैठ विद्यार्थियों के मन अपने लिए सम्मान की उम्मीद नहीं कर सकता क्योंकि आज कव माहौल में शिक्षा की ध्वस्त व्यवस्था को सुधारने के लिये पहल शिक्षकों को ही करनी होगी। फिर, जब विद्यार्थी भी शिक्षकों की भांति ही आचरण करने को बाध्य नहीं बल्कि सहजरूप से तैयार होगें। बहुत दुख की बात है कि बदलते समय ने शिक्षारूपी विशाल और दिव्य वृक्ष की जड़ें ही हिला दी है। जब आज सुनने और देखने को मिलता है कि आज के कलयुगी गुरू अपनी शिष्याओं से प्रेम तथा बलात्कार तक कर रहे है। आज सबसे ज्यादा गिरावट आचार्य और विद्यार्थी कव सम्बंधों में आयी है।आज विद्यार्थी का भरोसा अपने कुछ कलयुगी शिक्षक के ऊपर से पूरी तरह उठ चुका है और छात्र उन्हें बीच बाजार पीटने पर आमादा है। आज शिक्षक अपनी स्वंय अपनी पद की गरिमाभूत अमर्यादित आचरण कर रहे हैं वह पान गुटखा खाकर स्वंय कॉलेजों की दीवारें रंग रहा है और अपने कुछ टयूशन यानि कोचिंग की दुकान खोलकर उसमें पढ़ने वाले छात्रों को प्रायोगिक परीक्षा में अच्छे नम्बर का लालच देकर उनसे मनमानी फीस वसूल रहा है। इसी प्रेक्टिकल में अंक बढ़त के खेल में वह अपनी शिष्याओं को भी लालच देकर अथवा डरा–धमकाकर और गुमराह करके उसका यौनशोषण कर रहा है। इसी मर्यादाहीनता का दुष्परिणाम यह हुआ कि छात्र रिश्वत देकर अंक बढ़वाने पर आमादा है और कुछ शिष्यायें उन्हें पीटने पर तथा कुछ आत्महत्या पर आमादा है तथा गरीब छात्र जो कोचिंग की फीस देने में असमर्थ है वह उचित शिक्षा ना मिल पाने पर खींज उठते है फिर गुट बनाकर अपना विद्रोह दिखाने पर नेता बनने पर आमादा है। आज स्थिति यह है कि शिक्षक और विद्यार्थी कव आपसी आदर प्रेमरूप संस्कारों की माला टूट कर बिखर चुकी है। जिसे केवल नैतिकमूल्यों और सभ्य और स्वस्थय दार्शनिक विचारधारा से ही जोड़ा या पुनर्जीवित किया जा सकता है। आज ग्रामीण और शहरी दोनो में आचार्य और विधार्थी के समबन्धो की मर्यादित गहराई का रूप अनैतिकता की खाई ने ले लिया है जिसें बिना नैतिक मूल्यो की पुर्नस्थापना किये पार पाना सम्भंव नहीं है । सभी के स्वस्थ सुन्दर और सुदृड विकाश हेतु यह प्रयास शिक्षक और विधार्थी को स्वयं ही करने होंगें उन्हें समझाना होगा कि वह कॉलेज में सहपाठियों या शिक्षकों के प्रेम जाल में फस कर अपना और कॉलेज का नाम खराब करने व चरित्र हनन तथा समय और धन की बर्बादी करने आये है या अपने शिक्षकों से कुछ सीख कर अपने ज्ञान और स्वयं के शोद द्वारा विश्व शान्ति और विश्व सेवा में अस्वीकार करने आयें है । आविष्कारों को सहेज ने के लिये नवीन सुरक्षा साधन बना कर अपना और अपने कॉलेजों, गुरूओं, और राष्ट्र के नाम का परचम पुरे विश्व में फैला कर एक नई पहचान दिलाने आये है । उपरोक्त विवरण के सार स्वरूप यह कह सकते है कि जो कुछ बुरा व अच्छा है । वह सम्बन्धित सिस्टम का प्रभाव हैं ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कारकों में कर्मप्रवचनीय

डॉ0 गुंजन गर्ग
सहायक आचार्य, संस्कृत
राजकीय महाविद्यालय,
जिला गंगापुर सिटी

संस्कृत भाषा को जीवन प्रदान करने वाले आचार्य पाणिनि और उनकी अष्टाध्यायी विशिष्ट है, जो अपने पूर्वापर्य के माध्यम से संस्कृतज्ञों को आश्चर्यचकित कर देती है। संस्कृत भाषा की आधारभूता इस अष्टाध्यायी के प्रथम अध्याय के चतुर्थ पाद में कारकविषयकसूत्र तथा द्वितीय अध्याय के तृतीय पाद में विभक्ति विषयक सूत्रों का विवेचन मिलता है।

यही पर कर्मप्रवचनीय (अष्टा 1॰4॰83) के अधिकार के 15 सूत्रों का (1॰4॰84 दृ 1॰4॰98) का ग्रहण होता है। जिसमें लक्षण (हेतुभूत), तृतीयार्थ, हीन, लक्षण (ज्ञापक), इत्थंभूताख्यान, भाग, वीप्सा, अधिकता, हीनता, आनर्थक्य, वर्जन, मर्यादा वचन, प्रतिनिधि, प्रतिदान, ईश्वर, अधिकार, पूजा, अतिक्रमण, पदार्थ, संभावन, अन्वसर्ग, गर्हा, समुच्चय आदि अर्थो में अनु, उप, अप, परि, आङ्, प्रति, अभि, अधि, सु, अति तथा अपि इन एकादश कर्मप्रवचनीयसंज्ञकों का ग्रहण होता है। इनके योग में द्वितीया, पंचमी एवं सप्तमी विभक्ति की प्राप्ति होती है। प्रादियों में यह अनु आदि एकादश जब क्रिया की द्योतकता छोड़कर विभक्ति से अवगत सम्बन्ध को विशेष अर्थ में व्यवस्थापित करते हैं, तब उपसर्ग न कहलाकर कर्मप्रवचनीय कहलाते हैं।

संस्कृत साहित्य में कर्मप्रवचनीय संज्ञक पदों के योग में सूत्रोक्त विभक्ति का प्रयोग कम ही देखने को मिलते है। संस्कृत व्याकरणजगत् में भी कर्मप्रवचनीय संज्ञा पर परम्परागत व्याख्या एवं प्रयोगों के अतिरिक्त अन्य कोई विमर्श या कार्य देखने को नहीं मिलता। यही कारण है कि संस्कृत साहित्य में इनके प्रयोगों का जानना व समझना जटिल प्रतीत होता है। संस्कृत साहित्य में इनके प्रयोगों को जानने एवं समझने का प्रयास इस शोध पत्र में किया जा रहा है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वैदिककालीन शिक्षा व्यवस्था की वर्तमान प्रासंगिकता

डॉ. माताप्रसाद शर्मा
अध्यक्ष, शिक्षा संकाय
शिक्षा विभाग,जरारासंविवि.,जयपुर

वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था भारतीय शिक्षा व्यवस्था की एक ऐसी महत्वपूर्ण कड़ी है ,जिसने भारत के जनमानस को सामाजिक व्यवस्था बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है । वस्तुतः यदि हम शिक्षा को विश्लेषित करें तो शिक्षा मानव व समाज के सर्वांगीण विकास की एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से मानव अपना जीवन जिने के लिये समर्थ होता है । प्राचीन काल की जो शिक्षा व्यवस्था थी उसमें छात्र चाहे राजपुत्र हो या जनपुत्र हो उसे गुरूकुल जाकर पढना पड़ता था । इस सम्बन्ध में गोस्वामी तुलसी दास जी द्वारा रचित रामचरित मानस में गोस्वामी जी ने कहा है कि –

" गुरू गृह पढन गये रघुराई , अल्पकाल विद्या सब पाई ।।

इसका तात्पर्य है कि छात्र गुरूकुल में समर्पित भाव से रहकर अल्पकाल में ही बहुत सी विद्याओं का अर्जन कर सकता है । श्रीमद भगवद्गीता में भी उल्लिखित है कि –

" श्रद्धावान लभते ज्ञानम् "

श्रद्धावान यदि छात्र है तो उसे ज्ञान की प्राप्ति जल्द ही होना निश्चित है। परन्तु आज की शिक्षा व्यवस्था में बहुत सी विषमताओं के कारण छात्र विद्या प्राप्त नहीं कर पाता है। आज आवश्यकता है छात्रों में संस्कार युक्त शिक्षा की जिससे छात्रों में गुरू के प्रति श्रद्धा भाव की जागृति होगी फिर छात्र सम्यक रूप से अनेक विद्याओं का अर्जन कर सकेगें।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नारी सशक्तिकरण एक लोकादर्श
(डॉ. बनमाली बिश्वाल के संस्कृत गद्य काव्यों के सन्दर्भ में)

डॉ. भूपेन्द्र कुमार राठौरः
प्रोजेक्ट फैलो. शोधछात्रः

प्रो. बनमाली बि वाल का तो सम्पूर्ण रचनाधर्म लोकचेतना परक है। उन्होंने इस लोक जीवन की भाक्ति को पहचाना तथा अपनी रचनाओं में लोकचेतना की अधिकाधिक अभिव्यक्ति की। डॉ. बनमाली बि वाल की **बुभुक्षा, जीजिविशा, नीरवस्वनः** कथासंग्रहों में जीवन की कटु यथार्थता के दृश्य दिखायी देते है। समाज में व्याप्त अनेकानेक समस्याओं की ओर ध्यान आकर्शित करते हुए डॉ. बि वाल ने भोशण, अत्याचार, आतङ्कवाद, स्वार्थपरता आदि के विरोध में विद्रोह के स्वर प्रमुखता से लेखनीबद्ध किये है। भारतीय संस्कृति की जीवन्त परम्परा में समर्पित पत्नी व वात्सलयमयी मां के रूप में नारी की भूमिका सर्वोपरि रही है। **माता भूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः** का जयघोष हमारी संस्कृति की धरोहर है। परन्तु आधुनिककाल में धीरे–धीरे समाज में नारी की दशा दयनीय व शोचनीय हो गयी। जातिप्रथा की कठोरता, सामन्ती राजव्यवस्था व विदेशी आक्रमणों के कारण नारी स्वतन्त्रता सीमित हो गयी। **'ना स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति'** जैसे वाक्य नारी की पराधीनता के द्योतक है। मानवीय आधार पर नर–नारी समान है स्वस्थ व सन्तुलित समाज की रचना के लिए दोनों का समान होना आवश्यक है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Image Processing

कुलदीप तिवाडी
कम्प्युटर प्रोग्रामर
ज.रा.रा.सं.वि.वि

"एक इमेज का प्रभाव हजारों शब्दों के बराबर होता है"

इमेज क्या है–

चित्रों को कम्प्यूटर विज्ञान की भाषा में पिक्चर/इमेज कहा जाता है।

इमेज प्रोसेसिगं क्या है–

इमेज प्रोसेसिंग का अर्थ इन चित्रों पर किये जाने वाले विभिन्न प्रभावों से लिया जाता है जिसमें डेटा का इनपुट एक इमेज के रूप में होता है तथा उसकी प्रोसेसिग के बाद उसका आउटपुट भी इमेज ही होता है तथा इसके मध्य में होने वाले विभिन्न क्रिया–कलाप जो कम्प्यूटर के माध्यम से इन इमेज पर किये जाते है जिससे इमेज को बेहतर बनाया जा सके, उसके प्रस्तुतीकरण को प्रभावी बनाया जा सके, उससे प्राप्त होने वाली जानकारी को अधिक सटीकता से पहचाना जा सके तथा उसका अधिक प्रभावी उपयोग किया जा सके को ही इमेज प्रोसेसिग के अन्तर्गत स्थान दिया जाता है।

जैसा क़ी हम जानते है कि किसी भी घटना के प्रभाव को अथवा जानकारी को प्रभावी रुप से प्रस्तुत करने का सबसे सशक्त माध्यम होता है चित्र।

इमेज प्रोसेसिगं के प्रमुख चरण –

1. इमेज को स्कैन करना
2. इमेज का स्टोर करना
3. इमेज में सुधार हेतु उसे उसके आकार को बढ़ना। Enhance करना
4. इमेज की व्याख्या करना। Interpretaion करना

इमेज प्रोसेसिंग के प्रकार –

एनालॉग – इमेज को इमेज के रूप में ही उपयोग में करना।

डिजिटल – कम्प्यूटर में विभिन्न एलगोलिथम का उपयोग कर इमेज को डिजिटल (बाईनेरी) रूप में उपयोग में करना।

इमेज प्रोसेसिंग का भविष्य –

वर्तमान में इमेज प्रोसेसिंग का विस्तृत क्षेत्र है, जो रोजगार की सम्भावनाओं से भरा है, इसके साथ ही कम्प्यूटर कृत्रिम बुद्धिमता एवं रोबोस्टिक के क्षेत्र में भी इसका उपयोग बहुतायत रूप में किया जा रहा है जिससे इसकी अपार क्षमताओं का बोध होता है। आने वाली नवीन पीढी हेतु इमेज प्रोसेसिंग के माध्यम से साईबर सिक्योरिटी एवं सामान्य सुरक्षा इत्यादि हेतु भी इसके विस्तृत उपयोग की सम्भावना है। विश्व में ही नहीं वरन् भारत में भी यह क्षेत्र तीव्र गति से बढ रहा है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ललित कलाओं के आदि प्रधारक : वैदिक यज्ञ

डॉ. अनिता खुराना
सह आचार्य–संस्कृत
स.पृ.चौ. राजकीय महा., अजमेर

वैदिक साहित्य में वेद और यज्ञ का सम्बन्ध मुख्य रूप से शरीर एवं प्राण की भाँति है। वेद देहरूप है तो यज्ञ उसका प्राण। वेदों में यज्ञ को केन्द्र रूप में मानकर इसका सर्वाधिक्य प्रकट किया गया है। "यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म" सहस्राब्दियों से चली आ रही शतपथ ब्राह्मण की यह सूक्ति यज्ञ संस्कृति का वैशिष्य दर्शाती है।

ललित कला में काव्य, संगीत तथा चित्रकला का समावेश होता है। ललित कलाओं के आदि प्रधारक वैदिक यज्ञ हैं। यज्ञ में ललित कलाओं का पूर्ण रूप से समावेश है। यज्ञों में काव्य, संगीत, चित्रण और सजावट का पूर्ण प्रबन्ध होता है। इससे मनुष्य का हृदय प्रफुल्लित होता है।

मनोरंजन का सबसे उत्तम साधन **संगीत** है। यज्ञों में साम गायन के लिये उद्‌गाताओं की नियुक्ति होती है जो सदैव वीणा द्वारा सामगायन किया करते हैं जिससे अलौकिक आनन्द प्राप्त होता है। संगीत के आदि ललित कला का दूसरा मनमोहक विषय **काव्य** है। वेद स्वयं काव्य रूप है। वेदों की सी छायामयी और भावमयी कविता, वीणा के साथ ताल, स्वर और अनेक प्रकार की तानों के साथ गाई जाने वाली इतनी उत्कृष्ट कविता के श्रवण सुख का आनन्द बिना सुने कैसे वर्णित किया जा सकता है?ललित कला की तीसरी महान् वस्तु **चित्रकला** है। गृह प्रवेश और महादेवों की प्रतिष्ठा के समय अनेक रंग के अन्नों से यज्ञवेदियाँ चित्रित की जाती थीं। यज्ञों में अनेक पक्षियों की शक्ल के कुण्ड, ध्वजा, पताका, तोरण और बन्दनवारों से यज्ञवेदी, मण्डप, यज्ञप्रदेश को दिव्य, चित्ताकर्षक और मोहक बनाया जाता था जिससे आँखों को पूर्ण तृप्ति मिलती थी।

इस प्रकार यज्ञ में मनुष्य की पाँचों इन्द्रियों की तृप्ति होती थी। संगीत से कान, चित्रकला और सजावट से नेत्र, हवन की सुगन्धि से नासिका, नाना प्रकार के हविष्यान्न, मधुपर्क, फलों के पुरोडाश (भोजन) से जिह्वा, सायं–प्रातः आग्नेय हवन की गर्मी से त्वचा को तृप्ति होती थी।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

योग विज्ञानम्

जितेन्द्र शर्मा
(शोध छात्र–ज्योतिष)

योग एक गुढ़ एवं जटिल शब्द है, इसका व्यवहार बहुत ही व्यापक अर्थ में किया जाता है और इसका क्षेत्र भी बहुत विस्तृत है, योग शब्द पर विचार करने पर यह तथ्य सामने आता है कि योग शब्द संस्कृत के **"युज धातु"** से बना है, जिसका अर्थ कि जोड़ना। किसी वस्तु से अपने को जोड़ना अपना किसी कार्य में लगाना योग का उद्‌गम सृष्टि के आरम्भ से पृथ्वी पर जन्म लेने के साथ ही मनुष्य ने जीवन में दुःख का अनुभव करके उससे बचने का प्रयास किया।

विश्व के प्राचीनतम साहित्य वेद में सर्वप्रथम योग का संकेत मिलता है, वेद का मुख्य प्रतिपाध विषय ब्रह्मज्ञान था, जिसका उद्‌देश्य चित्त शुद्धि के फलस्वरूप व्यक्ति विशेष में ज्ञान ग्रहण करने की योग्यता उत्पन्न करके उसे कर्मकाण्ड से हटाकर परमात्मा में स्थित करना था।

योग अध्ययन का उद्‌देश्य योग जीवन जीने की कला है। साधना विज्ञान है, मानव जीवन में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी साधना व सिद्धांतों में ज्ञान का महत्व दिया है। इसके द्वारा आध्यात्मिक और भौतिक विकास संभव है। योग अध्ययन का मुख्य उद्‌देश्य ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करना है, जिनका भावनात्मक स्तर दिव्य मान्यताओं से दिव्य आकांक्षाओं से दिव्य योजनाओं से उगमता रहे। योग के द्वारा शारीरिक, मानसिक ओर आध्यात्मिक शक्ति का विकास होता है, शरीर सुदृढ़ मन स्वस्थ व आत्मा स्वच्छ होती है।

सुबह योग का नियमित अभ्यास से हमें अनगिनम शारीरिक और मानसिक बीमारियों से बचाने का कार्य करता है। योग के विभिन्न आसन मानसिक और शारीरिक मजबूती के साथ ही अच्छाई की भावना का निर्माण करते हैं। आज पूरे विश्व में 21 जून के रूप में विश्व योग दिवस के रूप में बनाया जाता है, ताकि पूरे विश्व में शान्ति और स्वस्थ जीवन का आनन्द ले सके।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्राचीन एवं आधुनिक शिक्षा में नवाचार

सुमन भैरवाल
शोधार्थी छात्रा
संस्कृत विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

भूमिका

नवाचारों को परिभाषित करे तो कह सकते है कि नये को लाकर स्थापित में परिवर्तन लाने की प्रक्रिया ही नवाचार है। शाब्दिक रूप से नवाचार को आंग्ल भाषा और लैटिन से उद्भूत अर्थो में समझते है।

In-no-vate-v-To being to something new : Innovative

In-no-va-tion-n The act of innovating something that is new or unusual.

नवाचार के सम्बन्ध में जिन अन्य शब्दों का प्रयोग किया जाता है उनमें प्रमुख है परिवर्तन, विकास, नवीनता एवं उन्नयन। उपर्युक्त सभी शब्द पूर्व की स्थिति में परिवर्तन के परिणाम को प्रदर्शित करते है। परिवर्तन तो शाश्वत है उसके परिणाम स्वरूप विकास होता है नवीनता प्राचीन स्थिति में परिवर्तन की सूचक है तथा उन्नयन गुणात्मक परिवर्तन को प्रदर्शित करता है। अतः सामान्य निष्कर्ष और अर्थ यही प्राप्त होता है कि नवाचारों के लागू होने से पूर्व की स्थिति एवं इनके लागू होने के बाद की स्थिति में गुणवत्ता पर प्रभाव प्राप्त होना आवश्यक है वर्तमान समय में देखा जाये तो सामाजिक एवं तकनीकी परिवर्तन लाने में नवाचारों की महत्वपूर्ण भूमिका है। साथ ही नवाचारों के परिणाम स्वरूप सांस्कृतिक परिदृश्य भी बदलता दिखाई दे रहा है। जिसमें विभिन्न विषयों के परिप्रेक्ष्य में "संस्कृत ज्ञान विज्ञानस्यवैश्विकचिन्तनम् के विभिन्न उपविषयों द्वारा शोध चर्चाओं के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है जिस पर विभिन्न शोध–पत्र प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया है इसी क्रम में मैं 'प्राचीन एवं आधुनिक शिक्षा में नवाचार' विषय पर अपना शोध–पत्र प्रस्तुत करना चाहती हूँ क्योंकि मेरा शोध विषय भी यही हैं जिसके लिए में शोध पत्र सारांश प्रस्तुत कर रही हूँ।

<u>शोध–पत्र परिचय</u>

भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति में औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रकार के शैक्षणिक केन्द्रों का उल्लेख मिलता हैं। औपचारिक शिक्षा जो हैं मन्दिर आश्रमों और गुरूकुलों के माध्यम से दी जाती थी ! ये ही प्राचीन समय में उच्च शिक्षा के केन्द्र थे ! जबकि देखा जाये तो परिवार,पुरोहित,पण्डित, संयासी और त्यौहार प्रसंग आदि के माध्यम से अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त होती थी ! विभिन्न धर्मसूत्रों में इस बात का उल्लेख है कि माता ही बच्चे की श्रेष्ठ गुरू है ! कुछ विद्वानों ने पिता को शिक्षक के रूप में स्वीकार किया हैं। जैसे–जैसे सामाजिक विकास हुआ वैसे वैसे शैक्षणिक संस्थाए स्थापित होने लगी। वैदिक काल में परिषद् शाखा और चरण जैसे संघो की स्थापना हो गयी ! लेकिन व्यवस्थित रूप में देखा जाये तो शिक्षण संस्थाए सार्वजनिक स्तर पर बोद्धों द्वारा प्रारम्भ की गई। गुरूकुलों की व्यवस्था की गई ! विद्वानों को आमंत्रित करके दान में भूमि देकर तथा जीविका निश्चित करके उन्हे बसा लेते थे उनके बसने से वहां एक नया गांव बन जाता था इन गांवो को अग्रहार कहा जाता था। इसके अतिरिक्त विभिन्न हिन्दू सम्प्रदायों एवं मठो को स्थापना की गई जो शिक्षा के महत्वपूर्ण केन्द्र बन गये! स्त्रियों को शिक्षा देन के लिए पाठशालाओं की व्यवस्था की गई ! प्रागैतिहासिक काल में साहित्यिक तथा व्यावसायिक हर प्रकार की शिक्षा व्यवस्था परिवार में ही होती थी। धीरे–धीरे विद्या के भण्डार में प्रचुर वृद्धि हो जाने से विशेषाध्ययन की ओर लोगों की रूचि बढने लगी और आधुनिक समय में विद्या प्राप्त करने के नये–नये

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

माध्यम बन गये ! आधुनिक समय में सामाजिक एवं तकनीकी में परिवर्तन लाने में नवाचारों की महत्वपूर्ण भूमिका बन गयी साथ ही नवाचारों के परिणाम स्वरूप सांस्कृतिक परिदृश्य भी बदलता दिखाई दे रहा है हमारे सामने चुनौती है कि किस प्रकार नवाचारों को वांछित सामाजिक सांस्कृति एवं तकनीकी परिवर्तन लाने वाले अभिकरण के रूप में प्रयोग किया जाये! भूमण्डलीकरण के युग में सम्पूर्ण विश्व के साथ प्रगति की और गतिशील रहने के लिए नवाचारो को ग्रहण करना आज अनिवार्य हो गया है।

शिक्षा में नवाचार

अभिभावक सम्प्रेषण में तकनीकी का प्रयोग, शिक्षा को सहज बनाना, इन्टरनेट एवं सामाजिक अन्तः क्रिया शिक्षक शिक्षक सम्प्रेषण के लिए डिजिटल पुस्तकालय नवाचार शिक्षण में मोबाइल सीखना, शिक्षको का व्यावसायिक विकास करने में ऑन–लाइन–परीक्षाऐं, भविष्य के विद्यालय !

नवाचारों को लाने में शिक्षा की भूमिका

यदि इस प्रश्न का उत्तर खोजा जाये कि क्या शिक्षा नवाचार लाने का माध्यम है ? तो हम सरलता से पता लगेगा कि एक मात्र शिक्षा ही नवाचारों को लाने की प्रक्रिया का प्रारम्भ हैं। नवाचार के साथ परिवर्तन, विकास, नवीनता एवं उन्नयन जैसे शब्दों को भी प्रयोग में लाया जाता है। नये को लागू कर स्थापित में परिवर्तन लाना ही नवाचार है। आधुनिक युग में शिक्षा को अधिक प्रभावोत्पादक एवं गुणवत्तापूर्ण स्वरूप प्रदान करने हेतु नित अभिनव प्रयोग हो रहे है। हमारी परंपरागत शिक्षा प्रणाली में अलग नई विधियों, नई कार्यपद्धतियों एवं नई तकनीक द्वारा अधिकाधिक फलदायी एवं परिवर्तित रूप में प्रस्तुत करने के लिए जिन नई गतिविधियों या क्रियाकलापों का समावेश किया जाता है उनमें नवाचार विशेष एवं महती भूमिका है। टायटेन के अनुसार " शैक्षिक नवाचारों का उद्भव स्वयं नही होता बल्कि उन्हें खोजना पड़ता है तथा सुनियोजित तरीके से इन्हें प्रयोग में लाना होता है ताकि शैक्षिक कार्यक्रमों को परिवर्तित परिवेश मेंगति मिल सके और परिवर्तन के साथ गहरा तारतम्य बनाए रख सकें। इस प्रकार नवाचार एक नवीन विचार है एक व्यवहार है अथवा वस्तु या कोई नया तरीका है जो नवीन और वर्तमान का गुणात्मक स्वरूप है।

शोध पत्र प्रासंगिकता

विभिन्न विषयो के आधार पर 'प्राचीन एवं आधुनिक शिक्षा में नवाचार "का विवेचन करना आवश्यक हैं आज हर क्षेत्र में नवाचार व्यवस्था देखने को मिलती है। आज शिक्षा के क्षेत्र में देखा जाये तो नवाचारों का प्रभाव झलकता है। यह विवेचन मेरे शोध कार्य के लिए उपयोगी सिद्ध होता है।

निष्कर्ष

अंत में संक्षिप्त रूप में यह कहा जा सकता है कि वर्तमान शिक्षा में नवाचार की भूमिका सर्वोपरि है। शिक्षण पाठ्यक्रम और शिक्षक शिक्षा के साथ अभिनव होना चाहिये। कक्षाओं की वास्तविक अधिगम परिस्थिति में नवाचार के प्रतिमानों का समावेश अधिकाय को त्वरा दे सकेगा। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर जगदगुरू रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय : जयपुरम् में " संस्कृत ज्ञान विज्ञानस्य वैश्विक चिन्तनम्" विषय पर कार्य अत्यंत सराहनीय है साथ ही शोधार्थीयों तथा विद्यार्थियों के लिए यह अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगा ! मैं शोधपत्र द्वारा अपना योगदान इस संगोष्ठी में देना चाहती हूँ। मुझे आशा है मेरा शोध पत्र अवश्य स्वीकार किया जायेगा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

गीता से हमारी आवश्यकता और मांग श्रीअरविन्द के विशेष संदर्भ में

डॉ. चेतना कुमावत
सहायक आचार्य (वाणिज्य)
मा.ला.वर्मा राजकीय महाविद्यालय, भीलवाड़ा

संसार में कितने ही सद्ग्रंथ हैं, वैदिक और अलौकिक भी, कितने ही आगम–निगम और स्मृति–पुराण हैं, कितने ही धर्म और दर्शन शास्त्र हैं, कितने ही मत, पंथ और संप्रदाय हैं। अधकचरे ज्ञानी अथवा सर्वथा अज्ञानी मनुष्यों के विविध मन इन सब में ऐसी अनन्य–बुद्धि और आवेश–से अपने–आपको बांधे हुए हैं कि जो कोई जिस ग्रंथ या मत को मानता है उसी को सब कुछ जानता है, यह देख भी नहीं पाता कि उसके परे और भी कुछ है। वह अपने चित्त में ऐसा हठ पकड़े रहता है कि बस यहीं या वही ग्रंथ भगवान का सनातन वचन है और बाकी सब ग्रंथ या तो केवल ढोंग हैं या यदि उनमें कहीं कोई भगवत्प्रेरणा या भाव है तो वह अधूरा है, और इसी तरह से ऐसा हठ कि हमारा अमुख दर्शन ही बुद्धि की पराकाष्ठा है– बाकी सब दर्शन या तो केवल भ्रम हैं अथवा उनमें यदि कहीं आंशिक सत्य है भी तो उतना ही है जो उनके एकमात्र सच्चे दार्शनिक संप्रदाय के अनुकूल है। भौतिक विज्ञान के आविष्कारों का भी एक संप्रदाय–सा बन गया है और उसके नाम पर धर्म और अध्यात्म को अज्ञान और अंधविश्वास तथा दर्शन–शास्त्र को कूडा–करकट और ख्याली पुलाव कहकर उड़ा दिया गया है। और, बड़े मजे की बात तो यह है कि बड़े–बड़े बुद्धिमान लोग भी प्रायः इन पक्षपातपूर्ण आग्रहों और व्यर्थ के झगड़ों में पड़कर इन्हें पुष्टि देते रहे हैं, कोई तमोभाव ही उनके निर्मल सात्त्विक ज्ञान के प्रकाश में मिलकर, उसे बौद्धिक अहंकार या आध्यात्मिक अभिमान से ढककर उन्हें इस प्रकार भटकाता रहा है।

अब अवश्य ही मनुष्य–जाति पहले की अपेक्षा कुछ अधिक विनयशील और समझदार होती हुई दीख पड़ती है; अब हम लोग अपने भाईयों को ईश्वरीय सत्य के नाम पर कत्ल नहीं करते, न इसलिये मार ही डालते हैं कि उनके अंतःकरणों की शिक्षा–दीक्षा हम लोगों की शिक्षा–दीक्षा से भिन्न है या उन अंतःकरणों का सांचा–ढांचा कुछ और ही प्रकार का है, अब हम लोग अपने पड़ोसियों को, अपनी राय से भिन्न राय रखने की हिमाक़त या जुर्रत करने पर, कोसते या भला–बुरा कहते कुछ सकुचाते हैं, अब तो हम लोग यह भी स्वीकार करने लगे हैं कि सत्य सर्वत्र है, केवल हम ही उसके ठेकेदार नहीं, अब हम दूसरे धर्मों और दर्शनों को भी देखने लगे हैं इसलिये नहीं कि उन्हें के झूठा साबित करके बदनाम करें, बल्कि इसलिये कि देखें उनमें कहाँ क्या सदुपदेश हैं और उससे हमें क्या सहायता मिल सकती है। परंतु फिर भी हमें यह कहने का अभ्यास अभी तक बना हुआ है कि हम जिसे सत्य कहते और मानते हैं वही वह परम ज्ञान है जो अन्य धर्मों या दर्शनों को नहीं मिला और यदि मिला भी है तो अंशमात्र अधूरे तौर पर, अर्थात उनमें सत्य केवल उन गौण और निम्नतर अंगों का ही निरूपण है जो कम विकसित लोगों के लिये ही उपयोगी हैं या उन्हें हमारी ऊंचाईयों तक उठाने कि लिये निम्न साधनमात्र हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भारतीय मनोविज्ञान में अध्ययन : भूत और भविष्य

डॉ. जया शर्मा
जयपुर

आधुनिक काल में भारतीय मनोविज्ञान में दो भिन्न दृष्टिकोणों से अध्ययन किये गये हैं – ऐतिहासिक और समस्यात्मक। एक ओर वेद, उपनिषद्, भगवद्गीता, महाभारत ,सांख्य योग, न्याय वैशेषिक ,मीमांसा, वेदान्त इत्यादि आस्तिक सम्प्रदायों और जैन,बौद्ध तथा चार्वाक इत्यादि नास्तिक सम्प्रदायों के मनोवैज्ञानिक विचारों का अध्ययन किया गया हैं । इन अध्ययनों से विशाल मनोवैज्ञानिक तथ्य प्रकाश में आये हैं। दूसरी ओर प्रत्यक्षीकरण, भ्रांति ,व्यक्तित्व , मन और आत्मा इत्यादि मनोवैज्ञानिक समस्याओं के अध्ययन किये गये हैं। किंतु भारतीय मनोविज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान करने का एक दृष्टिकोण अभी अछूता ही है । यह प्राचीन भारतीय साहित्य में उपलब्ध मनोविज्ञान की विभिन्न शाखाओं के विषय में मनोवैज्ञानिक जानकारी का अध्ययन है । इस प्रकार का अध्ययन अन्य दोनों प्रकार के अध्ययनों से भी अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध होगा। असामान्य मनोविज्ञान, मनोचिकित्सा और गहराई का मनोविज्ञान के विषय में प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में महत्वपूर्ण ज्ञान भरा पडा है। भारतीय विचारकों ने मानसिक ग्रन्थियों,चिन्ता,आधातिक अनुभवों तथा स्नायविक रोगों के विषय में महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किये हैं। भारतीय मनोविज्ञान में अनुसंधान का एक अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र शिक्षा मनोविज्ञान है। प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित थी। इसी प्रकार प्रेरणा के मनोविज्ञान में भारतीय विचारकों की गहरी अन्तर्दृष्टि रही है । कुछ समकालीन भारतीय विचारकों ने मानव मनोविज्ञान के विषय में भी महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किये हैं । हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में मीराबाई ,तुलसीदास, सूरदास इत्यादि महाकवियों के मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन महत्वपूर्ण सिद्ध होंगे । निष्कर्षतः भारत में मनोविज्ञान के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिये भारत में पाश्चात्य मनोविज्ञान और भारतीय मनोविज्ञान दोनों ही दिशाओं में महत्वपूर्ण अनुसंधान किये जाने चाहिये।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ज्योतिष शास्त्रों में शैक्षिक विचार

सुरेन्द्र कुमार शर्मा
शिक्षा आचार्य,शोध छात्र

ज्योतिषशास्त्र में शैक्षिक क्षेत्र मे सदा से सदैव ही विचारणीय रहा है। भारतीय ज्योतिष के सिद्धान्त के अनुसार मानव जीवन और ज्योतिष बाहय ब्यक्तित्व भारतीय ज्योतिष का रहस्य,प्रश्न,विचार,रोगी के अस्वस्थ्य होने का विचार एवं कुण्डली के माध्यम से जातक के या विद्यार्थी के शैक्षणिक अर्थात् शिक्षा के क्षेत्र पर विचार किया जाता है। जातक के जन्मांग चक्र के माध्यम से पंचम भाव जिसे ज्योतिष शास्त्र में कुण्डली का पॉचवा भाव या फिर अध्ययन क्षेत्र भी कहा जाता है।यदि किसी जातक के पंचम भाव में सूर्य स्वराशीगत हो या मित्र राशि में हो तो वह जातक तकनीकी विषय का अध्ययन करता है। जैसे इन्जिनियरिंग या कोई भी कम्प्यूटर सम्बन्धित । यदि किसी जातक के पंचम भाव में कोई ग्रह नीच राशि में स्थित होने के कारण जातक के अध्ययन क्षेत्र को बाधित करता है एवं अध्ययन क्षेत्र से शुभफल की प्राप्ति जातक को नहीं मिल पाती है। आज हम देखते है कि जिन व्यवसाय पदों को प्राप्त करके भी हम छोड देते हैं या अन्य किसी व्यवसाय से जुड जाते हैं अथवा अनेक व्यवसाय एक साथ करने लग जाते हैं इसका मुख्य कारण है जातक की कुण्डली में ग्रहों की स्थिति होती है। एक सभ्य,सुसंस्कृत एवं जिम्मेदार नागरिक बनाने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। कोई व्यक्ति कितनी शिक्षा प्राप्त करेगा या उसका पढाई के प्रति क्या रूझान है। यह जन्मांग चक्र के माध्यम से जाना जा सकता है।अधिकांश माता–पिता या अभिभावक एवं विद्यार्थीयों को यही चिन्ता रहती है कि क्या पढा जाये जिससे कि अच्छा भविष्य निर्मित हो सके। आज के युग को देखते हुऐ ज्योतिष के माध्यम से शिक्षा का चयन उपयोगी हो सकता है। इस युग में शिक्षा का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत हो गया है और बदलते हुऐ जीवन मूल्यों के साथ–साथ शिक्षा के उद्देश्य भी बदल गये है। उनके लिये व्यवसायिक भविष्य को उज्जवल बनाने की दृष्टि से विषय का चयन करना अत्यन्त कठिन हो गया है। इसके अलावा शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश प्राप्त करने के लिये अनेक कठिनाईयों का सामना करना पडता है। विद्यार्थी किसी योग्य विद्वान के निर्देशन में विभिन्न प्रकार की शिक्षा ग्रहण करते थे। इसके अलावा उसे शस्त्र संचालन एवं विभिन्न कलाओं का प्रशिक्षण भी दिया जाता था,किन्तु वर्तमान समय में यह सभी प्रशिक्षण गौण हो गये हैं। शिक्षा की महत्ता बढाने व प्रतिस्पर्धात्मक युग में सजग रहते हुऐ बालक के बोलने व समझने लगते ही माता–पिता शिक्षा के बारे में चिन्तित हो जाते है। कुछ वर्षो बाद सबसे बडी समस्या यही होती है कि कौनसा विषय पढे जिससे भविष्य सुखमय हो। सर्वप्रथम के जातक के बचपन से ही उसकी कुण्डली विषय की पढाई भविष्य चयन में सहायक होती हैं। जातक की कुण्डली से तय करना चाहिये कि वह नौकरी करेगा या व्यवसाय। जिसके स्वामी देव गुरू बृहस्पति है। यह भाव उच्च शिक्षा तथा उच्च शिक्षा किस स्तर की होगी को दर्शाते है। यदि इसका सम्बन्ध पंचम भाव से हो जाये तो अच्छी शिक्षा तय करते है। जन्म कुण्डली का पंचम भाव बुद्धि,ज्ञान,कल्पना,अतिइन्द्रीय ज्ञान,रचनात्मक कार्य,याददाश्त व पूर्व जन्म के संचित कर्म को दर्शाता है। यह शिक्षा के संकाय का स्तर तय करता है। जन्म कुण्डली का चतुर्थ भाव मन का भाव है। यह इस बात का निर्धारण करता है कि आपकी मानसिक योग्यता किस प्रकार की शिक्षा में होगी, जब भी चतुर्थ भाव का स्वामी छठे,आठवे या बारहवें भाव में होगा या नीच राशि,अस्त राशि,शत्रु राशि में बैठा हो व कारक ग्रह चन्द्रमा पीडित हो तो शिक्षा में मन नहीं लगता है।ज्योतिष शास्त्र के अनुसार सभी ग्रहों के अन्तर्गत अलग–अलग विषयों का अध्ययन होता है। शिक्षा के लिये नवांश कुण्डली तथा चर्तुविशांश कुण्डली का विचार अवश्य करना चाहिये। जन्म कुण्डली के पंचमेश की स्थिति इन वर्ग कुण्डलीयों में देखने से शिक्षा का स्तर आंकलन किया जा सकता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नारी सशक्तिरण :– अर्थात नारियों को अपने खुद के निर्णय लेने और उनकी सोच बदलना ही महिला सशक्तिरण है

कविता बैरवा
शोधार्थी
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली

नारी सशक्तिकरण से तात्पर्य है– किसी व्यक्ति की उस क्षमता से है जिससे उसमें ये योग्यता आ जाती है, जिसमें वो अपने जीवन से जुड़े सभी निर्णय स्वयं ले सकें।

'नहीं सहना है अब किसी का अत्याचार,
महिला सशक्तिकरण का यही है मुख्य विचार'

महिला सशक्तिरण में भी हम उसी क्षमता की बात कह रहे हैं जहां महिलाऐं परिवार और समाज के सभी बंधनों से मुक्त होकर अपने निर्णयों की निर्माता खुद हो।

हमारे भारत देश के प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने भी कहा है कि लोगों को जगाने के लिए महिलाओं का जागृत होना जरूरी है। एक बार जब वो अपना कदम उठा लेती है तो परिवार आगे बढ़ता है, गांव आगे बढ़ता है और राष्ट्र विकास की ओर उन्मुख होता है। भारत में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए सबसे पहले समाज में उनके अधिकारों और मूल्यों को मारने वाले उन सभी राक्षसी सोच को मारना जरूरी है। जैसे दहेज प्रथा, भ्रुण हत्या, अशिक्षा, यौन हिंसा, बलात्कार, वैश्यावृत्ति, मानव तस्करी और ऐसे ही कई विषय।

लैंगिक भेदभाव राष्ट्र में सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक अंतर ले आता है जो देश को पीछे की ओर धकेलता है।

भारत के संविधान में उल्लेखित समानता के अधिकार को सुनिश्चित करने के लिए महिलाओं को सशक्त बनाना सबसे प्रभावशाली उपाय है।

भेदभाव जुल्म मिटायेंगे, दुनिया नई बसायेंगे
नई है डगर, नया है सफर, अब हम नारी आगे ही बढ़ती जायेंगी।

लैंगिक समानता को प्राथमिकता देने से पूरे भारत देश में महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा मिला हे। महिला सशक्तिकरण के उच्च लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए इसे हर एक परिवार में बचपन से प्रसारित व प्रचारित करना चाहिए। ये जरूरी है कि महिलाऐं शारीरिक, मानसिक और सामाजिक रूप से मजबूत हो, क्योंकि एक बेहतर शिक्षा की शुरूआत बचपन से ही घर पर हो सकती है। महिलाओं के उत्थान के लिए एक स्वस्थ परिवार की जरूरत है जो राष्ट्र के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक है। आज भी कई पिछड़े क्षेत्रों में माता–पिता की अशिक्षा, असुरक्षा और गरीबी की वजह से कम उम्र में विवाह और बच्चे पैदा करने का चलन है। महिलाओं के खिलाफ होने वाले दुर्व्यवहार, लैंगिक भेदभाव, सामाजिक, अलगाव तथा हिंसा आदि को रोकने के लिए सरकार कई सारे कदम उठा रही है। महिलाओं की समस्याओं का उचित समाधान करने के लिए महिला आरक्षण बिल, 108वां संविधान संशोधन का पास होना बहुत जरूरी है। ये संसद में महिलाओं की 33 प्रतिशत हिस्सेदारी को सुनिश्चित करता है। दूसरे क्षेत्रों में भी महिलाओं को सक्रिय रूप से भागीदार बनाने के लिए कुछ प्रतिशत सीटों को आरक्षित किया गया है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कार एवं संस्कृति से परिपूर्ण संस्कृत का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में योगदान

शोधच्छात्र
ललित किशोर शर्मा
JRRSU JAIPUR

भगवान ने ऋषियों को वेदों के रूप में ब्रह्मज्ञान सुनाया था। इसलिए वेदों को श्रुति भी कहा गया है। इस ब्रह्म ज्ञान में देवता ब्रह्माण्ड, ज्योतिष, गणित, रसायन, औषधि, प्रकृति, भूगोल, रीति–रिवाज आदि लगभग सभी विषयों के बारे में बताया गया है और इन्हीं वेदों में अंकित ज्ञान को ब्रह्म ज्ञान मानते हुए जीवन के हर पक्ष में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से इनका अनुसरण करते है। प्राणी मात्र के बौद्धिक, चारित्रिक, सामाजिक एवं शारीरिक विकास के विषय में स्पष्ट नियम बताये गये हैं। ये वेदों की हम लोगों के लिए एक भेंट है जिनका पालन वर्तमान समय में किया भी जाता है और कदाचित् नहीं भी। जैसे –

हमारे वेदों ने अतिथि सत्कार को देवयज्ञ के तुल्य माना है और अतिथि को साक्षात् देवता का रूप कहा है–**'अतिथि देवो भवः'** इत्यादि वेद वाक्य इसके प्रमाण है। हम लोग आज अतिथि सत्कार को बिल्कुल भूल गये है। सेवा सत्कार तो दूर किन्तु अतिथि के साथ शिष्टाचार तथा प्रेम से बोलना तक भी नहीं जानते देखिये विदेशों के लोग किस तरह से अपने देश में आए हुए अतिथियों के साथ किस तरह भद्र बर्ताव करते हैं। भारत में अतिथि सेवा एक अंग है और जापान में नागरिकता का एक अनिवार्य तत्व है। जापानी जीवन नम्रता और सौजन्य से ओतप्रोत है और अतिथि के स्वागत सत्कार में इन दोनों तत्वों की अति आवश्यकता रहती है। यहाँ तक कि कभी–कभी अतिथि को यह अनुभव होने लगता है कि यह सब क्या है? पग–पग पर जापानी भाषा के **आरिंग आलो गोजाई माश** (धन्यवाद)। **ईराशाई** (पधारिये) **डोजो** (विराजिये) की मधुर आवाज सुनाई पड़ती है। बाहरी अतिथि जापानी गृहस्थों के स्वभाव की सरलता और हृदय की सद्भावना से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।

संसार में मनुष्य को अपना जीवन धारण करने के लिये प्रतिदिन हजारों प्राणियों की हत्या करनी पड़ती है, बिना हिंसा के मनुष्य का जीवन संग्राम चल नहीं सकता। अर्थात् सोने–जागने में, चलने–फिरने में, उठने–बैठने में, खाने–कमाने में और श्वास–प्रतिश्वास में हजारों प्राणियों की हिंसा होती है तथा गृहस्थों के पाँच स्थानों में भी प्रतिदिन जीव हिंसा होती है। **जैसे – चूल्हा, चक्की, झाड़ू, ऊखल, जल पात्र,** इन पाँच वस्तुओं को काम में लाने से जीव हिंसा होती है। अतः इन हिंसाकृत पापों से मुक्त होने के अर्थ महर्षियों ने गृहस्थों के लिये पंच महायज्ञ नियत किये है, उनको प्रतिदिन नियम से करने से पाप निवृत्त होते हैं तथा अतिथि सत्कार से देश–विदेश यात्रा में परस्पर सुख, आराम मिलता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आध्यात्मिक विज्ञान के मूल्य (समाज की बेहतरी के लिए)

परमेश्वर गुप्ता
पी.एच.डी. (शिक्षा) शोधार्थी
कैरियर पाइंट यूनिवर्सिटी, कोटा

आध्यात्मिकता की परिभाषा यह हो सकती है कि ईश्वरीय उद्दीपन की अनुभूति प्राप्त करने का एक दृष्टिकोण है, जो धर्म से अलग है। जब धर्म को संहिताबद्ध, प्रामाणिक, कठोर, दमनकारी या स्थिर के रूप में ग्रहण किया जाता है तब आध्यात्मिकता को अक्सर धर्म की इस अवधारणा के विरोध में रख सकते है।

इसे एक अभौतिक वास्तविकता के अधिगम के रूप में उल्लेख किया गया है–

1. एक आंतरिक मार्ग जो एक व्यक्ति को उसके अस्तित्व के सार की खोज में सक्षम बनाता है।
2. आध्यात्मिक व्यवहार, जिसमें ध्यान, प्रार्थना और चिंतन शामिल हैं, एक व्यक्ति के आंतरिक जीवन के विकास के लिए अभिप्रेत है।
3. आध्यात्मिकता को जीवन में अक्सर प्रेरणा अथवा दिशा निर्देश के एक स्रोत के रूप में अनुभव किया जाता है।
4. इसमें, सारहीन वास्तविकताओं में विश्वास या अंतस्थ के अनुभव या संसार की ज्ञानातीत प्रकृति शामिल हो सकती है।

कुछ लोगों के लिए, आध्यात्मिकता में, ध्यान, प्रार्थना और चिंतन जैसे अभ्यासों के माध्यम से किसी व्यक्ति के आंतरिक जीवन का आत्मनिरीक्षण और विकास शामिल होता है।

आध्यात्मिक यात्रा एक मार्ग है जिसके आयाम मुख्य रूप से व्यक्तिपरक और व्यक्तिगत है। एक आध्यात्मिक मार्ग को एक विशिष्ट लक्ष्य या जीवन काल की ओर निर्दिष्ट एक लघु अवधि का मार्ग माना जा सकता है। जीवन की हर घटना इस यात्रा का हिस्सा है।

आध्यात्मिक विज्ञान के मूल्य यथा ध्यान, प्रार्थना, उपवास, पवित्र ग्रंथों के प्रति दृष्टिकोण, आध्यात्मिक के रूप में माना जा सकता है।

हम यहाँ पर यह स्पष्ट कर सकते हैं कि 'धर्म' अध्यात्म के समान नहीं है, बल्कि सभ्यता में आध्यात्मिकता धर्म का रूप ग्रहण करती है। आध्यात्मिकता आनन्द का स्रोत है इसका संबंध मनुष्य के आंतरिक जीवन से है और मनुष्य इसका नियमपूर्वक पालन करते हुए समाज की बेहतरी के लिए तत्पर रहता हैं स्वयं अपना व्यक्तिगत कल्याण तो करता ही है साथ ही समाज को एक आदर्श विचारधारा एवं सिद्धान्तों से लाभान्वित भी करता है। क्योंकि मनुष्य लौकिक एवं पारलौकिक दोनों शक्तियों से जुड़ा होता है। क्योंकि मनुष्य अपनी दोनों स्थितियों जन्म एवं मरण को समझने की कोशिश करता है। आध्यात्मिकता का विचार समाज को सांस्कृतिक वैभव से परिपूर्ण करने के साथ–साथ आनन्ददायी जीवन शैली जिसमें प्रसन्नता का भाव, अहिंसा, प्रेम, सद्भाव आदि सत्गुणों के विकास से इहलोक एवं परलोक में अपनी अच्छी भूमिका के रूप में समाज को नई दिशा प्रदान करने का एक सतमार्ग है। श्रीमद् भागवत गीता का विश्लेषण व अभ्यास प्रत्येक विद्वान द्वारा अलग–अलग प्रकार से किया गया है। इसमें भगवान की पहचान बतायी गई है। कर्म का विज्ञान बताया गया है परस्पर सम्बन्धों का वर्णन किया गया है। प्रत्येक व्यक्ति के जन्म से मृत्यु तक के कर्तव्यों का वर्णन भी किया गया है जो सचमुच समाज को एक नई दिशा एवं जीवन शैली के दर्शन कराता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत साहित्य और मानव मूल्यों की प्रांसगिकता

मधुलता शर्मा
पी.एच.डी. स्कॉलर
सुरेश ज्ञान विहार यूनिवर्सिटी
जगतपुरा, जयपुर

डॉ. महेन्द्र कुमार धाकड़
शोध निदेशक
सुरेश ज्ञान विहार यूनिवर्सिटी
जगतपुरा, जयपुर

सार विशेष–Abstracts

विश्व कल्याण एवं विश्व शान्ति की प्रतिष्ठा के लिए आज मानव मूल्यों को आत्मसात करने की महती आवश्यकता है। आतंकवाद, हिंसा, नशीले पदार्थों के सेवन में हो रही उत्तरोत्तर वृद्धि तथा भौतिक सुख समृद्धि की लिप्सा से दिग्भ्रमित मानव समाज में गिरते हुए मानव मूल्यों के दुष्परिणामों के रूप में विद्यमान है।

आज विश्व में तमस का प्राधन्य है, इसी तामसिक ज्ञान के कारण विश्वशान्ति विनष्ट होती जा रही है। कही धर्म के नाम पर तो कही वर्ण, जाति, लिंग, भाषा एवं संस्कृति के आधार पर हिंसा एवं प्रतिहिंसा हो रही है। इस समय भारत हो या श्रीलंका, सोवियत संघ या अन्य कोई राष्ट्र किसी ने किसी रूप में वहां जन हिंसा हो रही है। मनुष्य, मनुष्य को ही मार रहा है। इनसानियत पर शैतानियत हावी होती जा रही है। कलतः अन्तराष्ट्रीय आतंकवाद आज विश्व की ज्वलन्त समस्या बन बैठा है। बारूदी सुरंगों, बम धमाकों एवं एटमी जखीरों पर विजयी अट्टहास करते मस्तिष्कों ने आज मानव सन्तति के भविष्य और अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लगा दिये है। अतः आज मनुष्य में मनुष्यत्व को जाग्रत करने के लिए मानव मूल्यों की मशाल को प्रदीप्त करने की परम आवश्यकता है। तभी विश्व में लोक कल्याण एवं शान्ति की प्रतिष्ठा सम्भव है।

मानव जीवन को स्वस्थ दिशा देने वाले गुणों को मानव मूल्यों की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है। इस प्रकार ऋषियों द्वारा प्रदत आचार संहिता या जीवन दृष्टि का नाम है। मानव मूल्य जिनसे मानव जीवन का पूर्ण एवं सार्थक सदुपयोग हो सकता है। जीवन को अनुशासित करने वाले तत्वों को मानव मूल्यों की श्रेणी में रखा जा सकता है। भारतीय धरातल पर प्रणीत वैद वाङ्मय ने ही धरती पर मानव मूल्यों की सुदृढ़ आधारशिला रखी है, जिसके आधार पर हमारी भव्य संस्कृति की अट्टालिका अपनी पूर्ण गरिमा के साथ खड़ी है।

भारतीय साहित्य और संस्कृति आचरणात्मक एवं आदर्श पूर्ण मानव मूल्यों के लिए एक अनुपम वैश्विक धरोहर है। जो शताब्दियों से आज तक धरातल पर सामाजिक जीवन में अपनी असीम गरिमा और अनन्त प्रासंगिकता को सिद्ध करते आ रहे है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

''महाभारत में वर्णित नैतिक मूल्यों द्वारा मानव जीवन का प्रबन्धन''

नेहा गौड़
संस्कृत शोधार्थी
जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय,
जोधपुर

प्रत्येक युग तथा काल में नैतिक मूल्यों का सम्बन्ध मानव से रहा है और आगे भी रहेगा। देश, काल, परिस्थिति के अनुसार व्यवहार में ये नैतिक मूल्य कम हो सकते है या बढ़ सकते है। इन मूल्यों का परिवर्तित होना जिस प्रकार निश्चित है ठीक उसी प्रकार इनका अस्तित्व भी निश्चित है। मनुष्य की समस्त क्रियाएँ ज्ञान एवं व्यवहार पर ही चलती है और किसी भी क्षेत्र में आगे ले जाने में यही नैतिक मूल्य सहायक होते हैं।

भारतीय संस्कृति के स्रोत रूप में उपलब्ध काव्य ग्रन्थों का संग्रह एक अनुपम देन है, इन्हीं में महाभारत का एक विलक्षण स्थान है। महाभारत में राजनीति, लोक नीति, व्यवहार नीति, धर्म नीति आदि सभी उपलब्ध है। इसकी विविधता तथा अधिकता के आधार पर ही कथन प्रचलित है–**''यन्न भारते तन्न भारते''** अर्थात् जो महाभारत में नहीं है, वह भारत में कहीं नहीं मिलेगा।

महाभारत में उन नैतिक ग्रन्थों का महत्व इस प्रकार वर्णित किया गया है कि उन मूल्यों का प्रबन्धन किसी भी काल, युग, समय में परिवर्तित नहीं होगा, कुछ इस प्रकार है–

1. **सदाचार–** मानवधर्म में प्रथम स्थान के रूप में लक्षित है। सदाचार में सत्य का आचरण है, जिसके अन्तर्गत सत्य, अहिंसा, दान, तप, अक्रोध, शम् आदि गुण समाविष्ट है। शान्ति पर्व में इसी को शील कहा है तथा सदाचार का लक्षण बताते हुए कहा है कि ''श्रेष्ठ पुरुष तो वही है जिनमें सदाचार देखा जाय–

संतश्चाचारलक्षणाः''

2. **आत्म संयमः–** आत्म संयम कल्याण का परम साधक है क्योंकि जो व्यक्ति संसार में आत्म संयम से सम्पन्न है वहीं दान, क्षमा आदि सिद्धियों को प्राप्त कर सकता है।
3. **सत्यः–** शब्द कोश के आधार पर सत्य का अर्थ–ईमानदार, सच्चा, पुण्यात्मा, यथार्थ जल, सत्यलोक, विष्णु आदि बताया है। महाभारत में सत्य का स्वरूप कई अर्थ में विवेचित है। भीष्म पितामह कहते है कि नित्य एक रस, अविनाशी और अविकारी होना सत्य है–

सत्यं नामाव्ययं नित्यमविकारि तथैव च।

सत्य ही ब्रह्म व तप है।

4. **शान्तिः–** शांति को प्राप्त करने के लिये विवेक, धैर्य, समझ, दयालुता का अभ्यास आवश्यक है। श्रीकृष्ण कहते है कि जिस व्यक्ति ने इन्द्रियतृप्ति की समस्त इच्छाओं का त्याग कर दिया है, जो इच्छाओं से रहित है तथा जिसने मोह का त्याग कर दिया वही वास्तविक शान्ति प्राप्त कर सकता है।

इसी प्रकार प्रसन्नता, पवित्रता, क्षमा, पुरूषार्थ, अक्रोध, धर्मानुकूल नीतियों, राज्य रक्षा, श्रद्धा, तप, दान, यज्ञ, त्याग आदि का विस्तृत वर्णन मेरे शोध पत्र का प्रमुख विषय रहेंगे।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

।। मन्त्र विज्ञान ।।

डॉ. आशीष कुमार शर्मा
वेदाचार्यः

' मन्त्रा मननात् '
" मननत्राणधर्माणो मन्त्राः "

इत्यादि श्रुति प्रमाण से बोध होता है कि, वह शब्दराशि जिसके मनन करने से तथा चिन्तन करने से मन को मननीय शक्ति अर्थात एकाग्रता प्राप्त हो तथा जिसका जप करने से समस्त भयों का विनाश एवं सर्वतः रक्षा हो वह मन्त्र कहलाता हैं। मन्त्र शब्द मे दो शब्द मे दो शब्द निहित हैं – मन् और त्र , **'मन्'** शब्द से मन को एकाग्र करना तथा **'त्र'** शब्द से त्राण 'रक्षा' करना जिनका धर्म है और जप से जो अभीष्ट फल प्रदान करे, वह शब्दराशि **'मन्त्र'** कहलाती है।

मननात्सर्वभावनां त्राणात् संसारसागरात्।
मन्त्ररूपा हि तच्छक्ति.र्मननत्राणरूपिणि।।

ये मन्त्रराशि अपौरूषेय तथा हमारे आप्तपुरूषों द्वारा दृष्ट होने के कारण स्वतः प्रमाण मानी गई है। इस अपौरूषेय शब्दराशि के दर्शन निगमागम शास्त्रों में प्राप्त होते है।

निगम अर्थात चारों वेद तथा आगम तन्त्रशास्त्र हैं। दोनो ही शास्त्र परब्रह्मवाक् होने के कारण अपौरूषेय हैं तथा स्वतः प्रमाण भी हैं।

हमारे ऋषियों ने आध्यात्मिक ध्यानशक्ति के द्वारा इन मन्त्रों का प्रत्यक्षिकरण कर इन्हे लिपिबद्ध किया हैं अतः कहा गया है

" ऋषयो मन्त्र दृष्टारः न तु कर्तारः "

अर्थात ऋषि मन्त्रों के दृष्टा है कर्त्ता नहीं।

ये सभि मन्त्र एक विशिष्ट रहस्यमय भाव को अपने आप में समाहित किये हुए हैं, **जिस प्रकार हमारे आधुनिक वैज्ञानिक विशिष्ट तरंगो अथवा किसि ध्वनि को एक यन्त्र में संग्रहित कर लेतें हैं तथा समयानुसार उसका उपयोग करतें है उसि प्रकार हमारे ऋषियों ने रहस्यमय भावों का अपने योगसाधना के बल से दर्शन किया तथा शब्दरूपि यन्त्रों अर्थात मन्त्रों में समाहित कर लिपिबद्ध किया है। अतः हम यह भी कह सकते हैं कि ये मन्त्र एक प्रकार के यन्त्र के समान हैं।** जिनके प्रयोग एवं साधना से जीव अपनी इहलौकिकं एवं पारलौकिक इच्छाओं को पूर्ण कर सकता है।

आगमशास्त्रानुसार–अपनी सूक्ष्म प्रकृति और प्रवृत्ति की गति के अनुसार नाममय शब्द तथा भावमय रूप के अवलम्बन से जो योग साधना की जाय उसको 'मन्त्रयोग' कहते है। मन्त्र साधना में सफलता तब ही मिल सकती हैं, जब हम उसके मूल रहस्य को समझें। अतः यह कहना उचित ही होगा कि शक्ति के वैभव या विकास–दशा में मनन युक्त तथा संकोच अथवा सांसारिक अवस्था मे त्राणमयी अनुभूति ही मन्त्र हैं। अथवा परावागात्मक अनुभूति ही मन्त्र है। यह अनुभूति निरन्तर मनन से ही सम्भव है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कठोपनिषद में निहित मानवीय मूल्यों का शैक्षिक विश्लेषण

डॉ. मीनू मिश्रा
जयपुर

हमारी भारतीय ज्ञान परम्परा प्राचीन काल से ही अत्यंत समृद्ध है। इस ज्ञान परम्परा का संवर्धन हमारे आध्यात्मिक ग्रन्थ दार्शनिक ग्रन्थ एव वेदों के द्वारा होता है। इसी ज्ञान परम्परा की एक अद्‌भुत कडी उपनिषद् के रूप में हमें प्राप्त है। वस्तुतः उपनिषद् 108 है, परन्तु इनका संरक्षण ना होने के कारण कुछ ही प्राप्त है। दन उपनिषदों में एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण उपनिषद कठोपनिषद है जिसमें यम नचिकेता का प्रसिद्ध संवाद है जों अत्यन्त प्रसिद्ध है। कठोपनिषद में निहित जो तत्व है उन तत्वों में ज्ञान के साथ साथ अनेक मूल्यों का भी समावेश है, इन मूल्यों में मानवीय मूल्य अत्यन्त प्रभावशाली है दन मानवीय मूल्यों को हम कुछ कठोपनिषदीय उदाहरणों द्वारा देख सकते हैः

ॐ सहना भवतु। सह नौ भुनक्तु।

ॐ सह वीर्य करवावहै तेजस्वि नावधीतमस्तु। मा विद्विषा वहै।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

वस्तुतः यह मन्त्र वैदिक मन्त्र है परन्तु उदाहरण स्वरूप कठोपनिषद् में रखा गया है। इस मन्त्र में मानवीय मूल्य यदि हम देखें तो इसमें यह कहा जा रहा है– हे! परमात्मा आप हम दोनो गुरू और शिष्य की रक्षा साथ साथ करें, हमें प्राप्त की हुई विद्या तेज प्रदान करें, हम परस्पर द्वेष ना करें, इस मन्त्र के द्वारा एक मानवीय मूल्य का दर्शन यही होता है। एक गुरू का कर्तव्य है कि वह अपने शिष्य का निरन्तर कल्याण करें और इस विषय में चिन्तन करें।

अतः इसके द्वारा समाज में एक आदर्श मूल्य स्थापित होगा जिससे गुरू और शिष्य के मध्य मधुर संबन्ध स्थापित होता है, इसी प्रकार जब नचिकेता अपने पिता को देखता है कि वह मरणासन्न गायों को दान में दे रहा है, तो उस नन्हें बालक के मस्तिष्क में यह विचार आता है कि यह गाय दान देने योग्य है, वह कहता है किः

पीतोदका जग्धतृणा दुग्धदोहा निरिन्द्रियाः

अनन्दा नाम ते लोकास्तान स गच्छति ता ददत्।।

अर्थात् दान में देने वाली जो अधिकाधिक गाय है वो मरणासन्न स्थिति में है, ऐसी गायों का दान करना पाप करने के समान है, इस विचार से यह ज्ञात होता है कि एक नन्हा बालक इतना मूल्यवान है तो इसके माध्यम से हमें अपने समाज में मूल्यों का स्थापना अवश्य कर सकते है।

इस प्रकार यदि मानवीय मूल्यों का संरक्षण एवं संवर्धन हमें करना है तो हमें शिक्षा में इन उपनिषदीय तत्वों का समावेश करना आवश्यक है, जब हम छात्रों को इन उपनिषदों में निहित संवादों को पढोयेंगे तो छात्र अवश्य ही मूल्यवान बनेंगे। इस कारण मूल्य संरक्षण हेतु शिक्षा ही महत्वनूर्ण पक्ष है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत छात्रों के लिए अनुसंधान–नैतिकता

श्री नरेश कुमार भार्मा
शोधार्थी (संस्कृत) महाराजा सूरजमल बृज
विश्वविद्यालय,
भरतपुर (राज.)

अनुसंधान एक नैतिक प्रक्रिया है। अनुसंधान नैतिकता का आशय–अनुसंधान में क्या सही है और क्या गलत है का ईमानदारीपूर्वक निर्वहन करना है। अनुसंधान की अखण्डता को बनाए रखने के लिए नैतिक सिद्वांत वास्तव मे महत्वपूर्ण हैं। संस्कृतशोधार्थी के लिए शोध में नैतिकता तथा सत्य के प्रति निष्ठा आवश्यक तत्व हैं।

शोध में नैतिकता की प्रवृत्ति विकसित करने हेतु संस्कृत छात्रों के लिए शास्त्रों का अध्ययन आवश्यक हैं अगर शास्त्र के अध्ययन के प्रति रूचि बढ़ेगी तो निश्चित रूप से छात्र शोध नैतिकता की ओर बढ़ेंगे, क्योंकि शोध का सिद्वांत है कि "न अमूलं लिख्यते किन्चित् न अनपेक्षितं उच्यते "। शोध की सबसे बड़ी समस्या है कि आज CUT-PASTE की संस्कृति आ गई है। जो मूल सन्दर्भ है, उसे नहीं देखा जाता है। संस्कृत शोधकर्ता को ईमानदारी पूर्वक आंकड़ों व परिणाम को प्रतिवेदित करते हुए पूर्वाग्रह से बचाव अनुचित शोधविधि का प्रयोग ना करना, गलत रिर्पोटिंग ना करना जैसे नैतिक मुद्दो पर विचार करना अति आवश्यक है। शोध की मौलिकता सदैव संदेह से परे होनी चाहिए। किसी दूसरे की भाषा विचार, उपाय, शैली आदि का अतिकांशतः नकल करते हुए अपने मौलिक कृति के रूप में प्रकाशन करना साहित्यिक चोरी है। संस्कृत छात्रों को इससे बचना चाहिए।

संस्कृत–शोधार्थी को व्यक्तियों की सहमति, स्क्रीनिंग, पायलट प्रवृति स्टेडी, फीड–बैक आदि को शामिल करते हुए शोध कार्य करना चाहिए तथा सदैव इस बात का ध्यान रखाना चाहिए कि उनके शोध से कोई प्राणी आहत ना हो एवं समाज के लिए सकारात्मक परिणाम निकले तथा जिसमें समाज हित समाहित हो।

अनुसंधान में नैतिकता को अपनाकर छात्र सर्वासु भाषासु जननी संस्कृत की गरिमा एवं पवित्रता को अक्षुण्ण बनाएँ रखने में भागीदार बन सकते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नारी सशक्तिकरण

अर्चना कुन्तल
शोधच्छात्रा
संस्कृत विभाग,दिल्ली विश्वविद्यालय,दिल्ली

प्राचीन काल से ही भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति में नारी का महत्वपूर्ण स्थान ही रहा है। नारी अपनी सृजनशीलता और कलात्मक प्रवृत्तियों से नर की सृष्टि को पूर्णता प्रदान करती आ रही है।
नारी शब्द नृ धातु अथवा नर शब्द से बना है–नृ+अच् +ङीन = नारी। महाभाष्य में पतंजलि ने कहा है–नृधर्म्यान नारी,नरस्यापि नारी (महा.४.४.६)।
इसी नारी शब्द के लिये 'स्त्री' शब्द जितना अधिक व्यापक है उतना ही अधिक प्रचिलित भी है। वैदिक काल में प्रसिद्धि पा चुका यह स्त्री शब्द आज भी भारत की लगभग सभी भाषाओं में अपना स्वरूप किसी न किसी रूप में बनाये हुए है। स्त्री शब्द स्त्यै शब्दसंघातयोः धातु पूर्वक इट् एवं ङीप् प्रत्यय से सिद्ध होता है (स्त्यै√+ इट्+ ङीप्=स्त्री)।
आचार्य पाणिनि के मत में स्त्यै शब्दसंघातयोः इस धातु के अनुसार स्त्री शब्द का अर्थ शब्द करना एवं इकट्ठा करना स्पष्ट होता है जबकि,
आचार्य यास्क के मत में स्त्रियः स्त्यायन्ते अपत्रपणकर्मणः (निरुक्त3/21/2) अर्थात् स्त्री का स्त्रीत्व उसके लज्जाशील होने में ही है ऐसा अर्थ किया है,एवं
आचार्य दुर्ग ने भी निरुक्त की टीका में लिखा है–लज्जार्थस्य लज्जन्ते अपि ताः अर्थात् वे लजाती हैं इसलिये स्त्री हैं ।
भाष्यकार के मत में ‸ गुणानां स्त्यानं स्त्री‸ अर्थात् शब्द स्पर्श रुप रस एवं गन्ध इन सबकी खान है स्त्री।।।27।।
स्त्री,अबला,रमणी,प्रमदा,तरुणी,वामा,सुन्दरी,ललना,दारा,जननी माता,दुहिता,कन्या,बाला,सुता,वधू,शक्ति,देवी इत्यादि शब्द नारी शब्द के ही वाची हैं,को उनके वैशिष्ट्य को सर्वदा द्योतित करते हैं।

ऋग्वेद विश्व के पुस्तकालय का ईश्वर प्रदत्त प्रथम एवं श्रेष्ठ रत्न है अतः वैदिक वाङ्मय में नारी की स्थिति को सम्यक एवं इदम् इत्थं रूप में जानने के लिये प्रथमतया उसी पवित्र ग्रन्थ का अध्ययन अत्यावश्यक है उसी के अनुशीलन के साक्ष्यों के आधार पर तत्कालीन नारी की स्थिति का परिचय सही रूप में प्राप्त किया जा सकता है। प्राचीन काल से ही भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति में नारी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। नारी अपनी सृजनशीलता और कलात्मक प्रवृत्तियों से नर की सृष्टि को पूर्णता प्रदान करती आ रही है।

वेदों में वर्णित समाज में स्त्री पुरुष में किसी भी प्रकार के विभेद का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। अनेक वैदिक मन्त्रों से वेदों में भावनात्मक दृष्टि से भी नारी का समान रूप से आदर का भाव दृष्टिगोचर होता है। वैदिक मनीषियों ने नारी शिक्षा के समान रूप से महत्व के साथ साथ नारी के लिये सभी अन्य क्षेत्रों में भी समानता के अधिकार की बात कही है। नारी के शिक्षा,धर्म,विवाह,राजनीति एवं अन्य सामाजिक कार्यों में भी भाग लेने की पूर्ण स्वतन्त्रता की चर्चा वेदों में की गयी है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"नारी सशक्तीकरण"

Piyush Kiran Mathur
Research Scholar
Career Point University, Kota

परिवार, समाज और देश के उज्ज्वल भविष्य के लिए नारी सशक्तीकरण अत्यन्त आवश्यक है। नारी सशक्तीकरण में शिक्षा का अहम योगदान है। शिक्षा के द्वारा ज्ञान, योग्यता, दक्षता, प्रतिभा और क्षमता का विकास होता है। जो नारी सशक्तीकरण के लिए अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षा के महत्व के स्वीकारते हुए कहा जाता है कि "यदि एक पुरुष को शिक्षित किया जाये तो एक व्यक्ति शिक्षित होता है लेकिन यदि एक महिला को शिक्षित कर दिया जाये तो पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है।"

देश को शक्तिशाली बनाने के लिए महिलाओं को सशक्त, सक्षम और आत्मनिर्भर बनाना आवश्यक है। महिला सशक्तीकरण हेतु देश में कई योजनाऐं चलाई जा रही हैं। सशक्तीकरण से तात्पर्य उस क्षमता से है जिसमें महिलाऐं अपने जीवन से जुड़े सभी निर्णय स्वयं ले सकें। उनके स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वाबलम्बन व विकास के लिए उन्हें मार्गदर्शन व मानसिक प्रशिक्षण देना सशक्तीकरण है। संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों एवं स्वयं की उन्नति तथा सुरक्षा हेतु बनाये गये कानूनों की जानकारी और उनका समय पर उपयोग करना नारी सशक्तीकरण है। महिलाओं ने चिकित्सा, शिक्षा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, खेलकूद, अंतरिक्ष, राजनीति इँजीनियरिंग, मीडिया प्रबन्धन, अनुसंधान, कानून, मार्केटिंग, सिनेमा, साहित्य और प्रशासनिक सेवाओं जैसे अति दक्षता वाले क्षेत्रों में भी अपनी श्रेष्ठतम उपलब्धियों से इतिहास रचा है। वे पारिवारिक दायित्वों के साथ समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों से भी पीछे नहीं हटीं है। वे अपनी निर्णय क्षमता और नेतृत्व से राष्ट्र के विकास में अहम योगदान दे रही हैं।

शिक्षित नारी समाज, परिवार व देश की आधारशिला है। शिक्षा से ही नारी सशक्तीकरण संभव है। जिस देश की नारी जितनी अधिक शिक्षित व जागरुक होगी वह देश उतना ही विकसित और समुन्नत होगा। महिलाओं को शिक्षित करके इनकी सुप्त चेतना, शक्ति, सामर्थ्य व क्षमताओं को नई दिशा प्रदान की जा सकती है। असमानता, शोषण एवं अत्याचार के चंगुल से मुक्त करवाकर विकास की दौड़ में उनकी भागीदारी बढ़ाई जा सकती है। महिलाओं की शिक्षा व उनकी क्षमताओं का संवर्धन देश के आर्थिक व समग्र विकास का सर्वोत्तम तरीका है। भले ही महिलाओं को कई कानूनी अधिकार मिल चुके हैं लेकिन जब तक उनकी शिक्षा के लिए ठोस कदम नहीं उठाये जाएँगे तब तक वह अपने अधिकारों का सही तरीके से उपयोग करना नहीं सीख सकेंगी। शिक्षा ही वह उपकरण है जिससे महिला समाज में अपना सम्मान व उपयोगी भूमिका दर्ज करा सकती है। शिक्षा के द्वारा ज्ञान, कौशल, दक्षता एवं क्षमताओं का विकास होता है जो नारी सशक्तीकरण के लिए आवश्यक होता है। महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए दहेज प्रथा, अशिक्षा, यौन हिंसा, असमानता, कन्या भ्रूण हत्या, घरेलू हिंसा, वेश्यावृत्ति तथा मानव तस्करी जैसी राक्षसी सोच को मारना जरुरी है। शिक्षा के अभाव में नारी सशक्तीकरण की योजना असंभव है। अतः नारी सशक्तीकरण के लिए शिक्षा की आवश्यकता अहम् है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भारतीय परिवेश में भाषा, समाज, संस्कृति और शिक्षा का अन्तरूसंबंध

Co&relation between Society] Language] Culture and Education in Indian Content

डॉ.ओम प्रकाश
सहायकाचार्य, शिक्षाशास्त्रविभाग
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, एकलव्य परिसर
अगरतला, त्रिपुरा

भारत स्वतंत्र होने के बाद भी भारतीय जनता के साथ जो महत्वपूर्ण समस्याएँ हैं उनमें सबसे महत्वपूर्ण समस्याएँ सामाजिक विषमता और भाषा ही हैं। भारतीय संस्कृति पर विचार किया जाए तो "भारतीय संस्कृति मनुष्य के विचारों एवं व्यवहारों के प्रतिमानों को इंगित करती है। इसके अंर्तगत मूल्य, विश्वास, आधार संहिता, राजनैतिक प्रतिमान तथा आर्थिक संगठन भी शामिल है।" इन मूल्यों के आधार पर भारतीय समाज व्यवस्था को संस्कृति और शिक्षा में बाँट कर देखा जाये तो स्पष्ट हो जाएगा कि समाज, संस्कृति, शिक्षा में किस प्रकार संबंध होता है, जिसमें भाषा का योगदान भी महत्वपूर्ण होता है।

भारतीय परिवेश में जब हम शिक्षा की बात करते हैं तो भारत में "विद्या जीवन का अत्यंत महत्वपूर्ण–वस्तुतरू मूलभूत साधन थी; परन्तु वह साधन ही रही साध्य कभी नहीं बनी।" जिससे केवल भारतीय शिक्षा व्यवस्था में ही नहीं बल्कि समाज व्यवस्था में भी कई त्रुटियाँ रहीं हैं। जिसका परिणाम हमें संस्कृति पर भी दिखाई पड़ता है। आज समाज व्यवस्था और शिक्षा को जोड़कर देखा जाए तो "मानव की प्रवृत्तियाँ संस्कार से असंस्कार की ओर बढ़ रही हैं। इसका एक मात्र कारण है आधुनिक विज्ञान, राजनीति, और संस्कृति में सामंजस्य का अभाव।" शिक्षा संस्थानों का व्यवसायीकरण हो चुका है और ज्ञान का माध्यम केवल एक ही भाषा को माना जा रहा है। जिसके विपरीत परिणाम भी समाज को झेलने पड़ रहे हैं। भारतीय आधुनिक जगत में जो समस्याएँ सामने आ रही हैं उसमें हमारी शिक्षा व्यवस्था, नवीनतम रूढ़ होती संस्कृति और समाजिक विषमता ही एकमेव कारण है। जिसके लिए किसी एक को दोषी मानना पूर्णतरू गलत होगा। क्योंकि विचारक उडवर्थ एवं सदरलैंड के अनुसार "किसी भी राष्ट्र की संस्कृति उसकी सामुदायिक विरासत है। वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित की जाती है।" लेकिन आधुनिक भारतीय संस्कृति को देखा जाए तो उसमें जो बदलाव आया है उसमें त्रुटी केवल संस्कृति हस्तांतरित करने वाले वरिष्ठों से ही नहीं हुई बल्कि संस्कृति सीखने वाले कनिष्ठों से भी हुई है। इस समस्या को समाप्त करने के लिए इसपर आत्ममंथन जरुरी है, जिसमें भाषा, समाज, संस्कृति और शिक्षा में होने वाले अंतरूसंबधों की समस्याओं का समाधान भी छुपा हुआ हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ज्योतिष में वर्णित विद्याध्ययन के क्षेत्र

पवन कुमार शर्मा
आचार्य, द्वितीय सेमेस्टर
ज.रा.रा.सं.वि.वि. जयपुर

वेदांग के रूप में नेत्रायित ज्योतिष शास्त्र लोक और परलोक की सभी विद्याओं का अजस्त्र स्त्रोत है। भूत, भविष्य और वर्तमान का सम्पूर्ण ज्ञान ज्योतिष से सम्भव है। ज्योतिष के प्राचीन ग्रन्थों में समग्र चराचरजगत के विषयों का समावेश हुआ है। इसी ज्ञान–विज्ञान के आधार पर ज्योतिष को अन्य समस्त शास्त्रों व वेदांगों में मूर्धन्य स्थान प्राप्त हुआ है।

ज्योतिष शास्त्र में प्राचीनाचार्यों ने ग्रहों के आधार पर विद्याध्ययन के क्षेत्रों का निर्धारण कर जिज्ञासु बटुकों को उस–उस क्षेत्र में प्रवृत्त होने का आदेश किया है। विविध ग्रन्थों में गृहों के द्वारा विद्याध्ययन के क्षेत्रों का विवेचन निम्न प्रकार से बताया गया है।

1.	सूर्य	–	वेदान्त, गीत जानने वाला
2.	चन्द्र	–	ग्रन्थकार/सांख्य, योग साहित्य एवं गान विद्या
3.	मंगल	–	नैयायिक
4.	बुध	–	मीमांसाशास्त्र
5.	गुरू	–	ग्रन्थकार/सब विद्याक्ता/व्याकरण एवं वेद वेदान्त
6.	शुक्र	–	कवि, वक्ता व काव्य का मर्मज्ञ
7.	शनि	–	आध्यात्म विद्या, गुह्य विद्या
8.	राहु	–	भूत विद्या, रहस्य विद्या
9.	केतु	–	गणित/ज्योतिष

वर्तमान में इन आधुनिक ज्ञान–विज्ञान–तकनीक–प्रौद्योगिकी इत्यादि विषयों का भी ग्रहों की प्रकृति–स्थिति के आधार पर निर्धारण किया जाता है। इस प्रकार ज्योतिषशास्त्र की शिक्षा के क्षेत्र में लोकोपादेयता व सान्दर्भिकता सराहनीय व स्तुत्य है, इसमें कोई वैमत्य नहीं है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शीर्शक – ''शिक्षा दर्शन में मानवीय मूल्य''

डॉ. पवन कुमार शर्मा
जगदगुरू रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर

मानव जीवन पर्यन्त सीखता रहता है तथा उसके अनुभवों में निरन्तर अभिवृद्धि होती रहती है। जैसे जैसे वह अधिकाधिक सीखता जाता है तथा परिपक्व होता है वह ऐसे अनुबन्ध प्राप्त करता है जो उसके व्यवहार को निर्देशित करते है। व्यवहार के निर्देशक के रूप में वे अनुभवों के विकसित व परिपक्व होने के साथ साथ विकसित तथा परिपक्व होते है। इस प्रकार मूल्य किसी वस्तु या स्थिती का वह गुण है जो समालोचना व वरीयता प्रकृट करता है। यह एक आदर्श या इच्छा है जिसे पूरा करने के लिए व्यक्ति जीता है तथा आजीवन प्रयास करता है। आलपोर्ट के अनुसार, ''मूल्य एक मानव विश्वास है जिसके आधार पर मनष्य वरीयता प्रदान करने का कार्य करता है''।

भारतीय चिन्तन एवं संस्कृति में तथा भारतीय शिक्षा दर्शन में प्राचीन काल से ही मूल्यों को महत्त्वपूर्ण माना जाता रहा है। सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, तप, ईश्वर भक्ति, क्षमा, करूणा, सादा जीवन, साहस, मित्रता, संताष, परोपकार, समानता, कर्त्तव्य परायणता, नम्रता, शांति, सहयोग, प्रेम, विनम्रता, सहानुभूति, देश भक्ति, ईमानदारी, विश्वबन्धुत्व, दान, दया, धैर्य, सहिश्णुता तथा समाज सेवा की भावना आदि मूल्य मनुश्य के उत्थान के लिए भारतीय संस्कृति एवं शिक्षा दर्शन के अनुसार आवश्यक है।

ये मूल्य ही मनुश्य के लिए आदर्श, उद्देश्य, लक्ष्य, गन्तव्य, मनोरथ एवं साध्य बनते है और वह जीवन को इनकी प्राप्ति के लिए लगा देता है। मूल्य ही जीवन को सार्थक बनाते है। मूल्य ही मनुश्य के मन में वि वास, श्रृद्धा, प्रेरणा, वफादारी, जिम्मेदारी तथा कर्त्तव्य भावना आदि उत्पन्न करते है। मनुष्य अपने जीवन दृष्टिकोण को मूल्य के आधार पर ही आधारित करता है। यदि जीवन में से ये मूल्य प्रेम, सुन्दरता, न्याय, सत्य तथा मित्रता आदि निकाल दे, तो वह एक निरर्थक कार्यचक्र बन जायेगा जिसको कोई भी जीना नही चाहेगा। मूल्य ही मनुष्य के जीवन को अर्थ, आकर्शण उच्चता तथा श्रेष्ठता प्रदान करते है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मानवीय मूल्यों की ओर बढ़ते कदम

शोधकत्री
पिंकी सांखला
पी.एच.डी. स्कॉलर
सुरेश ज्ञान विहार
युनिवर्सिटी जगतपुरा
जयपुर

शोध निर्देशिका
डा. भावना कुलश्रेष्ट
असिस्टेट प्रोफेसर
सुरेश ज्ञान विहार
युनिवर्सिटी जगतपुरा
जयपुर

मूलेन समो मूल्य

मूल के समान मूल्य– जीवन कभी मूल्यों के बिना नहीं रहता। संस्कृत सभी भाषाओं की जननी है। इसी में भारतीय संस्कार व मूल्य निहित है। संस्कृत भाषा के ज्ञान से ही भावी पीढ़ी वेदों को रामायण, महाभारत, श्रीमद् भगवत गीता को जान सकेगी और माननीय मूल्यों को सहज ही आगे बढ़ा पायेगें। मानव आदर्श तथा मानवीय जीवन दर्शन ही मानव मूल्य है। मानवीय मूल्यों से ही हमारे व्यक्तित्व का विकास होता है। मानवीय व्यवहार में मूल्य शब्द का अर्थ सहज जीवन शुद्ध आचरण आत्म संयम। इन्द्रिय निग्रह आत्म शुद्धि के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। प्रेम, अंहिसा, नैतिकता, शील सन्तोष, सत्य, लोक मंगल और लोक कल्याण की भावना भी मानवीय गुणों में ही सन्निहित है। इन्हीं गुणों से हमें शक्ति मिलती है। शक्ति का स्रोत होने के कारण हम सभी इन्हें मूल्य कहते है। मूल्य वास्तव में मानव बनने का सन्देश देते है। हमारी संस्कृति में वर्णित मानवीय मूल्य सनातन व सार्वभौम है। जिसके मौलिक सिद्धातों को अपनाकर समाज का, व्यक्ति का पूर्ण कल्याण हो सकेगा। तभी हम गर्व से कह सकते है विश्व के अन्य देश मानवों की जन्मभूमि है। परन्तु भारत मानवता की जन्मभूमि है। आज आवश्यकता इन्हीं मानवीय मूल्यों की ओर कदम बढ़ाने की है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शिशुपालवधम् महाकाव्य में वर्णित राज्य –प्रबन्धन

प्रीति शर्मा
शोधार्थी
म.द.स.वि.वि.,अजमेर

संस्कृत साहित्य की काव्य परम्परा में कवि माघ का स्थान बृहत्त्रयी में अद्वितीय है। कवि माघ ने अपनी रचना 'शिशुपालवधम्' महाकाव्य में राज्य प्रबन्धन को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। किसी भी राज्य के सम्यक् संचालन हेतू सुदृढ़ प्रबन्धन की आवश्यकता होती है। उचित शासन प्रबन्धन के लिए कवि ने राजधर्म के सप्तांगों (स्वामी–अमाव्य–जनपद–दुर्ग–कोश–दण्ड–मित्र) का विशेषतः विवेचन किया है।

1. स्वामी– राजा का कर्त्तव्य होता है कि वह प्रजा की भौतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के प्रयास करते हुए उनका सर्वांगीण विकास करे। राज्य प्रबन्धन में राजा एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में होता है। उसी के दिशा–निर्देशों से अन्य अंग संचालित होते हैं।

2. अमात्य – राज्य शासन–प्रबन्धन में अमात्य एक शक्तिशाली स्तम्भ के रूप में माना गया है। राज्य के हितार्थ अमात्य शासक को उचित परामर्श देने का कार्य करता है। मन्त्री ही शासाक को सन्धि, आक्रमण, नीतिचर्चा आदि हेतूत परामर्श प्रदान कर शत्रु से सावधान करता है। अमात्य ही राजा को बिना स्वार्थ के, प्राणों की परवाह किए बिना कटु सत्य से भी अवगत करवाता है।

3. जनपद – राज्य को एक लोककल्याणकारी संस्था माना गया है। राज्य प्रबन्धन हेतु इस संस्था के कतिपय दायित्व होते हैं यथा–प्रजा में सुखशान्ति स्थापित करना, रोगमुक्त रखना, आधार–भूत सुविधाओं की पूर्ति करना, शान्ति तथा सुरक्षा बनाए रखना आदि। एक सुव्यवस्थित राज्य में ही सुखी तथा समृद्ध प्रजा निवास कर सकती है।

4. राजा द्वारा अपने राज्य एवं प्रजा की सुरक्षा हेतु सुरक्षित और सुदृढ़ दुर्ग का निर्माण करवाया जाना चाहिए। कवि माघ ने पर्वतीय दुर्ग का उल्लेख करते हुए इसे सर्वोत्तम दुर्ग बताया है। सुरक्षात्मक दृष्टि से दुर्ग दुर्गम स्थान पर तथा सुविधाओं से युक्त होना चाहिए।

5. कोश – राज्य की सुख–समृद्धि के साधनों में कोश का अद्वितीय स्थान है। पर्याप्त कोश के अभाव में शासक राज्य की रक्षार्थ बृहद् सेना का प्रबन्ध नहीं कर सकेगा। परिणामस्वरूप राज्य का विकास बाधित होगा। उत्तम राज्य प्रबन्धन हेतु शासक को विभिन्न नीतियों द्वारा कोश–वृद्धि का प्रयास करना चाहिए।

6. दण्ड – श्रेष्ठ शासन–प्रबन्ध के लिए राजा द्वारा साम–दाम–भेद तथा दण्ड चार उपायों का प्रयोग किया जाता है। इनमें दण्ड का चतुर्थ तथा प्रमुख स्थान है।

7. मित्र – विपत्ति के समय पर ही सच्चे मित्र की पहचान होती है। अतः राज्य को सुरक्षित तथा संतुलित बनाए रखने में शासक को मित्रराष्ट्रों की महती आवश्यकता होती है।

निष्कर्षतः माधरचित 'शिशुपालवधम्' महाकाव्य राजधर्म द्वारा राजप्रबन्धन का उत्कृष्ट उदाहरण है। राजधर्म के सात अंगो के समन्वय से वर्तमान में भी राष्ट्र विकास की ओर उन्मुख हो सकता है । राष्ट्र का प्रमुख डांग स्वामी ही शेष छह अंगों की रक्षा तथा प्रबन्ध का कार्य करता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वाक्यार्थविज्ञान

प्रो. सुजाता त्रिपाठी
व्याकरणविभागाध्यक्षा,
श्री ला.ब.शा.रा.सं.विद्यापीठ,
नई दिल्ली– 110016

न सो{स्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते।

अनुवि(मिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते।।

शक्तियों का आश्रयभूत शब्द स्पफोटात्मक है। वह स्पफोट यद्यपि एक है और अखण्ड भी तथापि पद और वाक्य कहा जाता है। जिस प्रकार स्पफटिक भिन्न –भिन्न रंगों के सम्पर्क से भिन्न भिन्न रंगों का प्रतीत होता है। उसी प्रकार वर्ण आदि से प्रकाश्य स्पफोट वर्ण रूप, पद रूप एवं वाक्यरूप माना जाता है। अतः पद में न तो वर्ण होते हैं, न तो वर्णों में अवयव ही होते है और न ही वाक्य से पदों का कोई पार्थक्य ही सम्भव है।

आकाश एक है, पिफर भी उसके उपाधि अर्थात् घट आदि के चलते घटाकाश, महाकाश आदि भेद माने जाते हैं। उसी प्रकार स्पफोट में व्य जक ध्वनि के कत्व आदि के भान से ककार का बोध ' ऐसा भेद व्यवहार होता है। उपाधि बने घट एवं कत्व आदि तो भिन्न भिन्न होते हैं, लेकिन उपधेय अर्थात् उपाधि के व्यघङ्गभूत आकाश एवं स्पफोट आदि तो एक ही है।

शाब्दबोध में सहकारी कारण होते हैं – आकांक्षा, योग्यता, आसत्ति एवं तात्पर्य।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वृक्षायुर्वेद

राजतीलक शर्मा
शोधच्छात्र, ज्योतिष विभाग
ज.रा.रा.सं.वि.
जयपुर

वापी, कूप, तालाब आदि जलाशयों के प्रान्त छाया रहित हो तो सुन्दर नहीं लगते है, अतः जलाशयों के किनारे पर बगीचा अवश्य लगावे। सभी वृक्षों के लिए कोमल भूमि अच्छी होती है, तथा जिस भूमि में बगीचा लगाना हो उसमें पहले तिल बोवे, जब वे तिल फूल जाये तब उनकों उसी भूमि में मर्दन कर दे, यह भूमि संशोधन का पहला कर्म है।

बगीचें या घर के समीप में शुभ करने वाले नीम, अशोक, पुन्नाग, शिरीष, प्रियंगु इन वृक्षों को पहले लगावे। इसी का समर्थन करते हुए काश्यप ने कहा है

काश्यपमत –

अशोकचम्पकारिष्टपुन्नागाश्च प्रियङ्गवः।
शिरीषोदुम्बराः श्रेष्ठाः पारिजातकमेव च।।

कटहल, अशोक, केला, जामुन, बडहर, दाडिम, दाख, पालीवत, बिजौरा, अतिमुक्तक इन वृक्षों की शाखाओं को लेकर गोबर से लीपकर कटे हुए विजातीय वृक्ष की मूल या शाखा पर लगावें यह कलम लगाने का प्रकार है।

वृक्षरोपणकाल

कलमी से भिन्न वृक्षों को शिशिर ऋतु (माघ, फाल्गुन) में, कलमी वृक्षों को हेमन्त ऋतु (मार्गशीर्ष, पौष) में और लम्बी–लम्बी शाखा वाले वृक्षों को वर्षा ऋतु (श्रावण भाद्रपद) में लगावें।

वृक्षारोपण का नियम

घृत, खस, तिल, शहद, विडङ्ग, दूध, गोबर, इन सभी को पीसकर मूल से लेकर अग्रपर्यन्त लेपकर वृक्ष को एक स्थान से लेकर दूसरें स्थान पर लगावे।

वृक्षारोपण विधि

पवित्र होकर स्नानचन्दनादि से वृक्ष की पूजा करके दूसरे स्थान पर लगावें, इस तरह लगाने से वृक्ष सूखता नहीं है।

वृक्षों को सींचने का प्रकार

नवीन लगाये हुए वृक्षों को ग्रीष्म ऋतु में सांझ–सवेरे शीतकाल में एक दिन बाद और वर्षा ऋतु में भूमि सूखने पर सीचना चाहिये।

वृक्ष लगाने का क्रम

एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष की दूरी बीस हाथ पर हो यह दूरीगत स्थान उत्तम, सोलह हाथ पर मध्यम और बारह हाथ पर लगाना अधम कहलाता है।

वृक्षों के सुफलित नहीं होने के कारण

यदि एक वृक्ष दूसरे वृक्ष के समीप हो परस्पर स्पर्श करता हो या दोनों की जड़े इकट्ठी हो तो वृक्ष पीड़ित होते है और अच्छी तरह फल नहीं देते हैं।

वृक्षों में रोगोत्पत्ति का कारण

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अधिक शीत, वायु और धूप लगने से वृक्षों को रोग हो जाता है। रोगी वृक्षों के पत्ते पीले पड़ जाते हैं। अंकुर नहीं बढ़ते, डालियाँ सूख जाती है और रस टपकने लगता हैं। वृक्ष की वृद्धि रुक जाती है। वृक्ष का जो अङ्ग पूर्वोक्त विकार युक्त हो उसको शस्त्र से काटकर अलग कर देवें। फिर वायविडंग, घृत और पङ्क को मिलाकर वृक्षों पर लेप करें, बाद में दुग्ध मिश्रित जल से सींचे।

फल नाश की चिकित्सा

वृक्ष में फल नहीं लगते हो तो कुलथी, उड़द, मूँग, तिल, जौ इन सभी को दूध में डालकर औटावें, बाद में उस दूध को ठंडा करके वृक्षों को सींचे।

वृक्ष रोपने के नक्षत्र

तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, मूल, विशाखा, पुष्य, श्रवण अश्विनी, हस्त ये नक्षत्र दिव्य दृष्टिवाले मुनियों ने वृक्ष रोपने के लिए उत्तम कहे हैं।

वास्तु राज वल्लमे ग्राह्यवृक्ष

दूध वाले वृक्ष, काँटे वाले वृक्ष घर के समीप अच्छे नहीं होते, भले ही वे फल वाले क्यों न हों उनकी नहीं लगाना चाहिए। चम्पा, गुलाब, केला, जाती, केवड़ा ये शुभ होते है, एक पहर दिन के बाद घर केऊपर यदि किसी वृक्ष की छाया पड़ती हो तो वह शुभ नहीं होती है।

वास्तुप्रदीप में विशेष विचार

दूध वाले वृक्ष, बरगद, पीपल, लालपुष्प वाला वृक्ष, कांटे वाले वृक्ष सेमल, पाकड़, गूलर ये वृक्ष अग्निकोण में अशुभ होते ह तथा। ये पीड़ा तथा मृत्यु कारक भी होते हैं। पुन्नाग, फलवाला वृक्ष, नीम, अनार, अशोक, जाती, नागकेशर, केसर, जयन्ती, चन्दन, बचा, अपराजिता, बेल, आग, दालचीनी, नागर, नारियल ये वृक्ष किसी भी दिशा में लगा सकते है।

वृक्षारोपण से स्वर्ण प्राप्ति

वृक्षारोपण का शास्त्रों में अनेक प्रकार का फल वर्णित है जैसा कि बृहद्वास्तुमाला में कहा गया है

अश्वत्थमेकं पिचुमन्दमेकं, न्याग्रोधमेकं दशचिञ्चिणीकम्।
कपित्थबिल्वामलकत्रयञ्च पञ्चाम्रवापी नरकं न पश्येत्।।

एक वृक्ष पीपल, एक नीम, एक बरगद, दस इमली, कैथ, बेल, आँवला तीन और पाँच आम के वृक्ष रोपने वालो व्यक्ति पुण्यात्मा होता हैं, अत एव उसको नरक के दर्शन नहीं होते है।

दिशा क्रम से वृक्षारोपण

ईशान कोण में आँवला, नैर्ऋत्यकोण में इमली, अग्निकोण में अनार, वायव्य कोण में बेल के वृक्ष लगाने चाहिये। उत्तर में पाकड़, पूर्व में बरगद, दक्षिण में गूलर, पश्चिम में पीपल और बीच में अनेक जाति के आम के वृक्षों को लगाना चाहिए।

लतादि रोपण मन्त्र

ॐ वसुधेति च सीतेति, पुण्यदेति धरेति च।
नमस्ते शुभगे देवि, द्रुमोऽयं वर्द्धतामिति।।

पूर्वोक्त मन्त्र से पूजा आदि कार्य करके वृक्षा रोपण करना चाहिए।

पद्मपुराणानुसार वृक्षारोपणविधि

पद्मपुराण के अनुसार पौधों को सर्वौषधि मिश्रित जल से सींचे। फिर उनके ऊपर दही और अक्षत छोडे व पूजा करके रोप देवे। होम में पलाश की लकड़ी उत्तम मानी गयी है। वृक्षा रोपण के प्श्चात् चौथे दिन विशेष उत्सव करें।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्राचीन भारतीय संस्कृति के संदर्भ में मूल्यपरक शिक्षा

डॉ0 राकेश कुमार चौबे
प्राचार्य
ओम शिव महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय दौसा

वैदिक परम्परा में शिक्षा के स्वरूप का विवेचन करते हुए कहा गया हैं **"विद्यास्ति–ज्ञान–विज्ञानदर्शनःसंस्क्रियात्मनि'** अर्थात ज्ञान–विज्ञान एवं दर्शन शास्त्रों द्वारा आत्मा में एक विशेष प्रकार के संस्कार का आधान करना हि शिक्षा हैं। **'ज्ञानाधिकरणमात्मा'** के अनुसार आत्मा ही ज्ञान का अधिकरण है, अतः उसकी सर्वात्मना संस्क्रिया हि शिक्षा का फल है। इस प्रकार यथाजात अप्रबुद्ध, असंस्कृत, अविकसित एवं अज्ञान रोग ग्रस्त मानव को प्रबुद्ध एवं सुसंस्कृत कर सर्वांश में नीरोग बनाते हुए सर्वतोमुखी विकास के पथ पर अग्रसर करना ही शिक्षा की फलवत्ता हैं। यहां मानव का अर्थ केवल पांचभौतिक शरीर मात्र न होकर शरीर, मन, बुद्धि एवं आत्मा की चतुःपर्वा समष्टि है। वैदिक ऋषियों की **'विद्ययाऽमृतमश्नुते'** तथा **'साविद्या या विमुक्तये'** जैसी प्रयोजननिष्ठ उद्घोषणाएं भी इसी सिद्धांत को पुष्ट करती है। अतः ज्ञान–विज्ञान–दर्शननिष्ठ आत्मसंस्क्रियां से चतुःपर्वा मानव को पूर्णतया विकार शून्य स्वस्थ, उन्नत एवं सुसंस्कृत बनाना शिक्षा का प्रयोजन है। वस्तुतः आज अधिकाधिक आर्थिक पैकेज प्राप्त करना मात्र ही शिक्षा का उद्देश्य रह गया है, न कि चतुःपर्वा मानव का सर्वांगीण विकास।

'शिक्षा विद्योपादाने' धातु से अ प्रत्यय लगाकर स्त्रीत्व विवक्षा में टाप् प्रत्यय होकर शिक्षा शब्द निष्पन्न होता है। **'शिक्ष्यते विद्योपादीयते अनयेति शिक्षा'** अर्थात् प्राणी जिस साधन प्रणाली से ज्ञान उपार्जित करता हैं उसी का नाम शिक्षा है। आदि शंकराचार्य के अनुसार किसी भी प्रकार की प्रवृति में प्रयोजक तत्वों के इष्ट साधन के ज्ञान या प्रयत्न को शिक्षा या शिक्षण कहते हैं–

विभिन्नप्रवृत्तिप्रयोजकेष्टसाधनताज्ञानाख्यः
शिक्षायाः प्रयत्नः शिक्षणं कथ्यते।

शिक्षा का उद्देश्य गहन चिन्तन क्षमता का विकास एवं उच्च सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण है जिससे सुन्दर भविष्य का निर्माण किया जा सके । शिक्षा का ध्येय है कि वह ऐसा अनुशासन प्रदान करे जो व्यक्ति को जीवन की व्यावहारिक समस्याओं से जूझने की शक्ति प्रदान करें और आत्मविश्वास जगाये जिससे जटिल चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों का भी सरलता पूर्वक सामना किया जा सके।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मानवीय मूल्य

डॉ. रतन कुमार भारद्वाज,
प्रोफेसर,
संजय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, जयपुर

भारतीय संस्कृति वि व की प्राचीनतम संस्कृति है। इस प्राचीन संस्कृति में संस्कृत साहित्य का विशिष्ट योगदान रहा है। हमारे राष्ट्र की समृद्धशाली परम्पराओं में हमारे धर्मग्रन्थ हमें कत्तव्यों की ओर प्रेरित करते हैं। विभिन्न संस्कृतियों एवं वि व ज्ञान में सर्वश्रेष्ठ भारतीय चिन्तन हमें उच्च मानवीय मूल्यों, चरित्र, आचरण एवं व्यवहार का ज्ञान प्रदान करता है। मूल्य भाब्द अंग्रेजी के "वैल्यू" भाब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। इसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'वोलियर' शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है योग्यता, महत्त्व।
मूल्य की वर्तमान स्थिति एवं सुधार के उपाय :– आज सम्पूर्ण विश्व में मानव मूल्यों में दिन–प्रतिदिन गिरावट होती जा रही है। यदि यही स्थिति रही तो आने वाले समय में मूल्यों का नामोनिशान ही मिट जायेगा। हमें इस पर अर्थात् मूल्यों के संरक्षण पर ध्यान देना चाहिए। क्या कभी किसी ने विचार किया कि क्या कारण है, मूल्यों में गिरावट का? मेरा विचार है कि मूल्यों में गिरावट का मुख्य कारण है उदासीनता। अर्थात् आज शिक्षक, अभिभावक व समाज के लोग सभी बालकों के व्यवहार के प्रति उदासीन है। जब बालक गलत व्यवहार करता है तो शिक्षक माता–पिता व समाज के लोग कोई प्रतिक्रिया नहीं करते। तो बालक में सुधार कैसे होगा? अतः इसके लिए शिक्षक, माता–पिता व सम्पूर्ण समाज जिम्मेदार है। यदि हमें मूल्यों को पुनः जीवित करना है तो शिक्षक, अभिभावक व सम्पूर्ण समाज को बालक के व्यवहार के प्रति उदासीनता का त्याग करना होगा व ऐसा करने पर बालक को अपने आप में सुधार का मौका मिलेगा। इससे निश्चित रूप से मूल्यों के गिरते स्तर को रोका जा सकता है।

शिक्षक को अपने शिक्षक उद्देश्यों में व्यवहारगत परिवर्तन पर भी ध्यान देना होगा। आज का शिक्षक पाठ पढ़ा कर उसके उद्देश्यों को व पाठ के पढ़ाने के बाद बालक के व्यवहार में क्या परिवर्तन होगा, इसको भूलता जा रहा है। अतः शिक्षकों को भी सजग होते हुए पढ़ाये गए पाठ के उद्देश्यों के व्यवहारगत परिवर्तन पर ध्यान देना होगा। ऐसा करने पर मेरा मानना है निश्चित रूप से सम्पूर्ण समाज में मूल्यों के गिरते स्तर को रोका जा सकता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

।। संस्कृत नाटकों में विवेचित मानव–मूल्य ।।

हंसराज मीना
शोधसंस्थान–संस्कृत–विभाग
सनातनधर्म राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ब्यावर(राज.)

मूल्यों की गणना मानव मूल प्रवृत्तियों या भावनाओं के आधार पर की जाती है। मूल्य मनुश्य की आव यकताओं को तृप्त करते है। मनुश्य की मूल प्रवृत्तियाँ या भावनाएँ उसकी आव यकाएँ है। अतः इन आव यकताओं को सन्तुश्ट करने के कारण मूल्यों का इनसे सम्बन्ध होना सहज स्वाभाविक है। समूह में रहने की प्रवृत्ति पारिवारिक मूल्य है। फिर सहानुभूति, आत्म–प्रकाशन, आत्म–धिक्कार तथा युयुत्सा से सम्बन्धित चारित्रिक मूल्य है। इन्हीं प्रवृत्तियों के समुचित विकास से चरित्र का निर्माण होता है। पारिवारिक अथवा संगठन मूल्य तथा चारित्रिक मूल्य को सामाजिक मूल्य कहा जाता है। सामाजिक मूल्य अति जैविक है। सामाजिक मूल्य आमतौर पर हमें यह बतलाते है कि क्या सही है, क्या करने योग्य है तथा क्या अच्छा है। प्रत्येक व्यक्ति के मूल्य उसकी अपनी संस्कृति से प्रभावित होते है तथा जिस समाज में वह रहता है उसकी पसन्द को सामने रखते है। इस प्रकार सामाजिक मूल्य वे मान लक्ष्य अथवा आदर्श है जिसके आधार पर विभिन्न मानवीय परिस्थितियों तथा विशयों का मूल्यांकन किया जाता है।

संस्कृत नाटकों के अनुसार प्राचीन समाज–व्यवस्था के परिवार को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है– राज परिवार एवं सामान्य परिवार। परिवार निर्माण के मूल में भारतीय संस्कृति की समन्वय भावना ही क्रिया ील है। विवाह से पारिवारिक बंधन उत्पन्न होते है। परिवार निर्माण में पुरुश और स्त्री का योगदान समान होता है। भास, भवभूति के नाटकों में संयुक्त परिवार प्रथा प्रचलित थी। संयुक्त परिवार की आधार शिला पारस्परिक प्रेम एवं सहयोग की भावना थी। परिवार के समस्त सदस्य सम्मलित रूप से रहते थे और प्रेम और सहयोग से जीवन–यापन करते थे। उनमें अहं भाव या स्वार्थ ले मात्र भी नहीं होता था। परिवार के प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तित्व त्यागमय एवं तपोमय होता था। एक सदस्य दूसरे सदस्य की रक्षा के लिए अपने प्राणों तक का बलिदान करने को उद्यत रहता है। ऋग्वेद में संयुक्त परिवार के मर्म को इस प्रकार बतलाया है–

"संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसिजानताम्।"

(ऋग्वेद– 10 / 191–192)

इस प्रकार संस्कृत नाटकों में सामाजिक एवं पारिवारिक जीवनमूल्यों की छटा दर्शनीय है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

''ऋग्वेद में वर्णित राष्ट्रीय एकता की उपादेयता''

डॉ0 पूनम
संस्कृत विभाग
डी.ए.वी. (पी.जी.) कॉलेज, बुलन्दशहर

वर्तमान समय में देश की एकता और अखण्डता कैसे बनी रहे, यह बहुत बड़ा यक्ष प्रश्न है। वस्तुतः राष्ट्र के सुदृढ़ अस्तित्व का आधार राष्ट्रीय एकता ही है और राष्ट्रीय एकता पर ही राष्ट्र की अखण्डता निर्भर करती है। अथाह–ज्ञान का भण्डार वैदिक वाड.मय राष्ट्रीय एकता की भावना से आप्लावित है। सहस्त्राब्दियों पूर्व उद्भूत होते हुए भी, वैदिक ऋशियों की राष्ट्रीय एकता के विषय में दिव्यदृष्टि तथा उनके निर्देश व सन्देश आज भी यथापूर्व ग्राह्य एवं लाभप्रद हैं। न केवल लाभप्रद अपितु वर्तमान दिग्भ्रमित युवाओं के लिए अपरिहार्य हैं।

राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता किसी भी राष्ट्र का मूल आधार है। इसके बिना राष्ट्र का सर्वागीण विकास सम्भव नहीं है। राष्ट्रीय एकता के सन्दर्भ में वेदों का स्पष्ट निर्देश है कि हम सभी का लक्ष्य, कार्य व हृदय समान हों, हम सब मिलकर राष्ट्र के कल्याणकारी कार्यों में लगें–

'संगच्छध्वम् , संवद्ध्वम् सं वा मनांसि जानताम्।

देवाभागं यथापूर्वे संजानाना उपासते।। (ऋग्वेद 10/191/2)

निस्सन्देह, परस्पर मिलकर राष्ट्रीय कार्यों को करते हुए ही लोक कल्याण सम्भव है। पारस्परिक राग–द्वेश, ईर्श्या–कलह आदि से राष्ट्र विखण्डित होता है। अतः वेद हमें सावधान करते हुए कहता है कि हम परस्पर द्वेष न करें, परस्पर मिलकर राष्ट्र के कार्यों में संलग्न होवे –

उद्बुध्यध्वं समनसः सखाय समग्निमिन्ध्वं बहवः सनीलाः। ऋग्वेद 10–101–1

पारस्परिक–प्रेम को राष्ट्रीय एकता का मूल माना गया है। यही 'मानव धर्म' है–

''विश्वदानी सुमनसः स्याम्।'' ऋग्वेद 6–52–5

राष्ट्रीय एकता से राश्ट्र के समस्त वासियों में 'हम' की भावना का बोध होता है। 'हम' की भावना से तात्पर्य है राश्ट्रहित के समक्ष अपने वैयक्तिक हितों का त्याग करने में तनिक भी संकोच न करना। यही 'हम' की भावना राश्ट्रीय एकता कहलाती है। राश्ट्रीय एकता राश्ट्र का प्राण तत्व होता है। अतः राष्ट्र के अस्तित्व को बनाये रखने हेतु राष्ट्रीय एकता का होना अत्यन्त आव यक है। राश्ट्रीय एकता के द्वारा ही हम स्वयं को तथा अपने राश्ट को सुरक्षित कर सकते हैं।

अतः प्रत्येक राश्ट्रवासी का कर्त्तव्य है कि वह राष्ट्रीय एकता में बाधक तत्वों का निवारण करें और उसे नन्हें पौधे के समान सींचकर उसको पुश्पित तथा फलित वृक्ष के समान तैयार कर अपने कर्त्तव्यों का पालन करें, तभी राष्ट्र सदैव अखण्ड, उन्नतिशील, समृद्धिवान, प्रभुत्व सम्पन्न हो विश्वगुरू बन सकेगा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

साहित्य में समायें जीवन मूल्य

शिखर चन्द्र जैन

हमारे भारतीय साहित्य और संस्कृति आचरणात्मक एवं आदर्शपूर्ण जीवन मूल्यों के लिये एक अद्‌भुद सामजिक जीवन में अपनी असीम गरिमा और अखण्ड प्रसांगिकता को चरितार्थ करते आ रहे है। हमारे ऋशियों मुनियों एवं विद्वानों रचित वेद साहित्य धरती पर प्राचीन काल से ही मानव के जीवन मूल्यों की एक सृदृढ आधारि ाला का आरम्भ कर चुके है जिसके द्वारा हमारी भारतीय संस्कृति अपनी पूर्ण गरिमा के साथ खडी है। एवं भारत के बाहर वि व के अन्य देशों में अपनी एक अलग और विशिष्ट पहचाान स्थापित कर रही है। मानव को जब अपनी अस्मिता का ज्ञान हुआ होगा कदाचित तभी उसने अपने मूल्यों का निर्माण एवं अपनाने के बारे में सांचा होगा। हमारे चारों वेद अर्थववेद, ऋग्वेद, यर्जुवेद, सामवेद एवं एक सौ आठ उपनिशद् मनुश्य को अपने गंतव्य की ओर तत्परता से आगे बढ़ने एवं कर्तव्यनिष्ठ कार्यशील होने की प्रेरणा देते है। इसलिए ये कहना कदाचित गलत ना होगा मानव के लिये आचरणात्मक और अनाचरणीय जैसे सभी तत्वों का भारतीय साहित्य में विस्तार से वि लेशण किया है जिसे हम आज जीवन मूल्यों की संज्ञा देते है।

हमारे प्राचीन भारतीय साहित्य में मानव जीवन की उत्कृष्टता को इंगित किया गया है। क्योंकि चौरासी लाख योनियों में मानव जन्म को अत्यन्त उत्कृष्ट सिद्ध किया है। और मानव जीवन की उत्कृश्टता उपनिशदों के अनुसार ज्ञान से हैं अर्थात ज्ञान का विकास मानव जीवन को सार्थक बनाने हेतु मूल्यों के रूप में होता है। अतः स्पश्ट है कि ज्ञानाधारित आचरण तत्वों का समाहार रूप ही मूल्य है। उपनिषदों में दिशाविहीन मनुष्य की तुलना पशु से की गयी है। इसलिए हम सदैव मानव जीवन मूल्य या मानव मूल्य की बात करते हैं न कि पशु मूल्य। हमारे वाङग्मय में कहा भी गया है।

आहार निद्रा भय मैथुनादि
सामान्यमेतत् पशुभिः नराणां।
ज्ञानम् नराणां अधिकम् विशेषः
ज्ञानेन शून्यः पशुभिः समानः।।

पुरातन काल से ही अर्थ प्रधान युग में मूल्य भाब्द का प्रयोग अनेक अर्थो में किया जा रहा है। जैसे दाम, कीमत, भाव आदि जिसे कि हम केवल वस्तु के लेन देन में ही प्रयुक्त करते है। और इनका हमारे आचरणात्मक जीवन मूल्यों से कोई से संबन्ध नही है। मानव जीवन को उसके आरम्भ से अंत तक ले जाने वाले आचरणीय सूत्रों के समाहार रूप को ही मानव का जीवन–मूल्य काह गया है। जिसके अन्तर्गत धर्माचरण, सत्य वचन, परोपकार, दानशीलता, निष्काम सेवा त्याग, शांति, अंहिसा, सौहार्द भावना इत्यादि सम्मिलित होतें है। इन सभी मानवीय जीवन मूल्यों में उत्कृशटता हेतु सम्पूर्ण वेद साहित्या का आरम्भ भाताब्दियों पहले हुआ। सूर्योदय में नेत्रोंन्मीलन से आरम्भ मनुश्य जीवन यात्रा में इन जीवन मूल्यों को अपनाने की अनिवार्यता का वर्णन भारतीय वेद साहित्य ने फल श्रुति सहित कियसा है। इसके बिना जीवन दिशाहीन एवं निस्सार हो जाता है। परन्तु हमारे दूरदृष्टा ऋषियों मुनियों ने शताब्दियों पूर्व ही हमारे जीवन में इनकी अनिवार्यता एवं प्रासंगिकता के महत्व को पहचानकर इन्हें तत्कालीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम में सम्मिलित ही नही किया अपितु इनको आचरण में अपनाने पर भी अधिक बल दिया।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतसाहित्य में मित्रामित्रविवेचना

डॉ. मधुबाला शर्मा
सहायक आचार्य, साहित्य विभाग
जरारासंविवि, जयपुर

मित्र और शत्रु जीवन में सुख–दुख, प्रसन्नता–अप्रसन्नता, उन्नति–अवनति के केन्द्रबिन्दु होते हैं। जिनका सहगामी होकर मानव उन्नति या अवनति को प्राप्त करता है। यथा कृष्णसम सखा प्राप्त कर अर्जुन ने धर्ममार्ग का अनुसरण किया, वहीं मित्रता के सूत्र में बंधे कर्ण ने अधर्म की ओर उन्मुख हो प्रणोत्सर्ग कर दिया।

अतः जीवन में स्वानुकूल मित्र आवश्यक है। मित्रयुक्त मनुष्य अत्यन्त दुष्कर कार्यों को भी सिद्ध कर लेता है। जैसा कि पंचतन्त्र में वर्णित है –

मित्रवान्साधयत्यर्थान्दुःसाधनपि वै यतः।

तस्मान्मित्राणि कुर्वीत समानान्वेव चाऽऽत्मनः।। (पंचतन्त्र मित्रभेद – 28)

मित्र जीवन में आनन्द का संचार करता जब कि अमित्र प्रतिपद पर क्लेश प्रदान करता है। महाकवि माघ का मत है कि एक भी शत्रु होने पर मनुष्य सुखी नहीं रह सकता जैसा कि कहा गया है –

म्रियते यावदेकोऽपि रिपुस्तावत् कुतः सुखम्।

पुरः क्लिश्नाति सोमं हि सैहिकेयोऽसुर द्रुहाम्।। (शिशुपालवध महाकाव्य 2/35)

इस प्रकार जीवन में मित्र और अमित्र दोनों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

संस्कृत साहित्य के अनेक श्लोकों, प्रसंगो कथानकों, में मित्रामित्र का विवेचन मिलता है, जिनमें सखा और शत्रु को परिभाषित किया गया है।

आदिकाव्य से आधुनिक काव्य पर्यन्त मित्रामित्र सम्बद्ध अनेक उद्धरण दृष्टिगोचर होते हैं। किन्तु विचारणीय है कि पुरातन मित्रता या शत्रुता के मायने आधुनिक काल में भी प्रभावी हैं या नहीं। वस्तुतः वर्तमान में भावपूर्ण मित्रता या सिद्धान्तयुक्त शत्रुता का दर्शन नहीं होता है। कदाचित् युगपरिवर्तन के साथ ही मानसिक भावों का भी स्खलन हो गया है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नैतिक विकास एवं अध्यापक शिक्षा

सरोज महरिया
शोधार्थी
जगदगुरू रामानंदाचार्य
राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय जयपुर ,राज0

सारांश

शिक्षा एक व्यापक और जन्म से मृत्यु तक चलने वाली प्रक्रिया है । यह एक ऐसी प्रक्रिया है , जिसमें बालक में निहित आन्तरिक क्षमताओं का विकास समग्र रूप से करने के साथ ही वैयक्तिक , सामाजिक तथा राष्ट्रीय संदर्भ में उपयोगी तथा संसाधन सम्पन्न व्यक्तित्व के निर्माण के लिए प्रयत्न किया जाता है । यह कार्य शिक्षक के माध्यम से सम्पादित होता है , और शिक्षक बालक के सर्वागीण विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान देता है । इस कारण शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु अध्यापक शिक्षा की व्यवस्था की गई है, जहां न केवल शिक्षा के सैद्वान्तिक ज्ञान जैसे दर्शन , मनोविज्ञान , शिक्ष तकीनीकी , विद्यालय प्रबन्ध आदि वरन् प्रायोगिक ज्ञान वास्तविक कक्षा शिक्षण का अभ्यास करवाया जाता है ।

शिक्षकों के बालक के विकास क्रम की समझ के साथ –साथ बालकों में प्रत्ययों का भी विकास होता है । इसका भी सैद्वान्तिक ज्ञान प्रशिक्षण के दौरान दिया जाता है । शिक्ष अध्यापक एवं स्वंय आर्दश व्यवहार के माध्यम से बालको में नैतिक प्रत्ययों के विकास में सहायक है। बालक जिन भौतिक धारणाओं को अपने दैनिक जीवनमें अनुभव के आधार पर स्वीकार करते है । इससे उनका नैतिक प्रत्ययात्मक विकास होता है जो सामाजिक व्यवहार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान रखता है । जैसें झूठ न बोलना, चोरी न करना , बड़ों का आदर करना आदि । इसी से बालक का चारित्रिक विकास होता है । इसके लिये मेरा मानना है कि उपर्युक्त विधियों के साथ साथ सहक्रियात्मक मूल्यों की शिक्षा हेतु भारतीय धर्म –दर्शन के आदेशों , उपदेशों एवं निर्देशों को जीवन –दर्शन के रूप में स्वीकार करने से ही आज के वैश्विक परिप्रेक्ष्यानुरूप मूल्यवान नैतिक व्यक्तित्व सृजित किये जा सकते है । उक्त नैतिक विकास से सम्बन्धित आदेशों , उपदेशों तथा निर्देशों से संपूर्ण संस्कृत वाड्मय औत प्रौत है आवश्यकता इस बात की है कि ऐसे विशिष्ट सम्मेलनों एवं परिचर्चाओं के माध्यम से वर्तमान वैश्विक परिपेक्ष्य हेतु उपयोगी संस्कृत वाड्मय निहित नैथ्तक विज्ञान को शिक्षा के माध्यम से जनसामान्यता तक पहुँचाया जाए ।

संदर्भ गंथ सूची :–

1. जी.सी भटटाचार्य (2009) अध्यापक शिक्षा अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा –2 पृ.स. 13 , 66–67
2. जे.सी. अग्रवाल (2010 / 2011) 21 वी शताब्दी के संदर्भमें माध्यमिक शिक्षा पर दृष्टिकोण, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा –2 पृ.स. 312–327
3. जयसवाल सीताराम (1975) , शिक्षा मनोविज्ञान प्रकाशन केन्द्र न्यू बिल्डिंग अमीनाबाद , लखनऊ पृ.स. 358–367

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भारतीय प्राचीन अभिलेखों में नैतिक मूल्य

डॉ वीरचन्द्र जैन
म.म. लता संस्कृत विद्यापीठ, लोहना
कमेश्वर सिंह संस्कृत विश्वविद्यालय,
दरभंगा (बिहार)

भारतीय संस्कृति में मानव मूल्यों व नैतिक मूल्यों का व्यवहारिक जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। मानव मूल्य एक धारणा है जिसका संबंध मानव के द्वारा निर्मित मूल्यों पर रहा है। मानव मूल्य मानव जीवन के व्यवहारिक पक्ष की कसौटी माना जाता है। मानव जीवन प्रत्येक पल व्यवहार के मूल्यांकन से अनुप्राणित है। मानव मूल्य हमारे आसपास के सामाजिक आर्थिक परिवेश और समाज से उपजे हैं।

प्राचीन भारतीय परम्परा में मानवीय मूल्य ईमानदारी, आध्यत्मवादी, धर्मप्रदान और भाववादी ही है। प्राचीन संस्कृत एवं प्राकृत भाशा के साहित्य को जब हम पढते है या अनुभव करते है। तो हमारी प्राचीन परम्परा व संस्कृत का ज्ञान हमें स्वतः ही प्राप्त होता है। हमारा जीवन संस्कारित हो इसके लिए वेद, उपनिशद्, पुराण, आगम व अन्य साहित्य है जिससे हम अपनी संस्कृति को संस्कारित कर जीवन में सुख की अनुभूति कर सकते है। आज भारतीय समाज नैतिक मूल्यों से व्यछिन्न होती जा रही है। उस व्यच्छिन्न संस्कृति को पुनः संस्कारित करने के लिए प्राचीन अभिलेखों के माध्यम से वस्तुस्थिति का ज्ञान कराने का प्रयास इस आलेख में किया जायेगा।

नैतिक–मूल्य से अभिप्राय वैसे गुणों से है, जो मानव को आदर्श अथवा उच्च बनाते हैं, सृश्टि में उसकी उपयोगिता बढाते है और आनन्द, सुख तथा खुशी आदि के वातावरण का निर्माण करते हैं। यद्यपि प्राकृत अभिलेखों का उद्दे य राजाज्ञा प्रचारित करना ही है, तथापि उस राजाज्ञा का अभिप्राय उच्चतर सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों की प्रतिश्ठा करना और समाज में सु ाासन, भाान्ति, समृद्धि और आनन्द के वातावरण का निर्माण करना भी है। इन अभिलेखों में अपासिनवे (पापों से दूर रहना), बहुकयाने (अनेक कल्याणकारी कार्य करना), दया, दान, सदाचार, परोपकारवृत्ति, सत्यनिश्ठा, अहिंसा, आत्मसंयम, धर्मानुराग, त्यागवृत्ति, समानता, समता, करूणा, क्षमाभाव, शुश्रुशा आदि नैतिक मूल्यों की व्यापक आव यकता एवं महत्ता पर प्रकाश डाला गया है, जिनसे मनुश्यों को अहिंसा, त्याग, सदाचार और व्रताचार की सत्प्रेरणा प्राप्त होती है। इस प्रकार प्राचीन भारतीय अभिलेखों का मानव जीवन में नैतिक रूप से व्यवहार किया जाता है, और किया जाता रहेगा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मानवीय मूल्य : वैदिक पृष्ठ भूमि

विजय सिंह सैनी
(शोध – छात्र)
संस्कृत – विभाग
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय
उदयपुर (राज.)

संस्कृत वाड्.मय स्थूल रूप में दो भागों में विभक्त है – वैदिक वाड्.मय और लौकिक या शास्त्रीय वाड्.मय। संस्कृत साहित्य में नीति चिन्तन विस्तार पूर्वक कवियों, नाटककारों और गद्यकारों ने प्रस्तुत किया हैं। लौकिक संस्कृत साहित्य में चाणक्य नीतिदर्पण, पंचतंत्रम्, हितापदेश जैसे – कुछ ग्रन्थों के नाम नीतिशास्त्रीय विमर्श के लिए पूरे विश्व में विख्यात हैं। वस्तुतः **"नीति"** शब्द **'नी'** धातु से निष्पन्न है जिसका अर्थ है – ले जाना नीति शब्द अत्यन्त व्यापक है जिसकी परिधि में समस्त मानवीय और सामाजिक व्यवहार सिमट जाता है। जीवन कैसे जीये, एक सुन्दर मानव का निर्माण कैसे हो, समाज में सोहाद्र किस तरह स्थापित रहें और राष्ट्र किस पथ से चल कर विकासोन्मुख रहे – ये सारे प्रश्न नीतिशास्त्रीय ग्रन्थों को एक सुदीर्घ एवं समृद्ध पृष्ठ भूमि के रूप में वैदिक ऋषियों के आप्त वाक्य अशीर्वाद रूप में प्राप्त है।

सम्प्रति समस्त विश्व में घृणा, पारस्परिक, विद्वेष, जातीय और साम्प्रदायिक वैमनस्य, भय और गला काट प्रतिस्पर्धा का जो परिदृश्य दृष्टिगोचर होता है। वह अत्यन्त निराशा जनक और भयोत्पादक है। ऐसे में हमें वेद का संगठन वाक्य अनायास स्मरण हो आता है।

"सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्" ।।

(ऋक्. 10/191/2)

"समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।"
(ऋक्. 10/191/4)

इस प्रकार प्रस्तुत मंत्र समग्र विश्व को सन्मति एवं सौहार्द का शाश्वत संदेश प्रदान करता है। वैदिक वाड्.मय में एक सुन्दर मानव और संगठित समृद्ध समाज निर्मित करने के सूत्र वाक्य सर्वत्र विन्यस्त है जिन्हें जीवन में उतारने की महतीय आवश्यकता है। वैदिक, नैतिम, उपदेश वाक्यों का एक हृदयहारी संश्लेषणात्मक विवरण नीतिमंजरी नामक ग्रंथ में उपलब्ध है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

साइबर ठगी

शुभम शर्मा
जयपुर

वर्चुअल नंबरो का उपयोग कर होती साइबर ठगी–:

अलग अलग तरीके से लोगो को इंटरनेट पर ठगने के बाद अब हैकर्स ने नया तरीका खोज निकाला है। ये लोग इंटरनेट टेलीफोन (वॉयप) का उपयोग कर पाकिस्तान या अमरीका जैसे देशों के वर्चुअल नंबरो से लोगों को लॉटरी लगने का झांसा दे ठगते है। इसके लिए पहले बल्क एसएमएस के जरिए लोगों को लॉटरी लगने का मैसेज भेजते है। रकम ट्रांसफर के लिए वाट्सऐप पर खाते की जानकारी ले लेते है। अकांउट की पुष्टि के लिए ओटीपी मांगते हैं अमरीका या पाकिस्तान के नंम्बरो से आए कॉल पर लोग विश्वास कर ओटीपी दे देते है और ठगे जाते है।

क्या होती है वॉइप कॉलिंग–:

साइबर सुरक्षा मे वॉइप कॉलिंग यानी वॉइस ओवर इंटरनेट प्रोटोकाल(VOICE OVER INTERNET PROTOCOL) एक ऐसी तकनीक है जिसके माध्यम से इंटरनेट के द्वारा ट्रेडिशनल फोन नेटर्वक पर कॉल की जाती है। इस तकनीक के माध्यम से व्यक्ति अपने कंम्प्यूटर से किसी भी मोबाइल या टेलीफोन पर सीधे फोन कर सकता है। ठगी के केस में साइबर अपराधी विदेश के वर्चुअल नंम्बर का वॉइप सर्विस के साथ उपयोग करते है। जिससे वे ट्रेस ना हो सकें। इससे बचने के लिए बाहर से आए अंजान नम्बर को ना उठाएं और ना ही वापस से उस नम्बर पर कॉल करें। कुछ लोग बिना मतलब की एप्स को डॉउनलोड करते है। वह एप्स सिक्योर नही होती है।जिसके जरिए भी लोग अपनी पर्सनल डिटेल शेयर कर बैठते है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मानवीय मूल्य व नीतितत्त्व

सोनू सोनी,
मदस विश्वविद्यालय, अजमेर

"णीञ् प्रापणे" धातु कृदन्त में क्तिन् प्रत्यय करने से "नीति" शब्द बनता है पुनः नीतेः अयं अथवा नीतेः जातः अर्थ में ठक् प्रत्यय करने पर नैतिक शब्द निष्पन्न होता है जिसका अर्थ है कि नीति से युक्त हो और नित्य हो वह नैतिक कहा जाता है। मानवीय मूल्य मानवीय नीतियां आदर्श समाज का अभिन्न अंग है।

जब व्यक्ति नैतिक मूल्यों के आधार पर जीवन यापन करता है तब उसे किसी भी संकोच या समस्या का भय नहीं रहता क्योंकि कवि भर्तृहरि जी नीतिशतक में कहते है –

निन्दन्तु नीतिनिपुणाः यदि वास्तुवन्तु लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अधैव मरणमस्तु युगान्तरे वा न्यायात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीरा।।

अर्थात् नीति से निपुण लोग चाहे निन्दा करे या स्तुति करें, लक्ष्मी आये अथवा चजी जाये, चाहे आज ही मृत्यु हो या युगों के बाद किन्तु धीर वीर पुरूष अपने न्याय के पद से कभी विचलित नहीं होते।

कुशल नीति मानव जीवन को आगे ले जाती है विकसित और समुन्नत करती है। आज वर्तमान समय में बढ़ती वैज्ञानिक प्रगति व पाश्चात्य प्रभाव से युवा वर्ग में ये मूल्य क्षीण होते जा रहें है। जिसके परिणामस्वरूप प्राचीन दृढ़ मूल्य चरमराकर टूट रहे है। समाज में बढ़ता हुआ अनैतिक वातारण मानव की सद्वृत्तियों के विरूद्ध जाकर मानव को अन्दर से तोड़ता जा रहा है।

हमारी संस्कृति में निहित नीति सिद्धान्त में न केवल हमारे नैतिक सामाजिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों को विशेष आधार प्रदान करते है, अपितु इनका पोषण भी करते आये है। मानवीय मूल्य व्यक्ति में ज्ञान से ही आ सकते है इसलिये ऋग्वेद में कहा गया है – त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ

अर्थात व्यक्ति ज्ञान के प्रकाश से ही अपने अज्ञान को समाप्त करता है, ज्ञानरूपी शक्ति जब मानव प्राप्त कर लेता है तब वह स्वयं के साथ अन्यों का भी कल्याण करता है। संक्षिप्त रूप में हम कह सकते है की उत्तम नीति व मूल्य सभ्य समाज का मूलभूत आधार है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत ज्ञान विज्ञानस्य वैदिक चिन्तनम्
सृष्टि विज्ञानम्

डॉ करतार सिंह

संस्कृत संस्कारोकी भाषा है । संस्कृत को विश्व की प्राचीन भाषा होने का गौरव प्राप्त है । अतः स्वाभाविक है कि विश्व केप्राचीन सिद्वान्त और मान्यताएँ भी संस्कृत मे चिश्चित रूप से निबद्व है।

अध्यात्म में सृष्टि विज्ञान एक ऐसी ही कडी हैजो आधुनिक सृष्टि विज्ञान को आगे की सोचने के लिए एक नई दिशा और उर्जा प्रदान करती है। चाहे ऋग्वेद का नासदीय सूक्त होए पुरूष सूक्त हो या फिर हिरण्यगर्भ सूक्त हो सभी में सृष्टि उत्पति का वर्णन मिलता है। उपनिषदोएवं पुराणो में भी जगत्की उत्पति का विधान मिलता है ।

आधुनिक विज्ञान जहाँ सृष्टि के मूल में चैतन्यांश को लेकर दुविधाग्रस्त है वहींवैदिक साहित्य प्रजापति को एक चैतन्य रूप में स्वीकार करता है। अतः यह कहना सार्थक होगा कि सृष्टि प्रक्रिया को समझने के लिए वैदिक ऋषियो की शोधपरक अनुभूति कोसमझना और समाज के समक्ष लाना बुद्विजीवियो का दायित्व बनता है।

सृष्टि की उत्पतिविषयक प्रधान सूक्तो के साथ साथ **प्रजापतिए रूद्रए**वं **विष्णु**सम्बद्व सूक्तो से तथ ाआरण्यको एवं उपनिषदो का गहन चिन्तन करने से स्वतः ही सिद्व हो जाता है कि सृष्टि की सृजनशीलता एवं विकास का उल्लेख संस्कृत ग्रन्थो में विद्यमान है।

भगवान कृष्ण की गीता की पंक्ति –**ष्त्रैगुण्यविशयावेदानिस्त्रैगुण्योभवार्जुन ७** पंक्ति के माध्यम से वेद की सृष्टिप्रक्रया को स्पष्ट स्प से समझा दिया है । इस प्रकार सम्पूर्ण वैदिक एवं उत्तरवैदिक साहित्य सृष्टिप्रक्रिया का व्यापकोल्ल्ेख करता है ।

माया के त्रिगुण वेदान्त में अज्ञान के स्वरूप को दर्शाते हैउसी अज्ञानोपहित चैतन्य से सृष्टि प्रक्रिया आरम्भ होती है। इतना ही नही सांख्यके पुरूष तथा न्यायवैशेषिकोके सेश्वर अनीश्वरवाद को भी सृष्टिविषयक तत्वो में वैदिक सम्बल प्राप्त है। निष्कर्षयह है कि सम्पूर्ण वैदिक एवं उत्तरवैदिक साहित्य सृष्टिप्रक्रिया का व्यापक और विषद वर्णन उपलब्द करवाता है । कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओ का वर्णन यहाँ किया जा रहा है ।

पुरूषसूक्त एवं सृष्टिप्रक्रिया – ऋग्वैदिक सूक्तो में सृष्टि प्रकिया का व्यापक वर्णन मिलता है। पुरूषसूक्त में भी सृष्टि की प्रारम्भिक अवस्था का वर्णन उपलब्ध होता हैजैसे –

तस्माद्विरालजायत् विराजो अधिपुरुषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः।। पुरूष सूक्त 10७90७ 6

अर्थात् आदि पुरूष से ही ब्रह्माण्ड रूपी विराट पुरूष उत्पन्न हुआ है। ब्रहमाण्ड शरीर का आश्रय ग्रहण करके देहाभिमानी आत्मा उत्पन्न हुई । इस प्रकार देह से अलग होकर देव तिर्यग एवं मनुष्यादि में चैतन्यांस रूप से प्रकट होने के कारण अतिशय रूप वाला हो गया तत्प्श्चात उसने भूमि आदि को बनाया।

हिरण्यगर्भसूक्त एवं सृष्टिप्रकिया – सृष्टि की उत्पति एवं विकास के कम में हिरण्यगर्भ सूक्त की अपनी विशिष्ट महिमा है। जैसे –

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकः आसीत।
स दाधार पृथिवींधामुतेमांकस्मै देवाय हविषा विधेम।। हिरण्यगर्भ10७121७1

अर्थात् तात्पर्य स्पष्ट है कि परमात्मा का वह हिरण्यगर्भ रूप सबसे पहले अर्थात् सृष्टि की उत्पति से भी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पूर्व उत्पन्न हुआ । वह पृथ्वी और धुलोक को धारण किए हुए है। हिरण्यगर्भ सूक्त के माध्यम से यह कहा जा सकता है कि हिरण्यगर्भ रूप में ही अग्नि साथ ही उपलक्षण आकाशादि पन्चमहाभूतो को गर्भ रूप मे ग्रहण किया था। इस प्रकार उत्पन्न जलो ने निश्चय ही सृष्टि के आश्रय में सम्पूर्ण संसार को व्याप्त कर लिया था।

नासदीय सूक्त एवं सृष्टि उत्पति – ऋग्वेद के दशवे मण्डल के एक सो उन्तीसवे सूक्त में सृष्टि की उत्पति विषयक विषद वर्णन उपलब्ध होता है। इस सूक्त में बताया गया है कि सृष्टि उत्पति से पूर्व न सत् अर्थात् अभावात्मक तत्व था और न ही सत् अर्थात् सत्तात्मक तत्व था। पृथ्वी से लेकर पाताल पर्यन्त लोक नही थे अन्तरिक्ष और उससे परे कुछ भी नही था। परमेश्वर के मन में सृष्टि की उत्पति विषयक बीज का अंकुर हुआ। इस प्रकार बुद्दि से हृदय में आए विचार तत्व के कारण ही यह प्रक्रिया विकसित हुई।

अग्निपुराण एवं सृष्टि की उत्पति – अग्निपुराण का सत्रहवां अध्याय जगत्की सृष्टि का वर्णन इस प्रकिया को विस्तार देता है। सृष्टिकाल में परमपुरूष विष्णु ने प्रकृति में प्रवेश करके उसे विकृत कर दिया। प्रकृति से महतत्व और उससे वैकारिकए राजसिक तथा सात्विक अहंकार प्रकट हुआ। तत्पश्चात् तन्मात्राओ का उदय हुआ तथा ज्ञानेन्द्रियो एवं कर्मेन्द्रियो के साथ मन बुद्दि के योग से सृष्टि का विकास हुआ । कालान्तर में ब्रहमाजी ने शरीर के दो भाग किए । फिर नारी के गर्भ से प्रजा की सृष्टि की तथा मनु एवं शतरूपा से मानवीय सृष्टि का उदय हुआ ।

ब्रहमविज्ञान और सृष्टि की उत्पति – सृष्टि की उत्पति की प्रकिया ब्रहमविज्ञान का आधारभूत तत्व रही है। **व्योमवादए इतिवृतवाद एसदसद्वादवादए रजोवादए अपरवादए आवरणवादए अम्भवाद एअमृतमृत्युवादए दैववादए अहोरात्रवादादि** वादो के माध्यम से सृष्टि की उत्पति प्रक्रिया को संस्कृत वाड्मय में वैज्ञानिक तरीके से समझाया गया है।

अतः निष्कर्षरूप में हम कह सकते है कि संस्कृत परम्परा में वैदिक साहित्य से लेकर उत्तरवैदिक साहित्य तक लगभग समस्त ग्रन्थो में सृष्टि उत्पति विषयक वर्णन मिलता है। इसका वैज्ञानिक एवं विश्लेषणात्मक वर्णन हम शोधपत्र में प्रस्तुत करेगें।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अध्यापक शिक्षा में नवीन प्रवृतियां

श्रीमति वर्तिका सिंह
उप.प्राचार्या,
श्री अर्जुनराम टी.टी. कॉलेज, सीकर (राजस्थान

स्वतन्त्रोतर भारत में शिक्षा का व्यापक प्रसार हुआ है। देश में वैज्ञानिक संसाधनों के बढ जाने के बाद भी मानवीय शक्ति को कमतर नहीं कहा जा सकता है। छात्र पुस्तकीय या अन्य वैज्ञानिक संसाधनों के प्रयोग से अपने बौद्दिक या ज्ञानात्मक विकास चाहे जितना कर ले परन्तु उनमें शिक्षा को वातावरण के अनुसार ढालने, सामाजिक उतरदायित्वों को निभाने, स्वस्थ जीविकोपार्जन करने तथा जीवन के उत्कर्ष मूल्यों के प्रति उचित दृष्टिकोण विकसित करने में शिक्षक की आवश्यकता नितान्त एवं अपरिहार्य है। पहले शिक्षक निर्देशक था, तानाशाह था, अब मित्र है, दार्शनिक व पथ प्रदर्शन है। समय की मांग है कि देशकाल परिस्थिति के अनुसार शिक्षक को भी प्रशिक्षित कर दिया जाय।

शिक्षक की विशेषताएं (Qualitites of Teachers) :

<u>Teacher शब्द में ही एक शिक्षक की समस्त विशेषताएं निहित है।</u>

T = Truthful (सत्यवादी),E = Encouraging(प्रोत्साहक), A = Apprehensive (बुद्विमान), C= Characteristic (विशिष्ट गुणी), H=Honesty (ईमानदारी),E=Energy full (उर्जावान), R=Researcher (शोधकर्ता),

Teacher-Education (अध्यापक शिक्षा)

वह शिक्षा जिसके द्वारा उपरोक्त गुणों से परिपूर्ण व्यक्ति में निम्नांकित क्षमता का विकास हो जाए।

E=Eduacte (शिक्षित करना), D, Different (भिन्न–भिन्न), , U= Units (इंकाइयां),C=Compare (तुलना करना), A=And (और),T= Testing New (परीक्षण करना),I=Ideas (विचारों), O=Opinion (अनुमानों), , N=Natural (स्वाभाविक),

<u>अध्यापक शिक्षा की पहचानः</u>

शैक्षिक योजना की स्वयं सिद्दि है कि अच्छी शिक्षा अच्छे शिक्षक पर निर्भर करती है और शिक्षक की अच्छाई अध्यापक शिक्षा की गुणवता पर निर्भर है। यह सब अर्थहीन हो जाता है, यदि जागरूक और योग्य प्रशिक्षक न हो जो अपने भावी शिक्षकों प्रशिक्षणार्थियों का सार्वभौमिक विकास न कर सके।

अध्यापक शिक्षा विकसित देशों का मेरूदण्ड है। कोठारी शिक्षा आयोग(1964–66) ने सटीक कहा है The desting of India is shaped in the classrooms '' कक्षाएँ अध्यापक केन्द्रित रहती है। राष्ट्र के विकास में गुणवतापूर्वक शिक्षा के विकास में जितने भी कारक हैं उनमें से निःसंदेह शिक्षक का चरित्र व योग्यता की सार्थकता सर्वोपरि है। नई शिक्षा नीति1986के द्वारा जो 23 कार्यबल चिन्हित किये गये थे उनमें से शिक्षक व उनके प्रशिक्षण भी प्रमुख था। NCTE ने वर्ष 1998 में Curriculum Frame work for quality teacher education'' नामक साहित्य का प्रकाशन किया, जिसमें बदलती परिस्थितियों में अध्यापक शिक्षा पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। राष्ट्रीय पाठ्चर्या रूपरेख 2005

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विद्यालयी शिक्षा पर नवीनतम दस्तावेज है, जिसमें पढाई के बोझ को तर्कसंगत ढंग से कम करने के लिए शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन के लिए जो अनेक सिफारिशें की हैं उनको कार्यान्वित करना आवश्यक है।

प्रशिक्षण संस्थाओं को गुरूकुल में बदलने का प्रयास करना नितान्त आवश्यक है क्यों कि आज शिक्षा के व्यावसायीकरण होने से शिक्षा व्यापार की तरह ही धनार्जन का साधन हो चुकी है। इस क्षेत्र में कर्ता–धर्ता वे लोग बन रहे है। जिनका इस क्षेत्र से दूर तक संबध नहीं है। सरकारी संस्थाओं के भ्रष्टाचार ने उनके काम सरल कर दिया है। इस तरफ न **N.C.T.E. का ध्यान है न ही राज्य सरकारें इन घटनाओं पर चिन्तित है।** इन सबको देखकर सब कुछ बेमानी लगता है। इन सब से विमुक्त होकर एक कुशल शिक्षक के मन मस्तिष्क मे गीता का मंत्र होना चाहिए–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मां फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूमा ते सड.ोडस्त्वकर्मणि।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Effect of Bhramari Pranayama on Auditory

Mukesh Choudhary

Objective:-

Effect of Bhramari Pranayama on Auditory-Verbal And Visual Memory in School Students.

Background:-

Yoga is an ancient Indian science as well as the way of life. Pranayama is a part of yoga, which improves memory in combination of bhramari pranayama, but the aim of our study is to evaluate the effect of only Bhramari pranayama on visual and auditory memory in healthy individuals.

Introduction:-

Bhramari pranayama improve the memory and other threatening reduces the stress and improves academic performance. The humming bee sound correspondingly with "m" kara chanting mentally results in increased the memory also brings improvement in competitive performance. Further researches of the effects of bhramari pranayama practice should be made because of its beneficial influence on the population of the school students.

Methodology:

The study was based on Control group (N=30)& Experimental group(N=30) pre post designed, which is undergoes Bhramari Pranayama on students for seven day effects on memory. So that, the data taken from kv5 jaipur under the age of 12 to 15 age. Memory were studied using Trail Making Test (TMT) and Digit Forward and Backward Test. Experimental Group (n=30) and Control Group (n =30) students contributed data to the analyses. The data were analyzed using Student's t-test.

Result:-

The result showed significant changes after the Bhramari intervention on the students. Actually breath awareness technique helps down the speed of the mind and give relax in that particular mind stress but it may help for improvement memory level so after the some breath practice the body are settle down in relax and tranquility state but for the enhancement of the memory field the Bhramari Pranayama may help for improve the memory, which is proved by these two assessment tools TMT Pre(19.37±4.66**),& Post(21.03±5.33***)DIGIT FORWARD & BACKWARD TASK Pre (21.60±3.27***)& Post (22.27±2.24**).

Conclusion:-

The importance of Bhramari pranayama on short term visual, verbal and auditory memory among School students is very well understood by this study.

The study also inspires the going students to include the practice of Bhramari pranayama in their schedule, to have a stable memory power and better learning.

KEYWORDS:

Bhramari Pranayama, Breath Awareness, Short Term Memory.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Imminent technologies to make Sanskrit-study interactive - with A.R.[viii], V.R.[viii] & A.I.[viii]

Mrs. Namrata Patel
Research Scholar
Rashtriya Sanskrit Sansthanam
(Deemed University),
K. J. Somaiya Sanskrit Vidyapeetham,
Vidyavihar E, Mumbai.

Abstract

Sanskrit studies have seen boost up,as per the maxim, 'Old is Gold'. But there are challenges we need to face about today's educational methods. Also, with time, ancient Sanskrit studies need technological advancements for its admiration by the fast-pacing world. In this paper, the author has broadly discussed her original concepts on how the upcoming trending technologies like Augmented Reality (AR), Virtual Reality (VR) and Artificial Intelligence (AI) can effectively be used to enhance Sanskrit studies for having the most optimal benefits by developing it appropriately. The purpose of this study is to present new outlook towards Sanskrit studies in the near-by future period as in to make its impact last longer and better in the minds of the learners.

The present analysis encourages innovators to innovate and develop highly advanced software applications for the growth of Sanskrit. Some of the tools discussed here are detecting objects by augmented reality, introducing virtual reality environment to the user allowing them to enter the world of Sanskrit stories and plays. Besides, using Artificial Intelligence to check the user's Sanskrit grammar errors and the current level – basic, standard or advanced, making reports and analyzing it with continuously working with improving the user's standard of language. Sanskrit Chat box will play a prominent role in encouraging Sanskrit conversation with the user. This paper highlights with examples the technological uses in learning Sanskrit because the future is not too far.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Effect of PET (Pranik Energization Technique) of Yoga on occupational health disorders of IT professionals.

Dr Narendra Sharma Devendra Sharma

Presentation title: Effect of PET (Pranik Energization Technique)of Yoga on occupational health disorders of IT professionals.

Research Focus: Yoga intervention, occupational health disorders

Researcher: Dr Narendra Sharma and Devendra Sharma

Background: Informational Technology (IT) professionals have long sittings for long hours working with laptops. Thus they are experiencing back pain, abnormal blood pressure & sugar level, cervical disorders, gastrointestinal diseases, sleeping disorders & others. Although they used to exposed to some indoor games one or two times during their daily work life and outdoor games once in a month but that was not sufficient to completely get rid of these disorders.

I gave them all pranik energization technique. I collected data of general parameters, general health questionnaire, emotional quotient before yoga intervention and post yoga intervention. By using various statistical tools I found that PET yoga module of 15 days helped them in controlling some of the occupational disorders.

Methods: 30 participants of IT industry were taken into study who had atleast some occupational health disorders. After screening, they were given pranic energization techniques. Some of the outcomes were encouraging. Self reported general health questionnaire (GHQ) and Emotional quotient (EQ) were interesting to observe. These were collected pre and post intervention.

Results: Results did not find that PET alone was sufficient enough to bring all parameters in normal range and cure all health disorders. It is possible had if duration of intervention been increased for longer duration, results would have been much improved. Although some significant outcomes were also found for some parameters.

Conclusions: Guided yoga intervention PET does not completely cure all occupational health disorders of IT professionals. Although GHQ & EQ database reveals that who have been doing yoga for long time before our intervention got great improvement in certain parameters. Methods to increase adherence to treatment recommendations should be further developed and applied in yoga interventions for IT professionals.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Effect Of Yoga Module (Asana, Pranayama, Dhayana) On Intelligence Quotient (EQ) In Jail Prisoner, Central Jail Tonk.

Arpit Jhajhadiya

Background:-Yoga is an ancient Indian science as well as the way of life. Asana , Pranayama & dhyana is a part of yoga, which improves memory in combination of yoga module, but the aim of our study is to evaluate the effect of yoga module (Asana, Pranayama & Dhyana) on memory in healthy individuals.

Introduction:-yoga module (Asana, Pranayama & Dhyana) improve the memory and other threatening reduces the stress and improves academic performance. The yoga module increased the memory also brings improvement in competitive performance. Further researches of the effects of yoga module (asana, pranayama, dhayana) practice should be made because of its beneficial influence on the population of the jail prisoners.

METHODOLOGY:- The study was based on single group pre post designed, which is undergoes yoga module (asana, pranayama, dhayana) for seven day effects on memory. So that, the data taken from central jail tonk under the age of 20 to 50 age.

RESULT:- The result showed significant changes after the yoga module intervention on the jail prisoners. Actually breath awareness tech. EQ helps down the speed of the mind and give relax in that particular mind stress but it may help for improvement memory level so after the some breath practice the body are settle down in relax and tranquility state but for the enhancement of the memory field the Pranayama may help for improve the memory, which is proved by these two assessment tools Six POMS SCALE TEST-pre(68.57±**12.78******) and post(88.37±**13.31*****).

CONCLUSION:-The importance of pranayama & dhayana on memory among jail prisoners is very well understood by this study.

The study also inspires the going jail prisoners to include the practice of yoga module (asana, pranayama & dhyana) in their schedule, to have a stable memory power and better learning result on EQ level.

KEYWORDS: Pranayama, EQ Level.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"GANDHI'S QUADRANGULAR CONTRIBUTION TO INDIAN ETHOS"

*Dr. Ruchi Tyagi
Associate Professor,
Department of Political Science
Kalindi College,
(University of Delhi)

Gandhi's lifelong mission was to inspire man to make efforts for self-realization which, in turn, would lead to the realization of the Creator. His understanding of human body led him to believe in restricted locomotive ambition and also to declare that service of God's creation is possible only through the service of "that part of God's creation which is nearest and best known to us."

Gandhi augmented traditional Indian spiritual ethos by a quadrangular process of Adoption, Adaptation, Rejection and Enrichment. In the first place, he **adopted** the lofty spiritual ideals of Parmatma (God), Atma (soul), Moksha (salvation), Sahishnuta (tolerance), Ahimsa (Non-violence), Jivdaya (compassion), Kshama (forgiveness), and Dharma (ethical way of life) from Vedantic philosophy. He further adopted five 'Virtues' mentioned by Patanjali, including, Ahimsa (Non-violence), Satya (Truthfulness), Asteya (non-stealing), Brahmcharya (Chastity) and Lobha hinta (Greedlessness).

Secondly, while pursuing the **path of adaptation**, he adopted the values from other religions and adapted them to strengthen non-violent national movement. These virtues included the vows of *Satya, Ahimsa, Asteya*(non-stealing), *Brahmacharya*(celebacy) and *Aparigraha*(non-possession) from Jainism and Buddhism; congregational form of prayer and significance of confession from Christianity; and *Tauhid*(the spirit of the divine brotherhood) from Islam.Gandhi followed the process of adaptation of Green's concept of Political Obligation; Locke's notion of Constitutional Government: Laski's insistence on positive and constructive role of the State; Plato and Aristotle's concept of State as the individual writ large, and the decentralisation of both political power and economic resources; Thoreau's concept of State as a necessary evil; Lincoln's concept of Democracy, Rule of Law, Representative, Decentralized, Federal, Secular and Responsible Political System: and the French maxims of Justice, Liberty, Equality and Fraternity.

In the third place, Gandhi followed the **process of rejection** by criticizing non-vegetarianism, drinking, free-sex, exhibitionism, imperialism, colonialism, dictatorship, apartheid; theocratic/atheistic systems; recourse to violence; fear of punishment; race for materialism, urbanization; unemployment caused by large-scale industrialization; majoritarianism, minoritarianism.He also rejected the evil institutions of ritualism, casteism, touch-me-notism, Sati, Devadasi, Purdah, Dowry, Child-marriages, oppression and suppression of widows and other forms of ill-treatment towards them.

And, lastly, Gandhi's **recourse for enrichment**is reflected in his notions of the Passive Resistance; People's Right to challenge the government through Truth, Justice, and Non-violence; synthesis of majoritarianism (bahuodaya) with minoritarianism (antyodaya) as Sarvodaya (welfare of all); transformation of the ancient Indian system of Gram-Panchayats into Gram Swaraj, the system of Basic, Compulsory, Primary, Vocational

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Education and Trusteeship. Patanjali's five virtues were enriched by Gandhi with six additional virtues comprising, *Swadeshi*, Removal of Untouchability, Bodily Labour (Sharirik Shram), Control of Palate (Aswad), Fearlessness (Nirbhayata) and Respect for all Religions (Dharmik Sahishnuta) encompassing *Sarva Dharma Sambahva* (equal respect for all religions); and making it his famous "eleven vows" for *Satyagrahis* (volunteers) of the non-violent national movement.

The Gandhian alternative of *'Gram Swaraj'* aiming at *'Vasudhaiva Kutumbkam'*, was inclusive of its quadrangular meaning, including political, economic, moral and social aspects. Ultimately leading to a kind of world federation, this 'square of swaraj' aimed at harmonizing the whole humanity in a federal setup may not be considered as alternative paradigm, comprehensive and complete in itself. The purpose of Gandhi's Swarajist State was to establish "Self-rule" or "rule over one-self" by actively working for the welfare of all, i.e. *Sarvadaya*, through the philosophy of basic education, limited wants, bread labour,equal wages for equal work, and trusteeship, etc.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

UPANISAD'S APPROACH TO IMPARTING KNOWLEDGE

VIJAYALEKSHMI.R,
Asst. Professor, Dept. of Sanskrit,
KSMDB College, Sasthamcotta,
Kollam, Kerala.

The present scenario teaching and learning process are following only the verbal knowledge besides practical method that require in whole life. The time based education plunders the necessity and aspire of education. The learners haven't the interest to knowing the subject what they have, because he hasn't fundamental awareness about the subject and the subject does not have the determination to catch the attention of a learner.

Teaching and learning are the two instruments to acquire knowledge. The purpose of education is not only imparting the knowledge regarding to various subjects but also the development of the personality of a learner too. According to upanisads the concept of education is to cultivate and contour the individual qualities of a person.

Upanisads deals with profound and furtive knowledge which stood rather than the brilliance can reach. Educational systems of upanisads dwell with the knowledge of surroundings and insist certain qualities to teacher and learner. The teachers should have profound knowledge and experience about what they thought and the learner should have a firm faith to acquire the knowledge. For accomplish the goal upainsads follows certain methods. Among them four methods are remarkable and appropriate to the present situation. The first method is known to unknown method, for example in Chandogyopanisad the guru taught the knowledge of 'anutva of atman' through the fruit of banyan tree (Cha.Up.6.12). The second method is enquiry based instruction; Prasnopanisad is an example of this. The third is Demonstration method that understands perceptually for example 'the dissolved salt' illustration from Candogyopanisad (Cha.Up.6.13). Experimental method is the last and finest which assists the seeker to become a known person for example the teaching of triplicationof food, Aruni asks Svetaketu to fast for fifteen days but to drink water (Cha.Up.6.7).

The upanisadic education stood on the technique of 'abhyasa and vairagya'. Upanisads provide a particular environment for the learner to develop his curiosity towards the learning subject and prepare him to understand the subject through experience. The common teaching techniques adopted by the Upanisads are -1) Theoretical teaching 2) Illustrational teaching 3) Symbolic teaching and 4) Experienced Teaching.

KEY WORDS:Upanisads, Teaching Techniques, Learning Process, Methods adopted.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

History of Sanskrit Studies and Teaching in Russia (from 19th century till nowadays)

Zakharyin, Boris (Moscow State University, Russia)

G.Lebedev (1749 – 1817) was the first Russian who, having learned Sanskrit from an Indian teacher, collected some data for Sanskrit-Russian dictionary, which remained unpublished. Later, in the 30ies-40ies of the 19th century, at the Universities of S.-Petersburg, Moscow, Khar'kov and Kazan first centers of Sanskrit studies were opened in Russia. Practically in each of them teachers of Sanskrit were Germans (like, Adelung, Dorn, Lenz, et alia), who used either German or even Latin for communicating with their pupils. Besides concentrating on language teaching they were interested only in Sanskrit works of art, translations and in literary criticism, other aspects of Sanskrit culture were not touched by them. The only remarkable exception was O.Böhtlingk, who, being a talented linguist, translated Pāṇ ini's '*Ashtādhyāyī*' into German.

The appearance of truly scientific Sanskritology may be attributed to prof. Minaev (1868 – 1887) of the University of S.-Petersburg, who was not only teaching Sanskrit (and Pāli) but also delivering regular courses in comparative linguistics with Sanskrit as their main topic and providing systematic research in Sanskrit language and literature. The end of the 19th century and 1st decades of the 20th century were marked by immense widening of Sanskrit and Sanskrit-connected studies in philosophy (Scherbatskoy), cultural studies (von Schroeder, Stael-Holstein, Ovsianiko-Kulikovskiy), linguistics (B.de Courtenay, Fortunatov), translation (Ritter), language teaching (Knauer, Bühler), etc. One of the great events was the foundation in 1897 of the 'Bibliotheca Buddica' due to efforts undertaken by academician Oldenburg.

The bolsheviks' upheaval of 1917 and creation of USSR have completely changed the direction and scope of research in Indology, and until the end of the 50ies only the so called "contemporary studies" were encouraged. Only in the 90ies the situation in Sanskrit studies has become better, and, as a symbol of this, Elizarenkova's commented translation of RgVeda has appeared. But by that time only two Indological centers (in Moscow and in S.-Petersburg) with only a few specialists able to cope with texts in Sanskrit have remained. Among them was B.Zakharin who published his commented translations of Patanjali's '1st *āhnika*' and Varadarāja's '*Laghusiddhāntakaumudī*'.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

A Comparative Study of Status of Women in Vedic Period and Contemporary Period

Gunja Patni,
Research Scholar, Dept. of English,
IIS (Deemed to be University), Jaipur;

Abstract

Any study of civilization is incomplete without studying the status and position of women in it. The status of women in India has been fluctuating. At times she has been suppressed and at other times she is raised to the pedestal of deity/goddess. During the Vedic period women were assigned a high place in society. They shared an equal standing with their menfolk and were provided opportunity to attain high intellectual and spiritual standards. Sati system and child marriage were not in existence. In the later Vedic period, practices of child marriage, widow burning, child marriage, the purdah system and polygamy deteriorated their position. Over years philosophers and sociologists have tried to access the problems faced by women. The question of their subordination, equal rights, freedom, subjectivity and identity has been pondered long upon. Women in India have passed through two phases of their life: the period of subjugation and the period of liberation. In recent years the role and position of women has undergone a drastic change due to availability of rights and education. The paper will thus focus upon: (a) The role and status of women from ancient time to present. (b) Will analyze the status of women empowerment in India highlighting the issues and challenges in it. (c) Is woman able to carve her identity and claim her subjectivity or she still is subjugated under the stereotyped patriarchal norms of society? The attempt will thus be to shift the focus from a textual analysis of Vedas to a broader ideological context, using gender as an entry point and paying more attention to inequalities, ideological values and choices- across time and space- to arrive at cultural reformulations of history.

Keywords: Women, Culture, Gender, Identity, Empowerment

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

SIGNIFICANCE OF SANSKRIT IN LIFE SKILLS DEVELOPMENT

Savita Sharma (Research Scholar)
Suresh Gyan Vihar University, Jaipur
Dr. Rajni Chopra (Assistant Professor)
Suresh Gyan Vihar University, Jaipur

ABSTRACT-

World Economic Forum described list of skills required by 2020 which contain complex problem solving, critical thinking , creativity people management, coordinating with others, emotional intelligence, judgement and decision making etc. Learning Sanskrit could be one way to train our minds to sharpen our innate power. In fact it could strengthen existing brain training exercises to help yield maximum results. The first point which gives Sanskrit an edge over many other languages is its Script. It is written in Devanagari. Recent research by the scientists of National Brain Research Centre (NBRC) has discovered that reading Devanagari involves more areas of human brain than Roman scripts. That means learning Sanskrit is a good exercise for human brain . If someone does not know Sanskrit , he is obviously missing something. He cannot get the clear perspective of Vedas, Geeta, Upnishads etc. Scientists believe that Sanskrit can help in speech therapy along with helping in mathematics and science. They also believe that learning Sanskrit improves concentration. This paper covers the significance of study Sanskrit to develop life skills.

KEYWORDS- Sanskrit, Life Skills Development

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"Yoga :secret of long life"

Nikita Bansal

What yoga ? It's very common question ?

Ans :- Yoga word is derived from the Sanskrit root word 'Yuj' which means union. Union of soul or mind. Yoga is a group of physical, mental & spiritual practices or disciplines which originated in Ancient India. Yoga is one of the six orthodox schools of Hindu philosophical traditions. There is a broad variety yoga Schools, practice, & goals Hinduism, Budhism& Jainism, The term "yoga" in the western world often denoles a modern from of Hatha yoga, yoga as exercise, consisted largely of the postures called Asanas.

The Origins of yoga have been speculated to date back to Pre-Vedic Indian traditions. it is mentioned in Rig Veda, but most likely developed around the sixth & fifth centuries BCE, ancient Indians ascetic & sramana movement. The chrondogy of easiest text describing Yoga practices is unclear, varyingly corrected to Upanishads.

The yoga sutras of patanjali date from the list halt of th 1st millennium CE, & gained prominence in the west in the 20th country. Hotha yoga test emerged sometimes between the 9th& 11th Centaury with origins in Tantra.

Yoga gurus from India later in lorded yoga to the west following the success of swami vivekanand in the late 19th& early 20th country with this adapalies of yoga tradithech, exceeding asans. Outside India at has developed into a posture based physical fitness stress relist & relaxation teachers yoga in India trading however is more than physical exercise it has a meditative & spiritual care. One of the six major orthodox school of Hinduism is also called yoga.

Pre- Classical Yoga

The beginnings of yoga were developed by the Indus-saraswati civilization in northern India our 5000 years ago. The word yoga was first mentioned in the oldest sacred texts the Rig Veda. The Vedas were a collection of texts containing songs, mantras & rituals to be used by Brahmans. The Vedic priests. Yoga was slowly refined & developed by the Brahmans, the Vedic priests. Yoga was slowly refined & developed by the Brahmans & Rishis (mystic seers) who documented their practices & beliefs in the Upanishads a huge work containing our too scriptures is the bhagvad Gita composed around 500 BCE. The Upanishads took the idea of ritual sacrifice from the Vedas & internalized it, teaching the sacrifice of the ego through self-knowledge, action(karma yoga) & wisdom (jhana yoga).

Classical Yoga

In the pre-classical stage, yoga was a mishmash of various ideas, beliefs & techniques that often confided & contradicted each other. The classical periods defined by patanjalis yoga sutras the first systematic presentation of yoga. Written sometime in the second centaury, this text describes the path of raja yoga often called classical yoga patanjali organized the practice of yoga into an "eight limbed path containing the steps & stages towards obtaining Samadhi or enlightenment. Patanjali is often considered the father of yoga & his yoga sutras stell strongly influence most styles of modern yoga.

Post Classical Yoga

A few centuries after Patanjali, yoga masters created a system of practice designed to rejuvenate the body & prolong like. They rejected the teachings of the ancient Vedas & embraced the physical. Body as the means to achieve enlightenment they developed Tantra yoga, with radical techniques to cleanse the body & mind to break the knots that bind as to our physical existence.

Modern period

In the late 1800s & early 1900s, yoga masters began tofraud to the west, attading attenlion & followers. This began at the 1893 Parliament of religions in Chicago, when swami Vivekananda wowed the attendees with his leetures on yoga & the university of the world religions, in the 1920 s & 30s, Hatha yoga was strongly

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

promoted in india with the work of T. Krishnamachrya, swami Sivananda & other yogis practicing Hatha yoga. Krishnaacharaya opened the first Hatha Yoga. School in Mysore in 1924 & in 1936 sivanand tounded the divine life society on the banks of the holy Ganges Ries. Krishnamacharya produced three students.

That would continue his logacy & increase the popularity of hatha yoga: B.K.S lyengar,T.K.V desikachor & pattabhi jois. Shivnanda was a prolific author, writtimg over too books on yoga & established nine ashrams & numerous yoga centers located around the world.

The important of yoga to the west still continued at a tricks in till indra devi opened her yoga studio in Hollywood in 1947. Since then many more western & Indian teachers have become pioness, popularizing hatha yoga & gaining millions of followers.

Hatha yoga how has many different schools or styles, all emphasizing the many different aspects of the practice.

Many questions are asked the people if the india is a original yoga & yoga in one of the presious gift of god so why our new generation our children & youngsters are not interested in yoga & how can we do that our children are involving this & get a lot knowledge become healthy. If present the main problem of human is lack of time & that reason they fully depend on the machine because they want comfort & fast results. Why yoga is good for children?

Introducing yoga to your children helps establish healthy habits at on early age.yoga can enhance your childs strength, co-ordination & flexibility while encour aging body awareness & self esteem. It can reduce your childs anxiety & stress & promote a sense of calmness. If they continue yoga as they grow older your children will continue to reap the benefits including improved

1. Memory
2. Concentration
3. Self-esteem
4. Academic Performance.

How yoga helps your family connect?

Sharing a yoga class with your child can also help deepen your connection with your children. You are connecting movement with each breath you take connecting with your inner self & connecting with others in this case, with your child.

There are two verities of kid-friendly yoga poses you can try at home. The first promotes stillness & grounding. Here are a few examples-

Happy baby pose => lie on your back. Bend your knees into your belly exhale. As you inhale, grab the outsides of yours fact. Open your knees & bring them up towards your armpits.

Mountain pose => stand tall with fect parallel & addax your tailbone down for a Natural pelives. Lift up through the spine. Tuck ehin in slightly & keep head balanced over your shoulders.

The others variety of poses promotes balance. Here are a couple of examples.

Tree poses- stand tall an one foot & turn the apposite knee out. Then place the sole of the apposite foot into your ankle calf or thigh. (avoid placing your sole on the inside to your knee) put your palms together in front of your heart or face them with palms up.

Warrior- stand in mountain pose step back with one fact , angle it out while bending your front knee then bring your arms straight up & look up.

Practice these poses through a game of mirroring children are curious & imitate what others do. Invite them to try a pose & don't worry it right or wrong, just as long as it's safe.

Partners poses for older children- As you practice partner poses with an older child, you learn to support & balance each other, establishing trust at the same time.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Artificial intelligence, fuzzy logic and Panini approach

Madhavendra saxena

Research scholar poornima university jaipur

Abstract

द्वीपेषु तेषु वर्षाणि चत्वारिंशत्तथैव च। तावन्तः पर्वताश्चैव वर्षान्ते
द्वीपाः समुद्राश्च अन्योन्यस्य तु मण्डलम्। सन्निकृष्टाः स्वभावेन समावृत्य
निर्ममे ब्रह्मा स्थानानीमानि सर्वशः ॥ १६ ॥ कल्पस्य चास्य ब्रह्मा वै
॥ १७ ॥ स्वर्गं दिशः समुद्रांश्च नदीः सर्वांश्च पर्वतान्। ओषधीनां

The extraordinary thing about Sanskrit is that it offers direct accessibility to anyone to that elevated plane where the two — mathematics and music, brain and heart, analytical and intuitive, scientific and spiritual — become one. Relevant to this, there has recently been an astounding discovery made at the NASA research center. The following quote is from an article Sanskrit & Artificial Intelligence, which appeared in **AI (Artificial Intelligence)** magazine in spring of 1985, written NASA researcher **Rick Briggs** For the sake of comparison, a brief overview of semantic nets will be given, and examples will be included that will be compared to the Indian approach. After early attempts at machine translation (which were based to a large extent on simple dictionary look-up) failed in their effort to teach a computer to understand natural language, work in AI turned to Knowledge Representation.

Keywords:

Sanskrit, Panini, fuzzy logic Communication, Ashtadhyayi

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

PRACTICE OF ENVIRONMENTAL INCLUSIVENESS IN ANCIENT INDIA: A DISCOURSE ON HUMAN-ENVIRONMENTAL RELATIONSHIP

Ms. Mayarani R
Research Scholar
Kerala University Library
University of Kerala
Thiruvananthapuram. Kerala.

In the present era not only India, but all the nations in the world facing the environmental problems because of the fundamental challenge which occurred in the pattern of the society like growing industrialisation, explosive population etc. In modern times we can't think of human advance without the exploitation of natural resources. When we concentrated the development of every sphere of life- the result of the all the development is destroy of our common environment. When the globalisation, industrialization, liberalisation and modernisation come in our day to day life – it's all takes our environment. Here comes the importance of environment inclusiveness of ancient Indian philosophy. At Ancient times, the people worship the nature with purity. We can see a deep human attitude towards the nature and environment. They developed this attitude after the observation and study of the nature. They gave a spiritual meaning and status to the environment. Most of the ancient Indian philosophy text handled the environment with great concern. The three forms of nature i.e. the creation, sustainability and destruction - described with environmental basis in Indian philosophy. In Ancient India philosophical texts, it is clearly described the importance of nature and the principle of nature and the principle of environmental protection.

When we exploited our nature for our selfish purposes it imbalanced our eco system. This study is a bird's eye view on the ancient t Indian Philosophy- how they help to protect the environment and help to balancing our eco-system. Human life cannot be thought of except in the perfect harmony of nature and environment. The healthy attitude towards the environment and proper balance is the only way to strengthen the bond between human and environment.

KEY WORDS: - Environment, Indian Philosophy, Eco-System, Globalisation, Development.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Pratyahar Practices – Essential for modern lifestyle.

Menka Kuril, Ujjain

Pratyahar, the fifth limb of Yoga is very essential for modern lifestyle. The modern lifestyle includes lots of competition that leads to stress and anxiety. And all this has become the cause of so many physical and mental ailments that are called as the gift to humanity.

Due to the growing awareness for health in last few years, yoga and other alternate healing practices are gaining momentum for holistic health. People are getting more attracted to these practices not only for their health but for the benefit of family, society and nation as whole.

There are many yoga institutes and private yoga classes running all over the country but very few are there who are practicing any technique for development of pratyahar. Pratyahara is the 5th limb of yoga and it is concerned with taking us from the outside to the inside, with withdrawing the senses, so that the person like an inner-naut can travel within and finds the "Self". The lack of Pratyahara is the reason why many of us struggle with a meditation practice, and also why we don't benefit as much as we could from the practices of Asana and Pranayama.

Stress is the part of life now. One can't avoid the stress at home, office or in society. Sometimes, it is essential also but that is the other part of the story. What is more important is to focus. When one's mind is more focused or concentrated then there will be more solutions and positive outlooks for problems. Upanishads, which says,

For man, mind is the cause of bondage
and mind is the cause of liberation.
Mind absorbed in the sense objects is the cause of bondage,
and mind detached from the sense objects is the cause of liberation.

Therefore, practices of pratyahar can be a stepping stone in person's life not only for his spiritual growth but for physical and mental and social growth also.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

The Perspective of Kalidasa, the Playwright on Human Values

Dr. Subhash Sharma
Associate Professor,
JRR Sanskrit University, Jaipur

Abstract :

Kalidasa is a great name in the world's poetic literature. None of the poets in India is recognised as his equal. He is our national poet who has described the culture, tradition, knowledge, history, geography, flora and fauna of our country in a vivid and intimate detail. It is being said, that there are many Kalidasas in Sanskrit literature but three of them are mainly mentioned by the scholars - the first is the 'playwright', the second is the 'epic writer' and the third is the writer of 'Kuntaleshwara Dautya', Rajashekhar writes-

एकोऽपि जीयते हन्त ! कालिदासो न केनचित्।
शृंगारे ललितोद्गारे कालिदासत्रयी किमु।।

The great king of Gupta Dynasty Samudragupta, in his **Krishnacharita** mentions Kalidasa the playwright as the first who was a poet of king Shudraka's court. The second was bestowed patronage by Samudragupta and his father Chandragupta. The present paper is an attempt to identify the human values that Kalidasa the playwright, mentions in his plays and which ought to be followed by a civilized and cultured society.

Kalidasa is an idealistic poet who believes in a society that is governed by certain values. He is an ardent follower of Vedic faith and culture. He always gives importance to Vedic values in his plays. He says -

यदुत्तिष्ठति वर्णेभ्यो नृपाणां क्षयि तत्फलम्।
तपः षड्भागमक्षय्यं ददत्यारण्यका हि नः।।

He is the supreme poet of aesthetic beauty. Even morality is aestheticised and intellect is governed with sense of beauty in his poetry. He is an admirer of social values who believes that certain values provide proper direction to social conduct and establish stability and discipline in society. Although Shakuntala accepts Dushyant's love, yet she still says..."though smitten with love, I am not the mistress of my person, I can give you my heart but it is my father who can dispose of my person, not I". She still has sense of modesty and dignity -

किं नु खल्विमं जनं प्रेक्ष्य तपोवनविरोधिनो विकारस्य गमनीयास्मि संवृत्ता।

We can see Shakuntala's unbound affection for Rishi Kanva, and at the same time Kanva's uncontrolled emotion towards her in spite of his asceticism. He gives counsel to Shakuntala and teaches her how she has to prove herself as a wife and a daughter in law.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Dushyant fails to recognize Shakuntala when she reaches to his capital but when he comes to know the truth he was in grave sorrow due to his guilt.

Kalidasa is also very serious about the political and administrative values that guided the kings to rule their people. He is basically a poet of nature, both the internal nature of human beings and the external phenomenal nature. He has wonderful insight into human nature at the same time he was very conscious about protection of nature. The heroines of two of his plays are the children of nature. The great poet is also concerned with education values in the society. He says about Malavika's education -

शिष्टा क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था संक्रान्तिरन्यस्य विशेषयुक्ता।
यस्योभयं साधु स शिक्षकाणां धुरि प्रतिष्ठापयितव्य एव।।

The nobleness of the human values helps to magnify and mesmerize the audience's emotional experience with the character and this interaction feeds the spectator (Sahridaya) to develop aesthetic experience i.e. Sadharanikana and brings out the pleasure or Rasa of Poetry.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Women and Socio-Economic Development

Dr.Vandana Sharma

Jaipur

The main purpose of this research paper is to deal some development aspects of direct cocern to women .Women are regarded as the nucleus of a nation.Just as the body is made up of cells ,controlled by their nuclei, a nation is made up of millions of families depending upon women for their progress and well being. The sustainable development of the country depends on the fulland equal participation of women and men.The over all development of a country depends upon the maximum utilization of her people, both men and women.Women empowerment as an important indicator for socio-economic development.Women education plyas an important role to socio-economic development .Education teaches women cognitive skills that help them to learn throughout their lives ,which in turn helps them dopt healthier practices.Women are undoubtedly the foundation of the basic unit of society –the family. Even in traditional roles they demonstrate great innovation, skill intelligence, hard work and commitment.When we educate and empower one woman, we set off a chain reaction that transforms life of her family and the community she lives in.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत साहित्यः मानवीयकरण के लिए

सारांश :– वर्तमान युग जनतंत्र, राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता का है। यही नहीं, हम लोग मानव की नैतिक और आध्यात्मिक एकता की भी बातें करते हैं। अणु–परमाणु सम्बन्धी सूक्ष्म वैज्ञानिक अनुसन्धानों में हम लोग बड़े मनोयोग से सलंग्न है। ज्ञान के इस विस्तार के साथ–साथ वाणिज्यिक और भौतिकवादी भावनाएँ भी अपने उग्र रूप में मानव–समाज के समक्ष उपस्थित है। इस समय वस्तुतः हमलोग एक बहुत बड़े संक्रमणकाल से गुजर रहे हैं।

ज्ञान के इस विस्तृत आलोक में हम अपनी बालक–बालिकाओं में राष्ट्रीय और भावात्मक एकता के विकास की यौजना तैयार करनी है। तदनुकुल ही हमारे पाठ्यक्रम के पाठ्यविषयों का चयन और शिक्षण–पद्धति का गठन होना चाहिए। इससे विद्यार्थियों में उन गुणों का विकास होगा, जिनसे वे राष्ट्रीय और भावात्मक एकता के मूल्यों को जानेगें तथा उनको धारण कर सकेंगे। अपना तथा अपने समाज और राष्ट्र का ही नहीं, अपितु विश्व तक का भी वे कल्याण कर सकेगें। भारतीय नवयुवकों का दृष्टिकोण व्यापक होना चाहिए। दृष्टिकोण की व्यापकता, विशालता और उदारता ही प्रगति का मूलमंत्र है। संकीर्णताओं में पड़कर जीवन के किसी भी क्षेत्र में हम कभी उंचे नहीं उठ सकेंगें। जनतंत्र और राष्ट्रीयता की तो बात ही भिन्न है।

नवयुवकों के साथ–साथ भारतीय जनसमूह को शिक्षित बनाने में ही यह आदर्श चरितार्थ केवल मात्र संस्कृत साहित्य के परिशीलन से ही सम्भव होगा। भारत के सुप्रसिद्ध सन्यासी स्वामी विवेकानन्द हमेशा यही कहते रहे–"भारतीय जनससमूह को सुसंस्कारित बनावे।" आज इसी मंत्र को हमें स्मरण करना है।

डॉ० महेश शास्त्री
साहित्याचार्य, एम.ए. (संस्कृत, हिन्दी, समाजशास्त्र)
शिक्षाचार्य एम.एड़, विद्यावारिधि पीएच.डी
प्राचार्य एवं विभागाध्यक्ष बीरबल मेमोरियल शिक्षक प्रशिक्षण
महाविद्यालय बानसूर (अलवर) राज.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

श्रीअनन्तनाथाय नमः। निर्विघ्नमस्तु।

श्रीमद्विजयवर्णीविरचितायाः शृङ्गारार्णवचन्द्रिकायाः प्रतिपाद्यम्

साहित्यशास्त्रे गुणालङ्काररीतीनां निरूपणे नैकाः ग्रन्थाः नैकैराचार्यैस्सम्प्रतिपादिताः। तेष्वन्यतमः श्रीमद्विजयवर्णीविरचितः शृङ्गारार्णवचन्द्रिका वर्तते। अयमाचार्यः त्रयोदशशताब्दीवर्ती आसीत्। अयं ग्रन्थः अलङ्कारविषयकः ग्रन्थोऽस्ति। ग्रन्थस्यास्यापरनाम अलङ्कारसंग्रहः अस्ति। अस्मिञ्च दशपरिच्छेदाः सन्ति। अस्य ग्रन्थस्य वैशिष्ट्यमिदमस्ति यत् प्रत्येकस्मिन् स्थले यानि कान्यपि उदाहरणानि दत्तानि, तानि उदाहरणानि कामिराजस्य कीर्तिगानाय स्वयमेव रचितानि। ग्रन्थेऽस्मिन् काव्यस्य अनेकानि तत्त्वानि यथा-गुणालङ्काररीतयः विश्लेषिताः। यद्यपि पूर्वाचार्योपदेशदिशा एव श्रीमद्विजयवर्णी काव्यशास्त्रीयव्याख्यानं चकार, तथापि बहुषु स्थलेषु अयङ्ग्रन्थः नावीन्यमपि भजते।

मया दास्यमाने शोधपत्रे अस्य ग्रन्थस्य प्रतिपाद्यानि विषयानि संक्षेपेण निरूपयिष्यन्ते।

शोधच्छात्रा- विपाशा जैनः
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, जयपुरपरिसरः
vipashar.jain@gmail.com

7727854200

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

Vedic Mathematics an Analysis and Applications in Modern Era

Dr. Prempal Singh[1]

Email: premdumaths@yahoo.com

Mob: 9910956950

Assistant Professor

Department of Mathematics

Kalindi College, University of Delhi

Abstract

Vedic mathematics is the study of mathematical relationship in keeping with the Vedic tradition of intuitive thinking. It is, basically an approach which exploits both halves of the brain by using the pattern recognition capabilities of one and the analytical capabilities of the other. The aspect of "Darsana" which is inspired pattern recognition through which sixteen formulae have reached us. Secular meaning of Vedic is that which is spoken. This must not be taken to have any pre-conceived religious overtones. Mathematics of the period from 2500 B.C. to 500 B.C. is based on the religious works. The religious works of the Buddhists and the Jainas and the Aryabhatta give some idea of the development of the Mathematics from 500 B.C. to A.D. 500. Our study of Vedic works will reveal that by 500 B.C the Hindus were well-versed in the use of numbers. They knew all the fundamental operations of arithmetic. They were also well versed in the use of fractional numbers and surds, mensuration and construction of simple geometric figures and could solve algebraic problems also. In arithmetic, they were masters of numbers and could use large numbers. They had developed an extremely scientific numeral terminology based on the scale of 10.

Present paper deals with exhaustive review of literature based on Vedic mathematics. We will show how Vedic mathematics can be useful for fastest growing and even changing world in modern era. We will display how Vedic mathematic algorithm can be proved efficient for faster mental calculations. We will suggest how researchers can work on it for its usefulness in various branches like engineering, astronomy, mathematics, etc.

Keywords: *Vedic Mathematic, Darsana, Pattern Recognition, Sutras, Algorithms, Modern Era.*

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"लिङ्ग. महापुराण में योग विज्ञान"

पारूल खण्डेलवाल
शोधार्थिन, संस्कृत विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

भूमिका –

योग का एक अर्थ जोडना तथा द्वितीय अर्थ उपाय होता है । महर्षि पतञ्जलि के अनुसार चित्त की वृत्तियों को रोकना 'योग' कहलाता है । पाशुपत सूत्र में चित्त के द्वारा ईश्वर व जीव के संबंध को योग कहा गया है । योग का अर्थ आत्मा का परमेश्वर में विलय नहीं अपितु दोनों का एक–दूसरे के साथ सम्पर्क होना होता है । इस प्रकार साधक की आत्मा का परमात्मा के साथ स्थिर एक्य को योग कहते हैं ।

विभिन्न विषयों के परिपेक्ष्य में "संस्कृतज्ञानविज्ञानस्य वैश्विक चिन्तनम्" के विभिन्न उपविषयों द्वारा शोध चर्चाओं के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है जिस पर विभिन्न शोध–पत्र प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया है इसी क्रम में मैं "लिङ्ग. महापुराण में योग विज्ञान" विषय पर अपना शोध पत्र प्रस्तुत करना चाहती हूँ क्योंकि मेरा शोध विषय भी इसी से सम्बन्धित है ।

- **लिङ्ग. पुराण में योग विज्ञान**

लिङ्ग. पुराण के अनुसार जीव को परमार्थ तत्व का ज्ञान होना ही 'योग' कहा जाता है। वास्तव में चित्त की वृत्तियों पर नियंत्रण करना ही योग है । सिद्धि प्राप्ति के लिए लिङ्ग. पुराण में योग के आठ साधन बताए हैं– यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथ समाधि ।

इस दुःखमय संसार में सभी जीव अपने–अपने कर्मों के फल भोग रहे हैं, इनकी मुक्ति का केवल एक साधन ही 'योग' है । कर्मबन्धन से मुक्त होने के उपाय को ही किसी के द्वारा ज्ञान कहा जाता है तो किसी के द्वारा योग । परन्तु योग हीन ज्ञान और ज्ञान हीन योग कभी भी मोक्षप्रद नहीं हो सकता है

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अतएव मुमुक्षु को दृढ़ता के साथ दोनों का ही अभ्यास करना चाहिए । योगाभ्यास के द्वारा चित्त की एकाग्रता प्राप्त होने पर ज्ञान उत्पन्न होता है व उसी ज्ञान के माध्यम से जीवात्मा की मुक्ति संभव होती है ।

- **निष्कर्ष –**

योग की शिक्षा केवल योगियों के लिए नहीं अपितु सर्वसाधारण के लिए होती है । संक्षेप में यौगिक जीवन का अर्थ है शरीर का युक्त व्यायाम, सात्विक आहार और ब्रह्म विद्या का अध्ययन । समय की परिवर्तनशीलता के साथ–साथ सभी बातों में भी विकार होना स्वाभाविक है। अनेक प्रकार के आडम्बरों के द्वारा, स्वार्थ साधना के द्वारा योग की क्रियाओं को प्रदर्शित कर योग करना कहा जा रहा है जो सर्वथा अनुचित है । ऐसे लोगों से सावधान रहने व वास्तविक योग के प्रचार की अत्यन्त आवश्यकता है ।

इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर जगद्गुरू रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालयः जयपुरम् में "संस्कृतज्ञानविज्ञानस्य वैश्विक चिन्तनम्" विषय पर कार्य अत्यन्त सराहनीय है साथ ही शोधार्थियों तथा विद्यार्थियों के लिए यह अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा । मैं शोधपत्र द्वारा अपना योगदान इस संगोष्ठी में देना चाहती हूँ । मुझे आशा है कि मेरा शोध पत्र अवश्य स्वीकार किया जावेगा।

पारूल खण्डेलवाल
शोधार्थिन, संस्कृत विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर (राज.)
मोबा.नं. 9571505679
ई–मेल – parul6827@gmail.com

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सारांशः

"**लक्षणाविमर्शः**" इति शीर्षकमादाय विलिखितः शोधलेखः लक्षणाख्यां पदवृत्तिं विषयीकरोति। विशिष्य अलङ्कारशास्त्रे विचारसरणीङ्गताया एव लक्षणायाः विस्तारः वर्तते। परमादौ तावत् लक्षणायाः पदवृत्तित्वं प्रकाशितं भवति। ततः आचार्यानन्दवर्धनादारभ्य अप्पयदीक्षितं यावत् अतिविपुलायां काव्यशास्त्रपरम्परायां प्रायः यावन्तः वादाः वर्तन्ते। तान् संक्षिप्य शोधलेखेऽस्मिन् विषयीकर्तुं प्रायितिषि। अपि च नागेशादीनामपि लक्षणास्वरूपमत्र दिङ्मात्रतया प्रतिलक्षिष्यते।

अभिषेक कुमार

शोधार्थी, साहित्य-विभाग

रा.सं.सं. जयपुर परिसर

mail-upabhi009@gmail.com

mob- 8955783132

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मनोविज्ञान की तुलनात्मक पृष्ठ भूमि

सारांश –

आधुनिक मनोविज्ञान की खोज चिकित्सा विज्ञान के कार्यकर्ताओ की देन है। इन खोजो की शुरुआत डॉ. फ्रायड ने की स्वयं प्रारम्भ मे शारीरिक रोगो के चिकित्सक थे उनके यहॉ कुछ ऐसे रोगी आये जिनकी सब प्रकार की शारीरिक चिकित्सा होते हुये भी रोग जाता नही था। ऐसे कुछ जटिल रोगियो का उपचार डॉ. ब्रूअर ने केवल प्रतिदिन बातचीत करके तथा रोगी की व्यथा को प्रतिदिन सुनकर किया। इस अनुभव से ये पता चला की मनुष्य के बहुत से शारीरिक और मानसिक रोग ऐसे भी होते है, जो किसी प्रकार की प्रबल भावनाओ के दमित होने से उत्पन्न हो जाते है , ओर जब इन भावनाओ का धीरे – धीरे प्रकाशन हो जाता है तो ये समाप्त भी हो जाती है। आधुनिक मनोविज्ञान अब भगवान बुद्व और महर्षि पातंजलि की खोजो की ओर जा रहा है। मन के उपर्युक्त तीन भागो के परे एक ऐसी स्थिति भी है जिसे एक ओर शून्य रुप और दूसरी ओर अनंत ज्ञानमय कहा जा सकता है । हमारी संस्कृति के प्राचीन साहित्य विशेषकर ब्राहमाण ग्रन्थो उपनिषदो एवं गीता मे मन का विशद वैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है। इनमे के गुण धर्म,स्वरुप और कार्यो की समीक्षा हैं जो अतित, वर्तमान ओर भविष्य तक को यह देख सकता है मन को मानव हदय मे रहने वाली ज्योति माना है।प्राचीन व आधुनिक मनोविज्ञान को जानने के बाद ही हम कह सकते है की आधुनिक मनोविज्ञान के द्वारा सब समस्याओ का निदान किया जा सकता है।

अरविन्द कुमार

शोध छात्र/शोधार्थी (शिक्षा)

जगदगुरु रामानन्दाचार्य राज. संस्कृत वि.वि. जयपुर (राज.)

मो. 9887494956

Email Id – arvind.hrs.sharma@gmail.com

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भारतीय परम्परा में विभिन्न ज्ञान–विज्ञान : अथर्ववेद के विशेष सन्दर्भ में

DR. MEENA CHARANDA
ASSOCIATE PROFESSOR
KALINDI COLLEGE ,
(DELHI UNIVERSITY)

भारतीय संस्कति के इतिहास में वेदों का स्थान नितान्त गौरवपूर्ण है । श्रुति की दृढ आधारशिला के ऊपर भारतीय धर्म तथा सभ्यता का भव्य विशाल प्रासाद प्रतिष्ठित है । सामाजिक आचार - विचार रहन - सहन तथा धर्म - कर्म को भलीभाँति समझने के लिये ज्ञान विज्ञान का होना परमावश्यक है । चारों वेद सहिताओं में संकलित मन्त्रों की संकलन प्रक्रिया भिन्न है । ऋग्वेद के मन्त्र अधिकांश में परमात्मा के वाचक विभिन्न देवताओं की स्तुतियों में प्रस्तुत किये गये हैं जबकि यजुर्वेद में विभिन्न यज्ञ यागादि कर्मकाण्ड के बोधक तथा तत् तत् कर्म में विनियुक्त होने योग्य मन्त्र संकलित हैं । सामवेद में केवल उपासना परक मन्त्रों को ही वर्णित किया गया है । इनमें अधिकांश मन्त्र ऋग्वेद में आये हुये हैं । किन्तु अथर्ववेद का मन्त्र क्रम भिन्न है यहाँ विभिन्न काण्डों में मानव के लिये उपयोगी विभिन्न विद्याओं तथा ज्ञान - विज्ञान के निरूपक मन्त्र पृथक् - पृथक् सूक्तों में उल्लिखित हुये हैं । इन विद्याओं को सामान्यतया सूचीबद्ध करना कठिन है । अत: कहा जा सकता है कि आध्यात्मिक विद्याओं के साथ- साथ अनेक लौकिक विद्यायें (Secular Sciences) भी इस वेद का वर्ण्य विषय बनी हैं । विद्वानों एवं चिन्तकों का मत है कि अथर्ववेद में निरूपित ज्ञान विज्ञान का भण्डार इतना वैविध्यपूर्ण तथा प्रगाढ है कि उसकी विस्तृत व्याख्या तथा आलोचना सामान्य व्यक्ति के लिये सम्भव नहीं है । अत: इस सन्दर्भ में कुछ अथर्वगत ज्ञान – विज्ञानों की चर्चा प्रस्तुत है –

शरीर सम्बन्धी विज्ञान –

महाकवि कालिदास के शब्दों में हमारा शरीर धर्म की साधना का मूल है1। किन्तु अन्यत्र उसे रोगों का खजाना [व्याधिमन्दिर] भी कहा गया है २। दोनों कथन अपने –

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अपने सन्दर्भों में सही हैं । इस प्रकार अथर्ववेद में यत्र – तत्र हमारे शरीर की रोगी तथा पीडित करने वाली व्याधियों का वर्णन मिलता है, साथ ही विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों तथा रोगनिवारण के उपायों की चर्चा यहाँ प्राप्त होती है ।

स्पर्श चिकित्सा –

रोगों से छुटकारा पाने की अनेक पद्धतियों का संसार में चलन है । विभिन्न औषधियाँ , जडी – बूटियाँ तथा अन्य पदार्थ औषधि निर्माण में प्रयुक्त होते हैं । रोग तो शरीर में उत्पन्न होता है यदि चिकित्सक या कोई अन्य व्यक्ति रोगी के रोगाक्रान्त अंग का संस्पर्श करे तथा सहानुभूतिपूर्वक उससे वार्तालाप करे तो पीडित व्यक्ति को निश्चय ही सान्त्वना तथा सुख की अनुभूति होती है इसी को स्पर्श - चिकित्सा कहते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत उच्चारण में वैज्ञानिक आधार

राजकुमार शर्मा

शोधच्छात्र

ज.रा.रा.सं.वि.वि.

Raj.sharma1018@gmail.com

सारांश

संस्कृत भाषा में उच्चारण के कई वैज्ञानिक व भाषा वैज्ञानिक अध्ययन यह बताते हैं कि बालक का प्रथम उच्चारण स्वर से होता है। यह पूरे ब्रह्मांड का प्रथम अक्षर है जो स्वभाविक रूप से आज भी हम अनुसरित करते हैं। ब्रह्मांड का सबसे अधिक सुनाई देने वाला स्वर ॐ है।

पाणिनीय शिक्षा में उच्चारण के ज्ञान को "शिक्षा" कहा है

भाषा विज्ञान के आधार पर संस्कृत भाषा में सभी प्रकार के स्वरों का उच्चारण दिया गया है। पतंजलि के अनुसार पाणिनीय शिक्षा में सभी स्वरों के उच्चारण की वैज्ञानिकता बताई है। उदास अनुदान और स्वररित आदि भेजो से स्वर को बतलाया है। ज्योतिष विज्ञान में भी 108 वर्णों को नक्षत्रों में और राशियों में विभाजित किया है प्रत्येक नक्षत्र में 4 वर्ण वह प्रत्येक राशि में 9 वर्ण दिए हुए हैं। गायत्री मंत्र के उच्चारण में नः का उच्चारण वयम् के लिए हुआ है। लेकिन उच्चारण की गलती के कारण न का प्रयोग निषेधात्मक में होने के कारण मंत्र का प्रभाव उल्टा हो जाता है। जिस कारण दुष्प्रभाव से बुद्धि दुर्बल हो जाती है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भास के नाटको में सामाजिक चेतना

सार

नाटककार भास विरचित तेरह नाटकों में आदर्श भारतीय जीवन का चित्रण है। इससे सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य नाटक की परम्परा को चरमोत्कर्ष माना जाता है। भास के नाटकों की जितनी प्रशंसा की जाए उतनी कम है। नाटककार भास ने व्यवहारिक धरातल पर उतर कर जिन मानव मूल्यों को प्रस्तुत किया है वे अन्यत्र दुलर्भ है। नाटकों में विभिन्न घटनाओं की योजना इस प्रकार की गई है कि कथा विकास में किसी प्रकार की बाधा नहीं पड़ती अपितु छोटी से छोटी घटना का भी उसमें महत्व हैं। भास के नाटकों का सामाजिक राजनैतिक तथा जीवन मूल्य आदि की दृष्टि से बड़ा महत्व है। नाटकों में प्रयुक्त किये गये श्लोक व पंक्तियाँ बडे ही महत्वपूर्ण प्रेरणादायक तथा शिक्षाप्रद है। भास के नाटकों में वर्णित सामाजिक चेतना में राजा के कर्त्तव्य तथा राजा के गुण, मानव स्वभाव की स्वभाविक वृतियों का निर्देशन, आपसी प्रेम तथा लगाव अतिथि सत्कार, सुख–दुखः का स्वभाविक वर्णन, तथा लोक व्यवहार का उत्तम उदाहरण , आदर्श भारतीय संस्कृति का चित्रण तथा उपदेश वन्य संरक्षण तथा पशु प्रेम भावना वृक्षों के प्रति प्रेम, परोपकारिता की ओर संकेत देते है। उपर्युक्त विवेचन के बाद हम कह सकते है कि भास के नाट्यकला देश, जाति तथा काल की सीमाओं में विकसित होने के कारण सार्वभौमिक सुख एवं आनन्द की धारा प्रवाहित करती है। भास के नाटक अतिप्राचीन होने पर भी जीवन रस से सम्पुष्ट होने के फलस्वरूप आज भी सजीव मालूम पड़ते है। आज के समाज में पशुधन सरंक्षण, आपसी प्रेम, महिलाओं का सम्मान, पर्यावरणीय सुरक्षा, दहेज की समस्या, देश प्रेम, आदि की दृष्टि से वर्तमान संदर्भ में भास के नाटक समाज के लिए प्रेरणादायक है, तथा चेतना जागृत करने का भी कार्य करते है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वैदिक ज्ञान–विज्ञान परम्परा में वैश्विक मूल्यपरक शिक्षा

डॉ. शिव कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर (तदर्थ)
कालिन्दी महाविद्यालय
संस्कृत विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली
ई–मेल : shivkumarshastri@gmail.com
मो.नं. 9654749537

शिक्षा ही किसी भी राष्ट्र का आधार होती है। वही उसकी प्रगति का केन्द्र बिन्दु होती है। जैसी शिक्षा होगी राष्ट्र वैसा ही बनेगा। शिक्षा ही किसी समुन्नत एवं समृद्ध राष्ट्र की पहचान है उसका मापक है।

वस्तुतः वैदिक शिक्षा की विशेषता थी कि वह केवल पुस्तकीय ज्ञान एवं बुद्धि परिष्कार तक सीमित न थी अपितु उसके द्वारा व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन का परिष्कार किया जाता था। व्यक्ति का मन, बुद्धि शरीर तथा आत्मा ये सभी घटक जिस प्रकार भी समुन्नत अवस्था को प्राप्त कर सकें यह व्यवस्था वैदिक परम्परा में निहित थी।

इसीलिए भारतीय वैदिक विचारधारा में भारत का इतिहास ज्ञान–विज्ञान का इतिहास रहा है। इस परम्परा में इस प्रगति का मुख्य कारण यहाँ की संस्कृति एवं उसके आधार वेदों को माना जा सकता है। वैश्विक मूल्यपरक शिक्षा के सम्बन्ध में वैदिक दृष्टिकोण का आधार मनोविज्ञान के वे सिद्धान्त हैं जिन्हें 'बाल मनोविज्ञान' (Child Psychology) का अङ्ग कहा जा सकता है। इस सम्बन्ध में सबसे प्रथम सिद्धान्त यह है कि बालक के व्यक्तित्व का निर्माण संस्कारों से होता है। बचपन में जैसे संस्कार उस पर पड़ेंगे वैसा उसका व्यक्तित्व स्थापित होगा इसी तथ्य को ध्यान में रखकर वैदिक ज्ञान–विज्ञान परम्परा में संस्कारों को दो भागों में बाँटा गया था–

(i) प्रसव के पूर्व (Pre-natal)

(ii) प्रसवोत्तर (Post-natal)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मनोविश्लेषणवाद के प्रवर्त्तक फ्रायड का मानना है कि जब बच्चा माँ की गोद में अँगूठा सूच रहा होता है, तभी से उस पर वे संस्कार पड़ रहे होते हैं जो उसके भावी जीवन का निर्माण करते हैं। इस प्रकार वैदिक विचारधारा में इन संस्कारों को नियन्त्रित करने के लिए विशेष व्यवस्था थी–

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः।[1]

यहाँ आचार्य का अभिप्राय है जो विद्यार्थी को आचार सिखाये, सदाचारी बनाये। आचार्य का काम वस्तुतः अपने शिष्य को जहाँ शास्त्रों में निपुण करना था, वहाँ उसको सदाचार की शिक्षा देना भी था इसीलिए छात्र को वैदिक शिक्षा प्रणाली में 'ब्रह्मचारी' कहा गया है।

---

1 अथर्व. का. 11, मं. 3

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संस्कृतशास्त्र शिक्षण में नवाचारों की उपादेयता

–जितेश कुमार शर्मा

संस्कृते संस्कृतिर्ज्ञेया संस्कृते सकलाः कलाः।
संस्कृते सकलं ज्ञानं संस्कृते किन्न विद्यते।।

संस्कृतभाषा विश्व में प्रचलित अन्यभाषाओं की जननी ही नहीं अपितु भारतीय संस्कृति की जन्मधात्री भी है। जो हमें 'वसुधैव कुटुम्बकम्' तथा 'सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः सर्वेभद्राणि पश्यन्तु माकश्चिद् दुःखमाप्नुयात्' अर्थात सभी प्राणीमात्र को विश्व में एक परिवार की तरह रहने का और जनकल्याण की भावना का संदेश देती है। संस्कृति के प्रथम ग्रंथ वेद सहित रामायण, महाभारत आदि ने हमारे धर्म, संस्कृति, सभ्यता और राष्ट्र के मूल्यों को परिपोषित किया है। यह इतना समृद्ध व विपुल साहित्य है। जो मानव के आध्यात्मिक, मानसिक, नैतिक, चारित्रिक आदि प्रत्येक क्षेत्र को समृद्ध व सुखमय बनाता है। आज वैश्विक परिस्थितिया बदलने के साथ ही पारस्परिक सामाजिक असंतुलन तथा मानवता के बढ़ते हुए वैमनस्य प्रभाव को रोकना अत्यन्त जरूरी है। इसको रोकने का एकमात्र उपाय है तो वह केवल संस्कृतसाहित्य है। इन समस्याओं को हल करने हेतु संस्कृत शिक्षकों को नवीन विचारधारा अपनाने की आवश्यकता है। नई कार्यपद्धितियो एवं नई तकनीक द्वारा अधिकाधिक गुणवत्तापूर्ण एवं परिवर्तित रूप में जिन गतिविधियों या क्रियाकलापो का समावेश किया जाता है उनमे नवाचारों की विशेष महती भूमिका है।

संस्कृतभाषा के प्रचार प्रसार हेतु वर्तमान मे अनेक संस्थाऐ संचालित है। किंतु अन्य भाषाओं की अपेक्षा इसमे नवाचारो का प्रायः अभाव देखने को मिलता है। आज वैज्ञानिक युग में संस्कृत भाषा प्रेमियों का अपनी योग्यता का पूर्ण प्रदर्शन करने का माध्यम प्रमुख नवाचारों टी.वी., कम्प्यूटर, प्रोजेक्टर, इंटरनेट, यूट्यूब आदि के द्वारा शिक्षण कों प्रभाव पूर्ण और रोचक प्रस्तुत कर कक्षा–कक्ष के माध्यम से राष्ट्र के प्रत्येक जन– मानस तक पहुचाया जा सकता है। जिससे भारतीय विरासत संस्कृतशास्त्र से पूर्ण परिचित होकर अपने दैनिक व्यवहार मे संस्कृत को समाहित कर राष्ट्र निर्माण में अपना योगदान देने के लिए वचनबद्ध हो सकेगें।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

राजस्थानप्रान्ते संस्कृतशिक्षणस्य आधुनिकविधीनां संवर्धने संस्कृतभारत्याः योगदानम्

हिम्मत सिंह चौहानः
शोधच्छात्रः (संस्कृतम्)
सम्राट–पृथ्वीराज–चौहान–राजकीय
महाविद्यालयः, अजयमेरुः

डॉ० आशुतोष पारीकः
सहायक–आचार्यः(संस्कृत–विभागः)
सम्राट–पृथ्वीराज–चौहान–राजकीय
महाविद्यालयः, अजयमेरुः

संस्कृतभाषा विश्वस्य प्राचीनतमा भाषा वर्तते। अतएव प्राचीनकालात् वर्तमानकाले संस्तशिक्षणस्य अतीव महत्त्वं वर्तते। प्राचीनकाले तु भारतीयशिक्षापद्धत्याः मूलस्रोतः वेदा एव आसन्। तत्कालीनशिक्षायाः सम्पूर्णं स्वरूपं सामाजिकदृष्टिकोणाधारित आसीत् अर्थात् छात्राणां कृते तदेव शिक्षणं भवति स्म, यस्य आवश्यकता समाजनिमित्तं भवति स्म। तस्मिन् समये कण्ठस्थीकरणस्योपरि बलं मौखिकत्वेन दीयते स्म। आधुनिकसमये संस्कृतशिक्षणे विभिन्नविधानां विविधप्रविधीनां च शिक्षणार्थं प्रयोगः प्रचलति, यस्मिन् राजस्थानप्रदेशे संस्कृतभाषायाः प्रचारप्रसाराय कृतसंकल्पं संस्कृतभारती–संघटनमपि आधुनिकसंस्कृतशिक्षणविधीनां संवर्धने संलग्नमस्ति। संस्कृतभाषायाः शिक्षणं शिक्षाजगति प्राचीनकालादेव प्रचलति।

सम्भाषणशिविररूपेण प्रारब्धा संस्कृतभारती वर्तमानयुगे संस्कृतशिक्षणस्य वैज्ञानिकविधीनां प्रयोगे संवर्धने च प्रयोगशालावदस्ति। संस्कृतभारतीपक्षतः विश्वस्य सर्वासां संस्कृतीनां पोषिकायाः संस्कृतभाषायाः अध्ययनम् अध्यापनं च प्रभावी कर्तुं राजस्थाने 1996तः अद्यावधि अनेकविधयः संपोषिताः। राजस्थाने संस्कृतशिक्षणस्य विविधविधीनां प्रयोगकरणे अपि अभिभावकानां छात्राणां च इयं धारणा यत् संस्कृतभाषा रटनाभ्यासेन एव अधिगम्यते, अस्य समाधानाय संस्कृतभारत्या सरलसंस्कृतसंभाषणादिशिविराणाम् आयोजनं कृत्वा जनानाम् एतादृशी मानसिकता अपाकृता। संस्कृतभारत्याः प्रयासानां प्रभावोऽस्ति यत् वर्तमानकाले कक्षा षष्ठीतः द्वादशीपर्यन्तं निर्मितपुस्तकानां माध्यमं संस्कृतमेवास्ति। यद्यपि शिक्षणार्थं शिक्षकेषु इतोऽपि प्रयासाः अपेक्षिताः तथापि संस्कृतमपि संस्कृतमाध्यमेन पाठयितुं पठितुं च शक्यते इति मनसि धारणा स्थापिता। सम्प्रति अस्य पोषणाया संवर्धनाय च प्रयासाः अपि संस्कृतभारत्या विधीयन्ते। सर्वकारपक्षतोऽपि संस्कृतं संस्कृतमाध्यमेन शिक्षणाय प्रयासाः क्रियमाणाः सन्ति। संस्कृतभारतीद्वारा कृतप्रयासानामेव परिणामोऽस्ति यत् विद्यालयेषु संस्कृतशिक्षणेऽपि चतुर्णां भाषाकौशलानां विकासाय चिन्तनं प्रारब्धम्।

संस्कृतशिक्षणस्य नवीनविधिषु प्रायशः पाठ्य–पुस्तकविधिः, प्रत्यक्षविधिः, विश्लेषणात्मकविधिः, व्याख्याविधिः, व्याकरणविधिः, हरबर्टीयपंचपदीविधिः, संरचनात्मकोपागमविधिः, मूल्यांकनविधिः इत्यादीनां गणना संस्कृतभाषायाः कृते क्रियते, किन्तु विभिन्न–नवाचारैः संस्कृतभारती माध्यमेन सम्पूर्णराजस्थानप्रदेशे परिवर्तितं संस्कृतमयवातावरणं संस्कृतशिक्षाक्षेत्रे अधुना अस्माभिः द्रष्टुं शक्यते। संस्कृतभारती आवासीयसंस्कृतसंभाषणवर्गाणाम् आयोजनं कृत्वा संस्कृतशिक्षकाणां, छात्राणां, जनानां कृते संस्कृतशिक्षणस्य आधुनिकविधीनां संप्रेषणं करोति, येन छात्राणां कृते संस्कृतभाषायाः शिक्षणं संस्कृतमाध्यमेन एव विद्यालयेषु प्रचलति।

अतः राजस्थानप्रदेशे संस्कृतशिक्षणस्य आधुनिकशिक्षणविधीनां संवर्धने संस्कृतभारत्याः योगदानमिति विषये एतत् शोधपत्रं प्रस्तूयते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नारी सशक्तिकरण

दिनेश कुमार शर्मा

शोधछात्र ज.रा.रा.सं.विश्वविद्यालय, जयपुर

शोधसार

मनुष्य ईश्वर की सर्वोत्तम रचना है। इस सर्वोत्तम रचना में नारी का स्थान महत्वपूर्ण है। जैसा कि प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् वराहमिहिर ने अपने ग्रंथ **वृहत्संहिता** मे कहा है कि ब्रह्मा ने स्त्री के सिवाय ऐसा कोई रत्न नहीं बनाया जो दिखाई देने, सुनाई देने, स्पृष्ट होने या स्मरण में भी आने पर सुखदायी होती है। **मनुस्मृ**ति में कहां गया है कि **''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः''** अर्थात जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता रमण करते हैं। उस कुल या वंश में दिव्यगुण, दिव्यभोग और उत्तम संतान होती है।

वेदों के अनुसार नारी को अत्यन्त महत्वपूर्ण, गरिमामय उच्चस्थान प्रदान करते हैं। वेदों में स्त्रियों की शिक्षा, दीक्षा, शील, गुण कर्तव्य, अधिकार और सामाजिक भूमिका का सुंदर वर्णन पाया जाता है। ऐसा संसार के किसी अन्य ग्रंथों में नहीं देखा गया है। वेदों में नारी को घर की सम्राज्ञी कहा गया है। वेदों में नारी को देश की शासक, पृथ्वी की सम्राज्ञी तक बनने का अधिकार देते हैं। वेदों में नारी को **''स्त्रीयज्ञीय''** बताया गया है अर्थात नारी यज्ञ समान पूजनीय है। वेदों में नारी को याज्ञ देने वाली, सुख–समृद्धि लाने वाली, विशेष तेजवाली, विदुषी, सरस्वती, इंद्राणी, उषा इत्यादि अनेक आदर सूचक नामों से संबोधित किया है। **अथर्ववेद में** नारी के लिए कहा गया है की हे पत्नी ! ''मैं ज्ञानवान हूं तो तू भी ज्ञानवती है, मैं सामवेद हूं तो तू ऋग्वेद वेद है।'' इसी प्रकार हिंदी के एक लेखक द्वारा कहा गया है–

नारी नर की खान है नर नारी का पौधा। नारी से पैदा हुए अर्जुन जैसे जोधा।।

यह बात बिल्कुल सत्य है कि अच्छे से अच्छे लोगों की सृष्टि कर्ता नारी ही है। भगवान राम, कृष्ण, शेक्सपियर, अटलजी,मोदीजी, सचिन तेंदुलकर, साइना नेहवाल आदि सभी विश्वप्रसिद्ध नायकों को किसी न किसी नारी ने हीं जन्म देकर पृथ्वी की धुरी को सशक्त बनाया है।

नारी सशक्तिकरण से आशय है कि महिला अपने सभी कार्यों को संपन्न करने के लिए स्वयं निर्णय ले सके तथा उनके आर्थिक फैसलों, आय, संपत्ति, शिक्षा और दूसरी वस्तुओं की उपलब्धता से है। इन सुविधाओं को पाकर ही वह अपने सामाजिक स्तर को ऊंचा कर सकती हैं नारी सशक्तिकरण के माध्यम से महिलाओं को आगे बढ़ाकर 21वीं सदी के युग में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर अपने निर्णय ले सकें तथा समाज में अपना वर्चस्व बना कर चल सके।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लिपिविज्ञानम्

विद्वान् वि.श्रीनिधिः,
वेद-वेदान्त-अध्ययन-शोधसंस्था,
न्यू-डेल्लि - ११००७०
Ph no - 6281677057

उपोद्घातः

का नाम लिपिः ?

पुरुषेण ज्ञानसंरक्षणार्थं ज्ञानावबोधनार्थञ्च हस्तप्रक्रियया अक्षरविन्यासेन शिला-पत्र-पुस्तकादिषु निबद्धा या कृतिः, लिपिरिति कथ्यते । अङ्ग्लभाषायां manuscript

Manu / manus = by hand + script = writing

हस्तेन + लिखितम् = हस्त-लिखितम् इति भवति ।

"मानुस्क्रिप्ट्" इति पदन्तु मूलतः लाटिन्भाषायां manuscriptus इत्यभूत्। षोडशशतमानानन्तरं manu-script इति परिवर्तितम्। सामान्यतः, पञ्चसप्ततिसंवत्सरेभ्यः प्राक् विज्ञान-इतिहास-साहित्य-सौन्दर्यमूल्याधारितविषयान् पुरुषहस्तैः लिखितरूपेण पत्रादिषु निबन्धनप्रयतिः "पत्रलिपिः" इति अङ्गीकृता।

"A hand written document of scientific, historical, literary or of asthetic value which is atleast 75 years old."

(Antiquities and art treasures Act 1972)

भारतीयेतिहासे लिपिविज्ञानम्

पूर्वं तु ज्ञानस्य परिरक्षणं मूलपुरुषेण स्वीयशिष्याणां बोधनेन तैः स्वकीयशिष्याणाम् अध्यापनेन तैश्च तदुत्तरशिष्येभ्यः उपदेशकरणेन कृतमासीत्। तदुत्तरकाले नानास्थलस्थ-पाषाणमयशिलासु रचनेन ज्ञानस्य संरक्षणं प्राचुर्यं च कृतम्। लेखनीयपाषाणादिकं सर्वत्राविद्यमानत्वात् ताम्र-ताल-भूर्ज-सञ्चपत्पत्रादिषु रचनेन, अनुवादकरणेन संक्षेपकरणेन क्रोडीकरणेन च पालन-प्रचुरता-अभिवृद्धयश्च अभूवन्। भारतीय-हस्तलिखितग्रन्थाः बहुशतमानेभ्यः प्रागेव प्रापञ्चिककल्पनां ददृशुः। चैनादेशीयः "ह्य्सेन् साङ्ग्" महोदयः भारतदेशस्य सहस्राधिकान् अत्युपयुक्तान् अस्मदीयहस्तलिपिग्रन्थान् स्वीयदेशात् प्रेषितवान्। अष्टादशशताब्द्याः उत्तरार्धे "अवध् नवाब्" महाभागः "बादशाह नाम" भव्यं प्रकाशितं हस्तलिपिग्रन्थं पारितोषिकरूपेण इङ्ग्लैण्ड देशस्य राज्ञे "जार्ज" नाम्ने अददात्। सम्प्रति रायल् संग्रहालये अत्युत्तमासामान्यग्रन्थत्वेन परिगण्यते।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अष्टादशशताब्देरुत्तरार्धे नवदशशताब्देरारम्भकाले ओरियण्टलिस्ट् समुदाये विद्यमाना अनेकासामान्यपुरुषाः भारतोपखण्डस्य नागरिकतायाः विविधांशान् व्यवस्थितरूपेण अध्येतारः ज्ञानिनः सुप्रसिद्धभाषाशास्त्रज्ञाः "एशियाटिक् सोसाइटी आफ् बेङ्गाल" संस्थापकाः "विलियम् जेम्स्" , तेलुगुभाषापण्डितः "सी.पी.ब्राउन्" , आङ्ग्लभाषाशास्त्रज्ञः "जान् लेडेन्" , भारतदेशसर्वकारीयप्रथमसर्वेक्षकः "कालिन् माकेञ्जी" , संस्कृतभाषाशास्त्रज्ञः "चार्लेस् विल्किसन्" , अनेकसंस्कृतग्रन्थानामनुवादकः "एच्.एच्.विल्सन्" इत्यादयः नैके विद्वांसः सुवर्ण-रजत-ताम–वस्त्र-पत्रादिषु उपनिबद्धासु अपारज्ञाननिधिषु भरतभूमिसंस्कृतिसम्बद्धेषु बह्वंशेषु तीव्रासाक्तिं प्रकटयामासुः। अपि च तेषां वैयक्तिकसंग्रहान् "इण्डिया आफीस् लाइब्ररी" , भारतीयासु विविधासु संस्थासु, ब्रिटन्देशीयासु इतरासु संस्थास्वपि निक्षिप्तवन्तः। पञ्चदश-नवदशशताब्देः मध्यावधौ एव लक्षाधिकाः ग्रन्थाः लिखितमानाः भूत्वा, तेषां दशांशग्रन्थाः एव उपलब्धाः इति इतिहासः सूचयति ।

१८०३ संवत्सरे एव तदानीं वर्तमानामत्यन्तोपयुक्तानां भारतीयकृतीनां सूची "एशियाटिक् समाज्" संस्थायां निक्षिप्ता वर्तते। (As quoted in M.L.Saini, Manuscritp literature in Indian Languages in ILA Bulletin, 5.1. Jan-Mar 1969 pp 6-21) चतुर्वर्षानन्तरं तदीयसंस्थायाः चतुर्थाध्यक्षः "एच्.टी.कोल् ब्रूक्" तादृशसूचीपुस्तकं प्रतिवर्षं प्रकटयितुं पञ्च वा षट्सहस्ररूप्यकाणि धनसाहाय्यं कर्तुं भारतसर्वकारं च प्रार्थितवान्। सर्वकारेण करणेऽपि साहाय्ये ते महाभागाः तादृशीं सूचीं स्वयं प्रकटितवन्तः। कुर्वन्तः सन्त्यधुनापि।

लिपिवैविध्यम् ।

पुरा काले पाण्डुलिपिग्रन्थाः ब्राह्मीलिपौ खरोष्टिलिपौ च लिखिताः आसन् । अनन्तरं ब्राह्मीलिपिः द्वेधा विभक्ता ।

औत्तरीयम्	**दाक्षिणात्यम्**
१. देवनागरीलिपिः	१. ग्रान्थिकलिपिः
२. प्रादेशिकभाषीयलिपयः	२. प्रादेशिकभाषीयलिपयः
(गुजराती, बेङ्गाली, पञ्जाबी इत्यादयः)	(तेलुगु, कन्नडा, तमिळु, ओरिया इत्यादयः)

लिपिग्रन्थानाम् उपकरणानि ।

१. लेख्यसामग्री - रचितुं योग्यं तलम्, अधिकरणं क्षेत्रं वा । तद्धि ए). शिलातलम् (Rock Surface) बि).ताम्रपत्रम् (Inscriptions in Copper Plates).

सी) ताळपत्रम् (Palm Leaf) त्रिविधम्

ए). खालतालपत्रम् (Borassasus Flabellifer) - प्राथमिकावस्थायां मृदु कोमलञ्च वर्तते चेदपि कीटादिभिः संरक्षितुं दुष्करम् ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

महिला सशक्तिकरण

डॉ. शिवानी भटनागर/डॉ. सोनिका कक्कड़
व्याख्याता
लाल बहादुर शास्त्री शिक्षक प्रशिक्षण
महाविद्यालय, कोटा

भारतीय संस्कृति का आधार स्तम्भ भारतीय नारियों को कहा जा सकता है। भारतीय नारियों ने अपनी संस्कृति के पावन प्रवाह को अखिरल एवं अक्षुण्ण बनाए रखा है। भारत की संस्कृति में महिला का सम्मान सर्वोपरि है। कहा जाता है कि नारी की पूजा जिस समाज में की जाती है उस समाज में देवता का वास होता है। लेकिन अपसंस्कृति के कारण आज महिलाऐं दायम दर्जे की होकर जीवनयापन कर रही ह। इस देश की आधी आबादी महिलाओं की है इसलिये देश को पूरी तरह से शक्तिशाली बनाने के लिये महिला सशक्तिकरण जरूरी है। अपने निजी स्वतंत्रता और स्वयं के फैसले लेने के लिये महिलाओं को अधिकार देना ही महिला सशक्तिकरण है। महिला सशक्तिकरण में वो ताकत है जो समाज और दूश में बहुत कुछ बदल सकती है। महिलायें किसी समस्या को पुरुषों की अपेक्षा बेहत्तर ढंग से निपट सकती है। भारत में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिये सबसे पहले समाज में उनके अधिकारों और मूल्यों को मारने वाले उन सभी राक्षसी सोच को मारना जरूरी है। जैसे दहेज प्रथा, अशिक्षा, यौन हिंसा, असमानता, भ्रूण हत्या, महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा, बलात्कार, मानव तस्करी आदि। ऐसे ही दूसरे और भी विषय है, लैंगिक भेदभाव, सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक अंतर भी है। यह सब देश को पीछे ढकेल रहा है।

महिलाओं को मजबूत बनाने के लिये तथा उनके खिलाफ होने वाले दुर्व्यवहार, लैंगिक भेदभाव, सामाजिक अलगाव तथा हिसा आदि को रोकने के लिये सरकार कई सारे कदम उठा रही है।

भारत सरकार द्वारा महिला सशक्तिकरण के लिए कई सारी योजनाएँ चलायी जा रही है। यह योजनाएँ रोजगार, कृषि और स्वास्थ्य पर आधारित है। इन योजनाओं का गठन वर्तमान समाज में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाने हेतु किया गया है। इनमें मुख्य योजनाएँ मनरेगा, सर्वशिक्षा अभियान, जननी सुरक्षा योजना आदि है।

महिला एवं बाल विकास कल्याण मंत्रालय और भारत सरकार द्वारा भारतीय महिलाओं को सशक्तिकरण हेतु कई योजनाएँ चलायी जा रही है, जैसे – बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओं, महिला हेल्पलाइन, उज्जवला योजना, महिला शक्ति केन्द्र, पंचायती राज योजनाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण आदि।

विभिन्न समय पर विभिन्न सरकारों द्वारा महिला सशक्तिकरण हेतु कई योजनायें समय–समय पर प्रारम्भ की जाती रही है। भारत एक लोकतांत्रिक गणराज्य है और यहाँ हर पाँच साल बाद चुनाव द्वारा सरकारें बदलती रही है। अलग–अलग सरकारों द्वारा महिला सशक्तिकरण के लिये उनकी पार्टी की नीति के अनुरूप और बजट की सीमाओं को देखने हुए किये गये प्रावधानों में बदलाव होते रहे है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नारी सशक्तिकरण

अर्चना कुन्तल
शोधच्छात्रा
संस्कृत विभाग,दिल्ली विश्वविद्यालय,दिल्ली

प्राचीन काल से ही भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति में नारी का महत्वपूर्ण स्थान ही रहा है। नारी अपनी सृजनशीलता और कलात्मक प्रवृत्तियों से नर की सृष्टि को पूर्णता प्रदान करती आ रही है।
नारी शब्द नृ धातु अथवा नर शब्द से बना है-नृ+अच् +ङीन = नारी। महाभाष्य में पतंजलि ने कहा है- नृधर्म्यान नारी,नरस्यापि नारी (महा.४.४.९)।

इसी नारी शब्द के लिये 'स्त्री' शब्द जितना अधिक व्यापक है उतना ही अधिक प्रचिलित भी है। वैदिक काल में प्रसिद्धि पा चुका यह स्त्री शब्द आज भी भारत की लगभग सभी भाषाओं में अपना स्वरूप किसी न किसी रूप में बनाये हुए है। स्त्री शब्द **स्त्यै शब्दसंघातयोः** धातु पूर्वक इट् एवं ङीप् प्रत्यय से सिद्ध होता है (स्त्यै√+ इट्+ ङीप्=स्त्री)।
आचार्य पाणिनि के मत में **स्त्यै शब्दसंघातयोः** इस धातु के अनुसार स्त्री शब्द का अर्थ शब्द करना एवं इकट्ठा करना स्पष्ट होता है जबकि,
आचार्य **यास्क** के मत में **स्त्रियः स्त्यायन्ते अपत्रपणकर्मणः (निरुक्त3/21/2)** अर्थात् स्त्री का स्त्रीत्व उसके लज्जाशील होने में ही है ऐसा अर्थ किया है,एवं

आचार्य **दुर्ग** ने भी **निरुक्त** की टीका में लिखा है**-लज्जार्थस्य लज्जन्ते अपि ताः** अर्थात् वे लजाती हैं इसलिये स्त्री हैं ।

भाष्यकार के मत में **" गुणानां स्त्यानं स्त्री"** अर्थात् शब्द स्पर्श रुप रस एवं गन्ध इन सबकी खान है स्त्री।।।27।।

स्त्री,अबला,रमणी,प्रमदा,तरुणी,वामा,सुन्दरी,ललना,दारा,जननी

माता,दुहिता,कन्या,बाला,सुता,वधू,शक्ति,देवी इत्यादि शब्द नारी शब्द के ही वाची हैं,को उनके वैशिष्ट्य को सर्वदा द्योतित करते हैं।

ऋग्वेद विश्व के पुस्तकालय का ईश्वर प्रदत्त प्रथम एवं श्रेष्ठ रत्न है अतः वैदिक वाङ्मय में नारी की स्थिति को सम्यक एवं इदम् इत्थं रूप में जानने के लिये प्रथमतया उसी पवित्र ग्रन्थ का अध्ययन अत्यावश्यक है उसी के अनुशीलन के साक्ष्यों के आधार पर तत्कालीन नारी की स्थिति का परिचय सही रूप में प्राप्त किया जा सकता है। प्राचीन काल से ही भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति में नारी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। नारी अपनी सृजनशीलता और कलात्मक प्रवृत्तियों से नर की सृष्टि को पूर्णता प्रदान करती आ रही है।
वेदों में वर्णित समाज में स्त्री पुरुष में किसी भी प्रकार के विभेद का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। अनेक वैदिक मन्त्रों से वेदों में भावनात्मक दृष्टि से भी नारी का समान रूप से आदर का भाव दृष्टिगोचर होता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विश्वशान्तौ संस्कृतस्य अवदानम्

मनस्येकः यक्षप्रश्नः मुहुर्मुहुरुत्पद्यते यत् मनुष्यः जीवनपर्यन्तं किं प्राप्तुं प्रयतते?अस्य प्रश्नस्योत्तरे केचिद् वक्ष्यन्ति धनम्।केचित् वक्ष्यन्ति सुखम्।केचित् वक्ष्यन्ति ऐश्वर्यम्। केचिच्च वक्ष्यन्ति मोक्षमिति।किन्तु प्रश्नस्यास्य सर्वसमीचीनमुत्तरं स्यात्-शान्तिमिति।यामेकां विना इमे समस्ताःतृणलवप्रायाः।

शान्तिमूलकता कस्यापि प्राणिनः समाजस्य,राष्ट्रस्य वा प्रोन्नतेः विकासस्य चाधारस्तम्भः भवति। विश्व-शान्तेः तात्पर्यमस्ति यत् विश्वस्य सर्वे देशाः सत्य-अहिंसा-सौहार्द-भ्रातृभावसदृशैरुत्तमैर्नैतिकादर्शैःसह परस्परं प्रेरकाःपोषकाः पथप्रदर्शकाश्च स्युः।

यदि संस्कृतसाहित्यस्य सूक्ष्मावलोकनं कुर्मः तर्हि स्पष्टीभवति यत् प्रकृत्यैव शान्तिमूलकभाषेयम्। संस्कृतमिति नाम्नैव विशुद्धं भवत्यन्तःकरणम्।मनुष्यः यादृशं साहित्यं पठति शनैः शनैः तस्य विचाराः अपि तादृशाः एव जायन्ते। संस्कृतभाषा शान्ति-सत्य-अहिंसा-अस्तेय-प्रेम-सदाचार-दान-दया दाक्षिण्यादीनां धर्माणां सततप्रवाहशीला स्रोतस्विनीव पवते सर्वेषां चेतांसि।संस्कृतं न केवलं भाषा अपितु ज्ञाननिधिर्वर्तते। संस्कृतभाषा संसारस्य सर्वासु भाषासु प्राचीनतमा तथा च संसारस्य प्रायः सर्वासां भाषाणां जननी वर्तते।

वेदाः न केवलं भारतस्य अपितु संपूर्णविश्वस्य प्राचीनतमाः ग्रन्थाः विद्यन्ते।

"वेदोऽखिलो धर्ममूलम्"

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"ज्योतिर्विज्ञाने विश्वदर्शनम्"

डॉ. विनोद कुमार शर्मा

सहाचार्यो ज्योतिषविभागाध्यक्षश्च, जगद्गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः, जयपुरम्

ज्योतिश्शास्त्रं कस्यापि क्षेत्रविशेषस्य समुदायविशेषस्य देशविशेषस्य ज्ञातिविशेषस्य वा नास्त्यपितु निखिलविश्वस्य विश्वेतरस्य ब्रह्माण्डस्यैव च प्रकाशशास्त्रमस्ति। जगन्नियन्तुर्जगद्रचनावसरे पप्रथमतयैव शास्त्रमिदमवतरितम् ततश्चाग्रे दिग्देशकालानुसारेणेतस्य भूमण्डलस्य विश्वस्याखिलस्य च रचनाभवदिति। ज्योतिश्शास्त्रस्य विश्वोपकारपरकचिन्तनमेवास्माकमत्र प्रतिपाद्यमिति क्रमशो बिन्दुशः प्रतिपाद्यते।

1. त्रिस्कन्धेषु निखिलब्रह्माण्डविषयप्रतिपादनम्।
2. भूपिण्डातिरिक्तलोकानामपि व्यवस्थितिर्ज्यौतिश्शास्त्रे प्रतिपादितास्ति।
3. सकलचराचरजगति पिण्डब्रह्माण्डयोर्मध्ये परस्परमन्तःसम्बन्धो वर्तते।
4. ज्योतिश्शास्त्रे विश्वस्याखिलस्यैव कल्याणकामना समाहितास्ति।
5. ज्ञाताज्ञातज्ञातव्याखिलविज्ञानराशीनामत्र ज्योतिर्विज्ञाने समाहारो विद्यते।
6. समेऽपि देशज्ञातिसमुदायलिङ्गक्षेत्राँचलीयजना ज्योतिर्ज्ञानाधिकारिणो भवन्ति, नात्र भेदावकाशः।
7. विश्वस्याखिलस्याखिला एव विषया ज्योतिश्शास्त्रे प्रतिपादिताः सन्ति, यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।

उपसंहृतिः –

ज्योतिश्शास्त्रस्य अष्टादशाचार्याः समग्रे हि विश्वे व्यापृता आसन्, अनेन ज्योतिषस्य वैश्विकव्यापृतिरपि मुखरीभवति। मिश्रपिरामिड्-रावणसंहिता-यवनज्यौतिषम्-जैनज्यौतिषम्-नास्त्रेदमस्भविष्यवाण्यः-विश्वेऽखिले सक्रियज्योतिर्वेधशालाप्रभृतयो विषया ज्योतिश्शास्त्रस्य वैश्विकं स्वरूपमेव सहजतया प्रकाशयन्ति। इतोऽपि NASA, ISRO वैज्ञानिकानां महदन्तरिक्षानुसन्धानस्य मुख्याधारभूतं ज्योतिश्शास्त्रमेवास्तीति तत्रत्यपाठ्यक्रमदर्शनादस्माकं नयनकनीनिकायामवतरत्येवेति शमित्योम् ।।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वैयाकरणशास्त्रे कृत्प्रत्ययानां महत्त्वम्

प्रस्तावना –

इदमन्धतमः कृत्स्नं जायेत् भुवनत्रयम्।
यदि शब्दात्मकं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।।

अस्य च शब्दातत्त्वस्य सम्यग्ज्ञानं प्रयोगश्च व्याकरणं विना न सम्भवति।

शिक्षा व्याकरणं छन्दः निरुक्तं ज्योतिषं तथा।
कल्पष्टोति षडङ्गानि वेदस्याहुर्मनीषिणः।।

द्विजैः वेदाध्ययनार्थं षडङ्गान्यध्येतव्यानि। तदुक्तं महाभाष्ये – ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयष्टा। षडङ्गेषु प्रधानं व्याकरणशास्त्रमेव। तदुक्तं पाणिनीय शिक्षायाम् – मुखं व्याकरणं स्मृतम्।

व्याकरणस्याविर्भावः

व्याक्रियन्ते शब्दा अनेन व्युतपत्त्या वि, आङ् इति द्वाभ्यामुपसर्गाभ्यां कृञ् धातोः "करणाधिकरणयोष्टा" (३.३.११७) इति सूत्रेण करणल्युट्प्रत्यये व्याकरणमिति रूपं सिद्ध्यति। शब्दसाधुत्वविवेचकशास्त्रमित्यर्थः। अस्य च व्याकरणस्योत्पत्तिः कदाऽभवदित्यत्र निश्चितमुत्तरं नैवोपलभ्यते। परं वैदिकपदपाठानां रचनात्पूर्वमेव व्याकरणस्य स्थितिरवलोक्यते। भगवान् पतञ्जलिर्व्याकरणं "शब्दानुशासनम्" इति व्यवहरति, "अथ शब्दानुशासनम् केषां शब्दानाम् लौकिकानां वैदिकानाञ्च" इति

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

महाभाष्ये[१] कथनात्। एतच्छब्दशास्त्रमधिकृत्य व्याकरणमिति नाम वहुत्र प्रयुक्तं दृश्यते। तद्यथा रामायणे –

नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन वहुधा श्रुतम्।

वहु व्याहरतानेन न किञ्चिदपभाषितम्।। इति।[२]

अनेन ज्ञायते यत् - त्रेतायुगेऽपि व्याकरणस्य स्थितिरासीदिति। महाभारतेऽपि

सर्वार्थानां व्याकरणाद्वैयाकरण उच्यते।

तन्मुलतो व्याकरणं व्याकरोतीति तत्तथा।। इति।[३]

एवं वायुपुराणेऽपि शव्दशास्त्रविषये कश्चन श्लोक उपलभ्यते। यथा –

तत्राभिमानी भगवान्वायुष्टातिक्रियात्मकः।

वातारणिः समाख्यातः शव्दशास्त्रविशारदः।। इति। [४]

व्याकरणस्य पठनपाठनपद्धतिः वहोः कालात्पूर्वमेवावर्ततेति भगवान्पतञ्जलिरंप्याह – "पुराकल्पे एतदासीत्, संस्कारोत्तरं व्राह्मणा व्याकरणं स्माधीयते"[५] इति। व्याकरणशव्दः यस्माद्धातोर्निष्पद्यते तद्धातोः प्रयोगः यजुर्वेदे दरीदृश्यते। यथा – दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्सत्यानृते प्रजापतिः।[६] इति।

अनुसन्धाता
हनुमान भाखरः
व्याकरणाचार्यः
Email-id- hanumanbhakhar51369@gmail.com
Contact no. 8104665667
ज.रा.रा.संस्कृतविश्वविद्यालय जयपुर,राजस्थान

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शोधच्छात्र– जितेन्द्र कुमार शर्मा
शिक्षाशास्त्र विभाग–ज.रा.रा.सं.वि.वि. जयपुर
मो.– 6376194868, 9694546010
ई–मेल– jitu.vedic@gmail.com

।। वर्तमान सन्दर्भे संस्कृतशिक्षणे ई. नवाचारस्य योगदानम्।।

यस्मिन् समये विश्वस्य अन्येषु देशेषु जनाः साङ्केतिक याः आङ्गल भाषया कार्य कुर्वन्ति स्म तदा भारते संस्कृत भाषया ब्रह्म ज्ञानस्य प्रसारः क्रियते स्म। प्राचीनकाले संस्कृतम् अव्याकृतम् आसीत् अर्थात् प्रकृति प्रत्ययादिवि भागराहित्येन तस्योपदेशम् 'प्रतिपाठ पाठ विधिना' क्रियते स्म। यत् आधुनिक वैज्ञानिक प्रौद्यागिकीयुगे वयं संस्कृत शिक्षणं रोचकम्, आकर्षकं, सुग्राहाञ्च कथं कर्तुं शक्तुम्? अत वयं नैक वर्षतः पाठयोजनानिर्माणाय हरबार्टपञ्चपदद्यत्याः अनुकरणं कुर्मः। शनैःशनैः मूल्यांकनविधिं प्रति उन्मुखाः स्मः। संस्कृत भाषा रटनैव अधिगम्यते तथा भाव्यध्यापकानाम् इयं समस्या ये छात्राः संस्कृतं नाधिगच्छन्ति, ते पठितुमेव नेच्छन्ति, अस्य समाधानाय वयं कतिपय नबिनतमोपागतानां प्रयोगं संस्कृत शिक्षणे कर्तुं शक्तुमः।

एक विशंतिशताब्धां प्रविशदिभरस्माभिः सूचनायाः सञ्चारस्य च क्षेत्रे अद्वितीयाः उपलब्धयः प्राप्ताः। अद्य अधिकाधिक सूचनाः कस्यापि राष्ट्रस्य विकासस्य मेरूदण्डं सञ्जाताः। उपग्रहाः अन्यग्रहा इव केवलम् आकाशे विचरणमेव न कुर्वन्ति, अपितु सूचनानाम् आदानप्रदानयोः अपि सहायकाः। अनेन सहैव वयं "कर्गदरहित समाजम्" प्रति गच्छाम्। एतादृशस्थितौ अस्माभिः संस्कृतशिक्षणपरम्परासु परिवर्तनं कर्तव्यं तथा नवीनतम दृश्यश्रव्य साधनानाम् अधिकाधिकोपयोगं कृत्वा शिक्षणं रूचिकरं, आकर्षकं, सुग्राहाञ्च कर्तव्यम्।

अस्याः प्राविधिक्याः प्रयोगः संस्कृत शिक्षणस्य क्षेत्रीयसीमायाः बर्हिभूतविधार्थिनः शिक्षकान् शैक्षिक संस्थाश्च परस्परं संयोजयितुं भवति।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

गीजूभाई बधेका के शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक विचारों की वर्तमान विद्यालय शिक्षा में अनुप्रयोग

शोधार्थी– रामकुमार जाट
शिक्षाशास्त्र विभाग–ज.रा.रा.सं.वि.वि. जयपुर

प्रस्तावना–

शिक्षा बालक के लिए होती है न कि बालक शिक्षा के लिए। कहने का तात्पर्य यह है कि बालक को केन्द्र बिन्दु मानकर ही शिक्षा की समग्र व्यवस्था विकसित की जानी चाहिए। बालक की वैयक्तिक विशेषताओं, उसकी अर्न्तनिहित क्षमताओं को पहचानते हुए उनका सर्वोत्तम विकास करना ही शिक्षा का महती ध्येय है। आत्म परिपूर्णता के शिखर की ओर अग्रसर व्यक्ति ही शिक्षा के साथ समाज को भी नयी ऊँचाईयाँ प्रदान करने में सक्षम होते हैं।

जॉन डी. वी. के अनुसार – यही शिक्षा है। इससे असहमत होने का कोई युक्तिसंगत कारण भी नहीं है। परिवेष मे स्थिति अनेकानेक साधन वस्तुतः शिक्षा के ही साधन है चूँकि वे किसी न किसी रूप में मानव विकास में अपनी विशिष्ट भूमिका रखते हैं। व्यापक अर्थ में शिक्षा जीवन के समस्त अनुभवों का योग तथा जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। औपचारिक अथवा स्कूली शिक्षा अनौपचारिक शिक्षा से प्रधानतयाः अपने वातावरण के विषिष्ट नियंत्रित एवं सुनियोजित स्वरूप के कारण ही भिन्न होती है। शिक्षा के सर्वाधिक महत्वपूर्ण अनौपचारिक साधन परिवार से प्राथमिक विद्यालयों का वातावरण जितना अधिक भिन्नतायुक्त होता है, बालक को उतना ही भयप्रद लगता है। अतः विद्यालय का वातावरण घर जैसा या उससे भी श्रेष्ठतर व आकर्षक होना चाहिए।

सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्यः–

गिजूभाई का सारा जीवन शिक्षा के क्षेत्र में नये–नये प्रयोग करते हुए व्यतीत हुआ। गिजूभाई ने मॉण्टेसरी शिक्षा पद्धति को पूर्णतः आत्मसात करने के बाद उसके सिद्धान्तो को भारतीय परिवेश तथा संदर्भो में अधिकाधिक प्रभावी बनाया। भावनगर की दक्षिण मूर्ति संस्था गिजूभाई की शैक्षणिक प्रयोग भूमि है। जहाँ 1916 से 1936 के मध्य उन्होंने बाल केन्द्रित शिक्षा के विभिन्न पहलूओं पर चिन्तन, मनन एवं प्रयोग किये।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"परम्परागताधुनिकविद्यालयेषु संस्कृतशिक्षकाणाम् आत्मसम्प्रत्ययस्य वृत्तिसन्तृप्तेश्च अध्ययनम्"

डॉ. माताप्रसाद शर्मा
(विभागाध्यक्ष)
शिक्षाशास्त्र विभाग, जरारासंवि, जयपुर

रोहिताश्व यादव
(शोधार्थी) शिक्षाशास्त्र

शिक्षा सभ्य, सुसंस्कृत एवं प्रगतिशील मानवसमाजाय एका आधारशिलायाः निर्माणं करोति। शिक्षा एव एकमात्र साधनमस्ति या पशवः मानवश्च मध्ये अन्तरं करोति। शिक्षा एवं ज्योतिपुंजमस्ति या मानवमस्तिष्कस्य अंहकारात्म अपा कृत्वा ज्ञान प्रकाशम् आलोकयति। यतो हि विष्णु पुराणेऽपि कथ्यते "सा विद्या या विमुक्तये"। अस्यायम् अभिप्रायो यत् एकः वृषभ उच्चैः स्वरेण किमपि भाषमाणः विलक्षणस्वरूपवानोऽस्ति। अस्य वृषभस्य चत्वारि श्रृङ्गा त्रयो पादाः द्वे शीर्षे सप्त हस्ताः च सन्ति। अयं त्रिधा त्रिषु स्थानेषु बद्ध अयं भाषते यत् महादेवः मर्त्यान् आविर्भूतः। भाष्यकारः पतञ्जलिः व्याकरणपरम्परानुसारं व्याख्यां कृतवान्। उभावपि आदर्शभूतौ।

(क) शिक्षणवृत्तिः (Teaching Profession) : "मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्य देवो भव" इत्युपदेशः वर्तते। आचार्यः देवतुल्यः भवति। आचार्यः सर्वगुणभूयिष्ठः स्यात्। तथा च वेदवाक्यमस्ति "देवमिव आचार्यम् उपासीत्" इति। शिक्षणं नाम एका पवित्रवृत्तिः। यद्यपि समाजे अन्याः वृत्तयः सन्ति, तेषां वृत्तिनां लक्ष्यं लाभप्राप्तिः, तन्नाम धनार्जनम्। अन्यासु वृत्तिषु दया, अनुकम्पा इत्यादि मानवीयमूल्यानां कृते स्थानं प्रायः द्रष्टुं न शक्यते। तदेव शिक्षकाणां कृते "गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णुः, गुरुर्देवो महेश्वरः" इत्युल्लेखो विद्यते। महाकविकालिदासेनापि मालविकाग्निमित्रे उक्तम् –

> श्लिष्टा क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था सङ्क्रान्तिरन्यस्य विषयुक्ता।
> यस्योभयं साधु स शिक्षकाणां धुरि प्रतिष्ठापयितव्य एव।। (1/16)

(ख) वृत्तिसन्तृप्तिः (Job Satisfaction) : वृत्तिः पदस्यार्थः व्यवसायः। सन्तृप्तिः पदस्यार्थः सन्तुष्टिः। अतः वृत्त्या सन्तृप्तिः वृत्तिसन्तृप्तिः इत्यस्य भावः व्यवसायः सन्तुष्टिः इति। आरम्भकालादेव जीवनयापनार्थं बह्व्यः वृत्तयः समाजे विद्यन्ते। जीवाः स्वस्वस्वभावानुसारेण कर्मानुसारेण च वृत्तिषु क्रियाशीलाः भवन्ति। स्वस्ववृत्तिषु सफलतायै सन्तोषः अपेक्षितः। यतः शिक्षणे क्षमता वृत्तिं प्रति अनुकूलाम् अभिवृत्तिमपेक्षते। अभिवृत्तिः तदेव अनूकुला परिवर्तते यदा कश्चित् स्वाश्रितवृत्तौ सन्तुष्टिमनुभवति।

(ग) आत्मप्रत्ययः (Self Concept) : आत्मसम्प्रत्ययस्य तात्पर्यमनुक्रियाणां व्याख्यया सह अस्ति। मानवस्य अनुभव–चिन्तनाभियोग्यता–क्षमता–चारित्रिकगुणैः सम्मिश्रित–प्रत्यक्षीकरणद्वारा प्राप्त प्रदत्तानां प्रस्तुतीकरणेन एवं संगठनेन सह अस्ति। तदैव जने प्रत्ययानां निर्माणं भवति। 1857 तमे ख्रिस्ताब्दे बिनेनामाख्यमनोवैज्ञानिकेनोक्तं यत् "सम्प्रत्ययः अनुक्रियाणां सा व्याख्या वर्तते। यया प्रत्यक्षीकृताऽनुभवैः प्राप्तप्रदत्तानां व्याख्या संगठनञ्च भवति"। सामान्यतया अवबोध्यते यत् असमानतासु समानतानामन्वेषणं विधाय, तेभ्यः एकपृथक् संज्ञा प्रदानमेव "आत्मसम्प्रत्यय" इति नाम्ना सम्बोध्यते। अस्माभिः "सम्प्रत्ययः" योजनासु मानसिकश्रेणिष्वपि गणयितुं शक्यते।

संदर्भ :–

1. विष्णु पुराण
2. पतञ्जलि महाभाष्य
3. मालविकाग्निमित्र – महाकविकालिदास
4. शिक्षामनोविज्ञान – पी.डी. पाठक

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृतशास्त्र शिक्षणे नवाचाराः

(शोधसारः)

युगानुरूपं कालानुरूपं च शिक्षणे बहवः प्रयोगाः क्रिता क्रियन्ते च, ते एव प्रयोगाः नवाचाराः कथ्यन्ते । यद्यपि विज्ञानगणितादि शिक्षणे विभिन्नाः आचाराः नवनवाः अस्माभि विलोकयन्ते, तथापि ते सर्वे नवाचाराः संस्कृतशिक्षणे प्रयोगयोग्या न भवतुमर्हति । तत्राऽपि विशेषतः शास्त्राशिक्षणे । अन्य शिक्षणाऽपेक्षया शास्त्राशिक्षणस्य इदं अतिव वैशिष्ट्यं यत् अत्र आत्मद्वारा आत्मशिक्षते । केवलेन शब्देन, केवलेन उच्चारणेन, केवलेन संकेतेन, केवलेन चित्रादिप्रदर्शनेन च संस्कृत शास्त्रास्य तत्त्व संक्रातिः असंभवाः । अत्रा शिष्य भावना गुरुभावनाः भवति । सैव भावना एकस्यानन्तरम् अपरत्रनेतुं माध्यमोजायते । यत्रा च भावना हेतु, तत्रा नवाचाराणाम् अवसराः न्यूनैव अस्ति इति विभावयामः । प्राचीनकाले प्रश्नोत्तर माध्यमेन शास्त्रशिक्षणं जायते स्मः । तादृशस्यशिक्षणस्यकृते उपनिषद् व्याकरणमहाभाष्यदिकश्च उत्कृष्टं उदाहरणम् तस्या प्रश्नोत्तरशैल्या आचरणम् इदानीमऽपि केश्चित नूतनेन परिष्कारित सह यदि भवतिः तर्हि मन्यै शास्त्राशिक्षणं नूनभावोत्पादकं स्यात् । एतद्तिरिच्य आधुनिकानां वैज्ञानिकानां संसाधनानाम् अपि उपयोगाः कदाचित् कर्तुं शक्यते । किन्तु एतादृशाः उपयोगः शास्त्रास्य अनुशीलनाय अधिकः उपयोगी, न तु शास्त्रशिक्षणाय उपयोगी इति मे मति ।

डॉ. सुभाष चन्द्र मीणा
सहायकाचार्यः (व्याकरणविभागः)
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई – 400077

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत साहित्ये कृषि विज्ञानम्

गुड्डी कुमारी शर्मा
शोधच्छात्रा (साहित्य शास्त्रम्)
जगद्गुरू - रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालयः मदाऊ, जयपुर राजस्थान
Email : mahendarsharma000@gmail.com

शोध सारांशः

प्राचीन कालात् कृषिः भारतीयानां प्रमुखः व्यवसायं अस्ति। भारतवर्ष वैदिकालेन कृषिप्रधानः देशः वर्तते। भारतीय आर्यानाम् आर्थिकसम्पन्नतायां कृषेः महत्वपूर्ण भूमिका अस्ति भारतीय ग्रन्थेषु कृषेः महत्ता प्रमुखतया वेदेषु पुराणेषु, रामायणे, महाभारते भासस्य रचनासु, कलिदासस्य रचनासु तथा च आयुर्वेदकग्रन्थेषु एवमेवान्यषु उपलब्धा अस्ति। प्रस्तुत लेखे संस्कृत साहित्ये वर्णितस्य कृषि विज्ञानस्य वर्णनम् अस्ति। आधुनिक वैज्ञानिक पद्धत्या कृषि कार्य क्रियते परं तत्र हानिः भवति। अतो परम्परागतकृषि पद्धतिं पुनरेक बारं स्थापयामः। किञ्च आधुनिक पद्धत्या कृषिकार्यस्य प्राच्य कृषिविज्ञानदिशापर्या भारतवर्ष वैदिक कालाद् एवं कृषिः प्रधानं देशः अस्ति। अस्मिन् काले लेखकं करिष्यामः। 'कृष्टि' चर्षणि इति शब्दस्य प्रयोगं कृषकाय न अपितु मानवमात्राय अकरोत्। इदं निश्चितरूपेण कृषेः प्रधानतायाः द्योतकः अस्ति।

ऋग्वेदस्य वैज्ञानिक तर्कान् दृष्टवा इदं स्पष्टं भवति यत् कृषिव्यवसाय अत्युन्नत अवस्थायाम् आसीत्। कृषिः जीवनयापनस्य साधनात् अतिरिक्तव्यवसायस्य कृते अपि महत्त्वपूर्ण अंगम् आसीत्। कृषि संरक्षणेन सह भूमिसंरक्षणमपि कर्तव्यमिति यतोहिइयं रत्नगर्भा वसुधा वसुन्धरा वा कथ्यते।

अस्माकं वैदिकसंहिता जगतः प्राचीनतम रचना अस्ति। वेदेषु वर्णितः अनेको साक्ष्याः वार्ता प्रमाणितं कुर्वन्ति यत् भारतीय आर्यानां संस्कृतिः वेद च प्राचीनतमः अस्ति। अनेन कारणेन वैदिककालीन कृषिः पशुपालनं गृह विज्ञानं गव्य तकनीकि चापि निर्विवादरूपेण एवं प्राचीनः।

कृषि परम्परा पौराणिककाले अपि आसीत। अस्मिन् कार्ये वैश्यानां विशेषसमुदाय अस्ति। अयं समुदायस्य ''कृषक'' कथ्यते। हरिवंशपुराणे अपि कथ्यते यत् कृषि आजीविकायाः प्रधानं साधनमे एव आसीत्। गरूडपुराणे कथ्यते- ''सुभिक्षे कृषिनाशः स्याद् वयवहारो विनश्यति''। पुराणेषु पादपस्य विकासाय खादरासायनिकद्रव्यानां प्रयोगस्य चर्चा अस्ति।

रामायणेयुगे कृषककवर्गः आर्थिकरूपेण सक्रिय आसीत्। अस्मिन् युगे कृषि विकासेन सह एकस्य नवीनशास्त्रस्य उद्भवो भवति। तस्य वार्ता शब्दस्य प्रयोग वैश्यानां त्रयः प्रमुखकार्येभ्यः कृषिगोपालनवाणिज्य च अभवत्। रामायणयुगे कृष् धातोः प्रयोगः क्षेत्रस्य लांगलहस्तस्य कृषकस्य कृते अकरोत्। रामायणयुगे क्षेत्रशब्दस्य प्रयोगः जातः। भगवान् कृषेः महत्त्वं स्वीकरोति। तथा च कृषिः राष्ट्रीयस्य सम्पत्तिः अस्ति।

महाभारतयुगे कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यान् वार्ता कथ्यते। महाभारतयुगे वार्ता एव लोकजीवनस्य आधारं मन्यते। देशस्य आर्थिकव्यवस्थां सुदृढ़ रूपेण प्रचालनाय वार्तायाः सुदृढ़ी आवश्यकता भवति। अस्मै कार्याय नृपेण कृषिगोरक्ष्ययोः विस्तारे सहयोगः कर्त्तव्यः। अर्थात् राजकीय प्रोत्साहनेन कृषि अपि अमिलत्।

कुवलयमाला इति रचनायां ज्ञातं भवति यत् ग्रामाणां प्रसिद्धं कार्य कृषिः आसीत्। यः मुख्यरूपेण वर्षायां निर्भरं आसीत्।

तिरूकुरल नामक रचनायां कृषिं मुख्य व्यवसायः कथ्यते। अस्मिन् ग्रन्थे कथ्यते यत् याः जनाः कृषेः कार्य दूरं भूत्वा अन्यं कार्य स्वीकुर्वन्ति, ते किं चिन्तयति यत् यदि सर्वे मानवाः कृषेः विमुखां भवन्ति तर्हि अन्नस्य उत्पादनं कुत्र भविष्यति।
कालिदास्य साहित्यानां गहनम् अध्ययनेन ज्ञातं भवति यत् वनस्पतिनां विभाजनं विविधवर्गेषु अकरोत्।
यदि कृषिः न भवति तदा अस्माकं जीवनम् अस्यां पृथ्व्याम् असम्भवम्। कृषि वनस्पतियोः अन्योन्याश्रयसम्बन्धो भवति। तर्हि संस्कृत वाड.मये कृषिंकार्यस्यविशेषमहत्वं वर्तते। अस्य देशस्य कृषि विकासं सर्वोपरि भवति तेन देशस्य जनाः जीवनं सुखं समृद्धिं च प्राप्तनुंवन्ति।

इत्थं कृषि विज्ञानम् अखिले समाजे सर्वत्रे प्रकाशनीयं वर्तते, येन अस्य समुज्जवलं रूपं भवेत् इति।

सर्वोपयोगी
अस्तीति
शोधालेखेन निमर्यायक्ष्यामि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"श्रीमद्भगवतगीता में अध्यात्म विज्ञान"

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में अध्यात्म का अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र है ।अध्यात्म एक रोचक शब्द है । सामान्तया भक्ति या ईश्वर विषयक चर्चा का अध्यात्म कहा जाता है । श्रीमद्भग्वत्गीता संस्कृत वाङ्मय का अत्यन्त लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रन्थ है । इस चैतन्य ग्रन्थ कि महानता यह है कि इसमें धर्म, नीति और दर्शन का समन्वय है । 700 श्लोकों में निबद्ध 18 अध्यायों में विभक्त यह ग्रन्थ पूर्णत्तया वेदों पुराणों उपनिषदों के ज्ञान का सारांश है । इसका प्रत्येक श्लोक गहन दार्शनिकता को धारण किए हुए है । गीता भगवन श्री कृष्ण के द्वारा गाया हुआ गीत है । गीता आध्यात्मिक ज्ञान की एक अमूल्य निधि है । उपनिषदों तथा षट्दर्शनों के सार का स्वरूप है । षट्दर्शनों का सार होते हुए भी गीता दर्शन कि अपनी विशेषता है । षट्दर्शनों का दृष्टिकोण केवल आध्यात्मिकता तक ही सीमित रहा परन्तु श्रीमद्भग्वत्गीता में आध्यात्मिकता को कर्म ज्ञान और भक्ति में समाहित कर दिया । श्रीमद्भग्वत्गीता कि रचना ऐसी परिस्थितियों में हुई जब समाज में धर्म एवम् नैतिकता से परे अराजकता एवम् दानवता का साम्राज्य था । गीता केवल हिन्दू धर्म का ही ग्रन्थ नहीं अपितु वह विश्व धर्म का ग्रन्थ है । गीता में ऐसे परमात्मा का परम तत्त्व का वर्णन है जो सभी धर्मों सम्प्रदायों को मान्य है । गीता में सर्वधर्म समन्वय का अपूर्व रूप है , सभी धर्म सम्प्रदायों के प्रति आदर भाव है इसी कारण गीता का समस्त विश्व में समान रूप से आदर है ।श्रीमद्भग्वत्गीता के 18 अध्यायों को तीन भागो में विभक्त किया गया है ।प्रथम 6 अध्याय कर्म से सम्बंधित है ,मध्यम 6 अध्याय भक्ति से और अंतिम 6 अध्याय ज्ञान से सम्बंधित है भक्ति को अति रहस्य और सर्व दुर्लभ होने के कारण बीच में रखा गया है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ROLE OF ENGLISH TO PROMOTE SANSKRIT

सा. विद्या या नियुक्तये that's knowledge which liberates (us) Sanskrit is the language which contains the cultural heritage of India beginning with the Rig-veda through the classics till 19th century.

Sanskrit has descriptive crawas which is comprehensively dealt with all aspects of syntax, semantics philology and lexicography Sanskrit has works on practical subjects with ayurveda (medicine and surgery), yoga (Ha Tha (body-culturing) and Dhyana (mind culturing)

Nehru's support for Sanskrit- India built up a magnificent language, Sanskrit, and through this language and its art and architecture is sent its vibrant massage to for away countries. It produced the Upanishads, the Gita and the budha. Hardly any language is the world has probably played as vital part in the history of a race as sanskrit has. It was not only the vehicle of the highest thought and some of the finest literature but it became the uniting bond for India, even though there were political divisions. The Ramayana and Mahabharata were woven into the texture of millions of lives in every generations for a thousand years.

Though English contributed to the growth of political consciousness in India, only an Indian language could help create political unity. This language would have been Sanskrit. Sanskrit is also the "Great Unifying force " in India, knitting a vast subcontinent from Kashmir to Kanyakumari.

Thus, Sanskrit be taught as language in all schools and institutes of higher learning. State must ensure that institutes of higher learning produce good Sanskrit teachers and also ensure that all vacancies of Sanskrit teachers in schools are to be filled up immediately. At individual level, all parents should also ensue that their children learn Sanskrit, so that they can taste and appreciate the the genius and depth of India directly in their basic mother longue, without relying are corrupted interpretation of their own texts.

(Manishi Lalas)
Dy. Director
Raj. State Sanskrit Institute
of Education Research and
Training.(SSIERT)
Jaipur

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्राचीनसंस्कृतसाहित्ये मनोविज्ञानविमर्शः

डा. कम्भम्पाटि साम्बशिवमूर्तिः
सहाचार्यः, शिक्षाविभागः
जरारासंस्कृतविश्वविद्यालयः, जयपुरम्

मनसः व्युत्पत्त्यर्थः-

मन्यते अनेन, मनुते अनेन वा इत्यस्मिन्नर्थे मन ज्ञाने, मन अवबोधने वेति धातोः असुन् प्रत्यये कृते मनः इति शब्दः निष्पद्यते। प्रदीपज्वालासन्तानद्रुतिसन्तानरूपेणापरिणाममानमन्तःकरणद्रव्यं मननात्मकत्वान्मन इत्युच्यते।

मनसः लक्षणम् -

स्पर्शरहितत्वे सति क्रियावत्त्वं मनसो लक्षणम् । नैय्यायिकानाम्मते -सुखाद्युपलब्धिसाधनमिन्द्रियं मनः।. सङ्कल्पविकल्पात्मिकायां अन्तःकरणप्रवृत्तौ । तच्च प्रत्यात्मनियतत्वात् अनन्तं परमाणुरूपं नित्यञ्चेति। एकैकस्यात्मनः एकैकं मन इत्यात्मनानेकत्वान्मनसोऽनैकत्वम् । मनः - अनिरूप्यमिति, अदृश्यमिति च ज्ञानात्मकं द्विविधमिति मतिमतां सम्मतिः। मनसः पर्याचवाचकाः इमे पञ्चमवेदे महाभारते निरुपिताःयथा-

मनो महान् मतिर्ब्रह्मापूर्बुद्धिः ख्यातिर्हरीश्वरः ।
प्रज्ञा संविच्चितिश्चैव स्मृतिश्च परिपठ्यते ।।
पर्यायवाचकाः शब्दाः मानसः परिकीर्तिताः ।।

मनसो नव गुणाः -

धैर्योपपतिवर्व्यक्तिश्च विसर्गः कल्पना क्षमा ।
सदसच्चाशुता चैव मनसो नव वै गुणाः ।।

मनसो वैविध्यम् -

पञ्चभूतात्मधारकम् मन अध्यात्मिति, सैहकलापात्मकं मन अधिभूतमिति, चन्द्रात्मकं मन अधिदैवमिति मनः त्रिप्रकारकं विद्यते । मनसो मापनविधीनां विषये चास्माभिः पूर्वजैः सूक्तमस्ति तद्यथा -

जनानां हृदयं सद्यं सुव्यक्तं वचनेन वै ।
शिष्ये कलत्रे कन्यायां दौहित्रे बान्धवेषु च ।।
पुत्रे पौत्रे च वचसि प्रतापे यशसि श्रियाम् ।
बुद्धौ वारिणि विद्यायां ज्ञायते हृदयं नृणाम् ।।

मुखविकाराभिनयाभ्यां प्रतिध्वानेन वा मनःस्थमप्यर्थमभ्यूहन्ति विचक्षणआ इति सोमदेवस्य नीतिसूत्रमपि मनसः मापनविधिं ज्ञापयति। विदुरनीतावपि बहुधा मनसः, तज्ज्ञानस्य, तद्विज्ञानस्य च विचारो विहितो यथा -

नित्योद्विग्नमिदं सर्वं नित्योद्विग्नमिदं मनः।
यतत्पदमनुद्विग्नं तन्मे वद महामते ।।

अस्मिन् शोधपत्रे मनः अभिलक्ष्य प्राचीनसाहित्ये विमृष्टाः नैकप्रकाराः विषयाः विस्तृतरूपेण निरूप्यन्ते।

** *

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय,
विचार, अभिव्यक्ति , विश्वास, धर्म
और उपासना की स्वतंत्रता,
प्रतिष्ठा और अवसर की समता
प्राप्त कराने के लिए,
तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और
राष्ट्र की एकता और अखंडता
सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत दो हजार छह विक्रमी) को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

जगद्गुरुरामानन्दाचार्य-
राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः

विश्वविद्यालय परिसर में विभिन्न शास्त्रीय विषयों का अध्यापन पारम्परिक पद्धति के साथ ही आधुनिक शिक्षण-अधिगम संसाधनों से करवाया जाता है। इससे विद्यार्थी में प्राचीन व नवीन पहुंच एवं समावेशिता का स्तर बढ़ता है। वेद, दर्शन, व्याकरण, ज्योतिष, साहित्य एवं योग विज्ञान जैसे शास्त्रीय विषयों के साथ ही हिन्दी, अंग्रेजी, कम्प्यूटर, राजनीति विज्ञान, इतिहास, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, लोकप्रशासन एवं पर्यावरण विज्ञान का अध्यापन विद्यार्थियों को करवाया जा रहा है। अनुसंधान एवं व्यावसायिक प्रक्रियाएं बढ़ाने की दिशा में विश्वविद्यालय सतत् कार्य कर रहा है।

पाठ्यक्रम एवं उपाधियां Curriculum & Degrees

1. शास्त्री (स्नातक) त्रिवर्षीय
2. आचार्य (स्नातकोत्तर) द्विवर्षीय
3. संयुक्ताचार्य (स्नातक + स्नातकोत्तर) पंचवर्षीय
4. शिक्षाशास्त्री (बी.एड.) द्विवर्षीय
5. इन्टीग्रेटेड शास्त्री-शिक्षाशास्त्री चतुर्वर्षीय
6. शिक्षाचार्य (एम.एड.) द्विवर्षीय
7. योगविज्ञान शास्त्री (बी.एससी./बी.ए.)
8. योगविज्ञान आचार्य (एम.एससी./एम.ए.)
9. विद्यानिधि (एम.फिल्.)
10. विद्यावारिधि (पीएच.डी.)
11. विद्यावाचस्पति (डी.लिट्.)
12. प्रातःकालीन पीजी डिप्लोमा योग (एकवर्षीय)
13. सर्टिफिकेट कोर्स योग (त्रैमासिक)
14. सायंकालीन डिप्लोमा ज्योतिष (एकवर्षीय)
15. सायंकालीन डिप्लोमा वास्तुशास्त्र (एकवर्षीय)
16. डिप्लोमा कर्मकाण्ड एवं पौरोहित्य (एकवर्षीय)
17. Post Graduate Diploma in Computer Applications (PGDCA) 1 Year

संस्कृत पढ़ें आगे बढ़ें

Learn Sanskrit, Move Ahead

Tel : 0141-2850551-75 • e-mail : jrrsu@yahoo.com • @JRRSU
website : www.jrrsanskrituniversity.ac.in

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection